मानवी

वर्ष 3 अंक 2

त्रैमासिक साहित्यिक ई पत्रिका

अप्रैल-जून 2023

मेरे पिता के हाथ
खुरदुरे थे रेगमाल की तरह

भाई के हाथ
खुरदुरे होते जा रहे हैं धीरे-धीरे...

एक दिन मेरा बेटा
प्रसन्नताओं से घिरा
खुरदुरे हाथों का मालिक होगा

काम से लौटकर जब–

उसके पिता
मेरा हाथ अपने खुरदुरे हाथों में लेते हैं

महसूस करती हूँ
इसी खुरदुरेपन में रिस रहा है मेरा जीवन
बड़े आराम से...।

– कविता सिंह

मानवी

प्रधान सम्पादक -कविता सिंह

सम्पादक -राजेश कुमार सिंह

****

परामर्शमण्डल -डॉ राधेश्याम तिवारी

****

आवरण -चित्र -तेजस सिंह

****

manvipatrika@gmail.com

http://www.manvipatrika.co.in/

****

संरक्षक

श्रीमती जानकी किशोरी देवी एवं

श्री राम चन्द्र सिंह

****

पता -कार्यकारी -बी -701 ,स्वाति फ्लोरेंस ,

निकट सोबो सेंटर ,साउथ बोपल ,अहमदाबाद

-380058

स्थायी - 274/x ,शक्ति णगर

कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

मोब -9833775798

मानवी पत्रिका में प्रकाशित लेख /काव्य आदि रचनकारों के अपने विचार है ,जिनसे प्रकाशक/ संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गोरखपुर रहेगा। रचना की मौलिकता का दायित्व रचनाकार का है

पत्रिका से जुड़े सभी पद अवैतनिक है।

पत्रिका आप सभी मित्रों से रचनात्मक सहयोग के अलावा अर्थ-सहयोग का भी निवेदन करती है, यह स्वैच्छिक है आप पेटिएम नं -9833775798 पर स्वेच्छा से यथासंभव धनराशि सहयोग के रुप में अंतरित कर सकते हैं।

वर्ष– 3 ,अंक– 2 (अप्रैल - जून 2023)

त्रैमासिक ई -पत्रिका

इस अंक में....

संपादक की कलम से -4/5

काव्य धरोहर -6

रे खाचित्र—बिनोद कुमार राज विद्रोही जी से साभार

लेख /आलेख /संस्मरण

7-शैलेन्द्र चौहान
11-मनोज जैन 'मधुर'
15-डॉ अवधेश कुमार अवध
17-गोवर्धन दास बिन्नाणी 'राजा बाबू'
19-सलिल सरोज
22-डॉ. कान्ति लाल यादव
25-रीना यादव
28-डॉ. स्मिता त्रिपाठी
56-विजय कुमार तिवारी
57-डॉ. संदीप शर्मा
59-क़ाज़ी वाजिद सिद्दीक़ी

हास्य व्यंग्य -

32-सतीश उपाध्याय
34-दिनेश गंगराड़े

कहानी -

36-डॉ लेखराज
41-दिवा शंकर सारस्वत 'प्रशांत'
43-सुनीता मिश्रा
45-श्यामल बिहारी महतो
49-राजेन्द्र परदेसी
53-गोरधन भेसानिया
अनुवादक: रजनीकान्त एस.शाह (गुजराती से अनूदित)
61-भगवती सक्सेना गौड़
64-रंजना किशोर

लघुकथा

14-दीपक कुमार
35-डा. मधु आंधीवाल
40-डोली शाह
42-सपना चन्द्रा
60-नीना सिन्हा
66-डा. रश्मि तिवारी
67-अर्चना श्रीवास्तव 'आहना'
68-सरोज बाला
69-राम मूरत 'राही'
70-सन्तोष सुपेकर

काव्य /हाइकु /ग़ज़ल

10-सुमन झा 'सुमन'
16-बी.एल.माली 'अशांत'
18-ताराचंद कुमावत
21-पिंकी सिंघल
27-गौरीशंकर वैश्य विनम्र
52-मनोज जैन "मधुर"
70-कमल पुरोहित अपरिचित
70-नवल किशोर शर्मा नवल
71-कनक किशोर
72-डॉ.उमेश चंद्र शुक्ल
73-सतीश "बब्बा"
73-कुलदीप सिंह भाटी
73-डॉ मंजु गुप्ता
73-कुमकुम कुमारी "काव्याकृति"
74-डॉ प्रेम लता चसवाल 'प्रेमपुष्प'
74-प्रीति शर्मा 'असीम'
75-नवीन माथुर पंचोली
76-अनुपमा कट्टेल
77-राजपाल सिंह गुलिया
77-प्रो(डॉ)शरद नारायण खरे
78-डॉ.सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी
78-डॉ रत्ना मानिक
79-डा केवलकृष्ण पाठक
79-कमला तामाङ
82-रेखा शाह आरबी
82-डॉ दलजीत कौर

पुस्तक समीक्षा -

80-ललित गर्ग

प्रतिक्रियाएं –

83- पाठकों की

कलचित्र-

84- तेजसी सिंह

कुछ मेरी भी....

हाल-फिलहाल सीबीएसई एवं कई राज्यों के माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के हाईस्कूल एवं इंटरमीडिएट परीक्षाओं के परिणाम घोषित हुए हैं। और जैसा की विगत कई वर्षों से हो रहा है ,हर बार की तरह इस बार भी लड़कियां फिर शीर्ष पर हैं। यही नहीं अभी कुछ दिनों पहले लोक सेवा आयोग के परिणाम में भी शीर्ष स्थान पर लड़कियों ने ही अपना प्रभुत्व स्थापित किया है। यह उन लोगों के लिए आंखें खोलने वाला है,जो लड़कियों को लड़कों से कमतर समझते हैं,यह उन मां बाप के लिए भी आईने जैसा है जो लड़कियों को बोझ समझते हैं, खासकर कुछ प्रदेशों में जहां यह पता लगते ही कि गर्भ में लड़की है ,गर्भपात करवाने पर जोर दिया जाता है।

ऐसा नहीं है ,पहले से समाज में लड़कियों की स्थिति बेहतर हुई है,और लड़कियों का हर क्षेत्र में शीर्ष स्थान पर होना इस बात का साक्ष्य भी हैं। पर यह सीमित है और देखा जाय तो वर्ग विशेष में है। सिर्फ चंद स्थानों पर महिलाओं या लड़कियों की उपस्थिति अन्य के लिए उदाहरण तो हो सकता है पर इसे मानक नहीं माना जा सकता । यह मानक तो तभी बनेगा जब महिलाओं या लड़कियों की भागीदारी ५० % के आस पास हो।

हालांकि समाज में महिलाओं के योगदान को नकारा नहीं जा सकता , सावित्री बाई फुले हो या महादेवी वर्मा हो या अमृता प्रीतम हो या कल्पना चावला हो या इस समय देश के सर्वोच्च पद पर आसीन महामहिम राष्ट्रपति मुर्मू जी हो, महिलाओं का योगदान देश के लिए अमूल्य रहा है, और आगे भी होता रहेगा।

आज सवाल यह नहीं है कि महिलाओं ने समाज को क्या-क्या दिया है या समाज के या फिर राष्ट्र की प्रगति में महिलाओं का क्या योगदान है । सच तो यह है कि समाज में राष्ट्र में साहित्य में शाशन में महिलाओं के योगदान को नकारा नहीं जा सकता, उनके योगदान को किसी भी तरह से पुरुषों के योगदान से कमतर नहीं आंका जा सकता। सवाल तो यह है कि समाज ने राष्ट्र ने पुरुषों ने महिलाओं को क्या दिया है।

क्या पुरुष लड़कियों को या महिलाओं पर हाथ न उठाने का आश्वासन दे सकते हैं। क्या पुरुष वर्ग महिलाओं को सही मायने में आजादी का अनुभव दे सकता है। क्या पुरुष या समाज आश्वासन दे सकता हैं किसी स्त्री को की कोई भी पुरूष उसका चीरहरण नहीं करेगा, स्त्रियां स्वतंत्र है,वो अकेले भी कहीं पर और किसी समय आ-जा सकती है। उनकी इज्जत को कोई खतरा नहीं है। किसी नभई नस्तरी को भोग विलास या वस्तु नहीं समझ जाएगा। हर पुरुष उनकीं मान मर्यादा की रक्षा करेगा। जिस दिन इन सवालों का जबाब हां होगा ,वहीं सही मायने में स्त्रियों के लिए स्वतंत्रता का दिन होगा।उसी दिन स्त्री भयमुक्त हो एक स्वतंत्र स्त्री की भांति जीवन व्यतीत कर सकेगी।

अब बात करते हैं अठारहवीं सदी के मैसूर के प्रसिद्ध शासक टीपू सुल्तान की, जिनकी तलवार की नीलामी हाल-ही में लंदन में हुई,और बोली लगी 143 करोड़ रुपए की। अंग्रेज भारत में शाशन करने के अलावा सोना चांदी के अलावा यहां की कई बहुमूल्य वस्तुएं लूटकर अपने साथ ले गये। जिनमें कलाचित्र, बेहतरीन शिल्प मूर्तियां, अद्भुत कला कौशल की अनमोल वस्तुएं शामिल हैं। इनमें से एक विश्व प्रसिद्ध बेशकीमती कोहिनूर हीरा भी शामिल हैं ।जिसे वापस भारत लाने का मुद्दा बार बार उठता रहा है। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि ब्रिटेन सरकार को स्वयं ही इसे वापस कर देना चाहिए क्योंकि शासित राज्यों को सही मायने में स्वतंत्र करने का मतलब है कि वहां से लूटी बहुमूल्य वस्तुएं को, जो न केवल वहां की विरासत हैं, बल्कि जिनसे उन्हें विश्व पटलपर पहचान मिलती है, यथासम्मान वापस करना। इस तरह की आचरण अंग्रेजों लुटेरों की श्रेणी से मुक्त कर सकती है और विश्व में उनकी यह पहल अंग्रेजों को सम्मान दिला सकती है।

कोहिनूर हीरा भी भारत की पहचान है। जिसकी उत्पत्ति के बारे में अलग-अलग राय है। कुछ के हिसाब से यह गोलकुंडा के हीरे की खादान से निकला है। कुछ के हिसाब से यह कोल्लूर की खानसे प्राप्त हुआ था । इसका जिक्र बाबर ने बाबरनामा में किया है। बाबर ने इसका मूल्य बताया है , कि यह इतना कीमती है कि पूरे संसार का दो दिनों तक पेट भर सकता है। मुगलों के हाथों व अन्य हिन्दू शाशकों के हाथों से गुजरता हुआ अंत में ब्रिटेन सरकार के ख़ज़ाने में शामिल हो गया। जिसे वापस लेना भारत सरकार की जिम्मेदारी बनती है और ब्रिटेन सरकार की नैतिकता।

और अब बात करते हैं ,इस साल मई माह में रिलीज हुई विवादास्पद फिल्म 'द केरल स्टोरी' के बारे में,यह फिल्म सुदीप्तो सेन द्वारा निर्देशित है और इस फिल्म के निर्माता है विपुल शाह। इस फिल्म के कथानक में केरल के महिलाओं के एक समूह की कहानी को दर्शाया गया है जो धर्मान्तरित होकर मुसलमान बन जाती हैं और चरमपंथी इस्लामिक स्टेट ऑफ़ इराक एंड सीरिया (आईएसआईएस) में शामिल हो जाती हैं।

यह फिल्म "लव जिहाद" पर आधारित है,और दावा करती है कि केरल की महिलाओं को आईएसआईएस में शामिल किया जा रहा है और उनसे सेक्स स्लेव और मानवबाम्ब के रुप में प्रयोग किया जा रहा है। हालांकि बाद में निर्माता निर्देशक ने इस बातसे अपना पल्ला झाड़ लिया और इसे काल्पनिक करार दे दिया।

सच्चाई जो भी हो ,पर यह फिल्म विवादों की वजह से साल की सार्वाधिक कमाई वाली फिल्म बन गयी है।सारे राजनीतिक दल अपनी अपनी रोटियां इस पर सेंक रहे हैं। कहीं पर फिल्म बैन कर दी गई है,और कहीं पर इसका स्वागत है रहा है ।इसे आई ओपनर कहा जा रहा है। कूछ लोग इसे इस्लामिकफोबिया मान रहें हैं,बहरहाल जो भी हो ,फिल्म को विवाद में आना ही था,जो इसके कथानक से ही स्पष्ट हो जाता है। वैसे भी आजकल विवादित कथानक या विवादित किरदार पर फ़िल्में बनाना प्रसिद्धि और जबरदस्त कमाई का स्रोत बन गया है। और निमता निर्देशक इनका भरपूर फायदा उठा रहें है।

गर्मी की छूटियाँ बीत चुकी है ,वापस बच्चों के स्कूल खुल रहें है ।वापस पीठ पर बस्ता लादे इक रंग की यूनिफॉर्म पहने हस्ते खेलते बच्चे नजर आने लगें है , इन बच्चों के साथ थोड़ी देर हम भी बच्चे बन जाते है।

व्यक्तिगत कारणों से इस अंक को आने में जरा सी देरी हो गई है। आशा है एवं उम्मीद है कि आप सब स्वस्थ एवं सानंद होंगे।

आपका शुभेच्छु

भारत भूषण

लो
एक बजा दोपहर हुई
चुभ गई हृदय के बहुत पास
फिर हाथ घड़ी की
तेज सुई

पिघली
सड़कें झरती लपटें
झुँझलाईं लूएँ धूल भरी
किसने देखा किसने जाना
क्यों मन उमड़ा क्यों
आँख चुई

रिक्शेवालों की
टोली में पत्ते कटते पुल के नीचे
ले गई मुझे भी ऊब वहीं कुछ सिक्के मुट्ठी में भींचे
मैंने भी एक दाँव खेला, इक्का माँगा पर
पर खुली दुई

सहसा चिंतन को
चीर गई आँगन में उगी हुई बेरी
बह गई लहर के साथ लहर कोई मेरी कोई तेरी
फिर घर धुनिये की ताँत हुआ फिर प्राण हुए
असमर्थ रुई

भवानीप्रसाद मिश्र

हवा वैसाख की
राशि राशि पत्ते
पेडो के नीचे के राशि राशि झरे बिखरे
सूखे फूल
लेकर चलेगी चल देगी

मुझको तो यह भी मयस्सर नही है
मैं क्या करूंगा वैसाख की दुपहिरया में
झरिया खनाती हुयी कोई बेटी भी
नही दिखेगी जब नदिया के तीर पर
मैं क्या लेकर उड़ूँगा प्राणो में
देय क्या भरूंगा मैं शब्दो के दोने में
अकमठ बुढापे सा
दुबका रहँूगा क्या कोने में

तन के मन के
विस्तृत गगन के
ओर छोर ढांकने की इच्छा मेरी
आषाढ के मेघ की तरह नही
तो क्या
वैसाख जेठ की धूल की तरह भी
पूरी नही होगी

राशि राशि झरे बिखरे सूखे फूल
लेकर बहेगी हवा वैसाख की
मैं क्या करूंगा।

आलेख

"कथेतर गद्य के विकास की बहुत संभावनाएं हैं"

हिंदी साहित्य में सर्वाधिक लिखी जाने वाली विधा कविता है| फिर कहानी का नंबर आता है जिसमें उपन्यास भी शामिल हैं| व्यंग्य भी लिखे जाते हैं, नाटक भी और आत्मकथ्य भी| निबंध, संस्मरण, यात्रा वृतात, रेखाचित्र, डायरी आदि कम देखने में आते हैं| इन कथेतर विधाओं पर बात भी अत्यल्प होती है| जबकि ये रोचक और ज्ञानवर्धक विधाएं हैं| इनका संज्ञान लिया जाना चाहिए| इनकी चर्चा और मूल्यांकन होना चाहिए| आज के समय में इनका प्रभाव क्षेत्र विस्तृत होने की पर्याप्त संभावनाएं हैं| आज का पाठक साहित्य की प्रचलित विधाओं से इतर कुछ पढ़ना चाहता है| इसलिए हमारा दायित्व है कि इनकी जानकारी हिंदी साहित्य के पाठकों तक पहुंचाई जाए|

संस्मरण :

स्मृति के आधार पर किसी विषय पर अथवा किसी व्यक्ति पर लिखित आलेख संस्मरण कहलाता है। यात्रा साहित्य भी इसके अन्तर्गत आता है। संस्मरण को साहित्यिक निबन्ध की एक प्रवृत्ति भी माना जा सकता है। ऐसी रचनाओं को 'संस्मरणात्मक निबंध' कहा जा सकता है। व्यापक रूप से संस्मरण आत्मचरित के अन्तर्गत लिया जा सकता है। किन्तु संस्मरण और आत्मचरित के दृष्टिकोण में मौलिक अन्तर है। आत्मचरित के लेखक का मुख्य उद्देश्य अपनी जीवनकथा का वर्णन करना होता है। इसमें कथा का प्रमुख पात्र स्वयं लेखक होता है। संस्मरण लेखक का दृष्टिकोण भिन्न रहता है। संस्मरण में लेखक जो कुछ स्वयं देखता है और स्वयं अनुभव करता है उसी का चित्रण करता है। लेखक की स्वयं की अनुभूतियाँ तथा संवेदनायें संस्मरण में अन्तर्निहित रहती हैं। इस दृष्टि से संस्मरण का लेखक निबन्धकार के अधिक निकट है। वह अपने चारों ओर के जीवन का वर्णन करता है। इतिहासकार के समान वह केवल यथातथ्य विवरण प्रस्तुत नहीं करता है। पाश्चात्य साहित्य में साहित्यकारों के अतिरिक्त अनेक राजनेताओं तथा सेनानायकों ने भी अपने संस्मरण लिखे हैं, जिनका साहित्यिक महत्त्व स्वीकारा गया है।

संस्मरणों को साहित्यिक रूप में लिखे जाने का प्रचलन आधुनिक काल में पाश्चात्य प्रभाव के कारण हुआ है। किन्तु हिन्दी साहित्य में संस्मरणात्मक आलेखों की गद्य विधा का पर्याप्त विकास हुआ है। संस्मरण लेखन के क्षेत्र में हमें अत्यन्त प्रौढ तथा श्रेष्ठ रचनाएं हिन्दी साहित्य में उपलब्ध होती हैं।

हिन्दी के प्रारंभिक संस्मरण लेखकों में पद्म सिंह शर्मा हैं। इनके अतिरिक्त बनारसीदास चतुर्वेदी, महादेवी वर्मा तथा रामवृक्ष बेनीपुरी आदि हैं। चतुर्वेदी ने "संस्मरण" तथा "हमारे अपराध" शीर्षक कृतियों में अपने विविध संस्मरण आकर्षक शैली में लिखे हैं। हिन्दी के अनेक अन्य लेखकों तथा लेखिकाओं ने भी बहुत अच्छे संस्मरण लिखे हैं। उनमें से कुछ साहित्यकारों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। श्रीमती महादेवी वर्मा की "स्मृति की रेखाएँ" तथा "अतीत के चलचित्र" संस्मरण साहित्य की श्रेष्ठ कृतियाँ हैं। रामबृक्ष बेनीपुरी की कृति "माटी की मूरतें" में जीवन में अनायास

शैलेन्द्र चौहान

संपर्क:34/242,सेक्टर-3,प्रतापनगर,जयपुर302033

मो.7838897877 संप्रति : जयपुर में निवास। नियमित लेखन एवं स्वतंत्र पत्रकारिता।

कविता संग्रह:'नौ रुपये बीस पैसे के लिए' 1983 में,'श्वेतपत्र' दो दशकों के अंतराल के बाद 2002 में, 'और कितने प्रकाश वर्ष' (श्वेतपत्र, पुनर्प्रकाशित) 2003 में, 'ईश्वर की चौखट पर' 2004 में, 'सीने में फाँस की तरह', 2023,

कहानी संग्रह:'नहीं यह कोई कहानी नहीं' 1996 में,'गंगा से कावेरी', 2023,

संस्मरणात्मक उपन्यास:'पांव जमीन पर' 2010 में,

मिलने वाले सामान्य व्यक्तियों का सजीव एवं संवेदनात्मक कोमल चित्रण किया गया है।

इनके अतिरिक्त देवेन्द्र सत्यार्थी ने लोकगीतों का संग्रह करने हेतु देश के विभिन्न क्षेत्रों की यात्रायें की थीं, इन स्थानों के संस्मरणों को भावात्मक शैली में उन्होंने लिखा है। "क्या गोरी क्या साँवली" तथा "रेखाएँ बोल उठीं" सत्यार्थी के संस्मरणों के अपने ढंग के संग्रह हैं। भदन्त-आनन्द कोसल्यायन ने अपने यात्र जीवन की विविध घटनाओं तथा परिस्थितियों के संदर्भ में जो अनेक पात्र मिले उनके सम्बन्ध में अपने संस्मरणात्मक आलेखों को दो संकलनों "जो न भूल सका" तथा "जो लिखना पड़ा" में संगृहीत किया है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर ने "भूले हुए चेहरे" तथा "दीपजले शंख बजे" में अपने कतिपय अच्छे

और आकर्षक संस्मरण संकलित किये। संस्मरण को साहित्यिक निबन्ध की एक प्रवृत्ति भी माना जा सकता है। ऐसी रचनाओं को संस्मरणात्मक निबंध कहा जा सकता है। गुलाबराय की कृति "मेरी असफलताएँ" को संस्मरणात्मक निबन्ध की कोटि में रखा जा सकता है। हिन्दी के अन्य अनेक लेखकों ने भी अच्छे संस्मरण लिखे हैं जिनमे प्रमुख है राजा राधिकारमण सिंह की 'सावनी समां', और 'सूरदास', रामधारी सिंह 'दिनकर' की 'लोकदेव नेहरु' व संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ', डॉ रामकुमार वर्मा की 'संस्मरणों के सुमन' आदि।

हिंदी निबंध :

आधुनिक हिंदी गद्य-विधाओं में निबंध का महत्वपूर्ण स्थान है। इसका उद्भव भी भारतेन्दु युग से ही स्वीकार किया जाता है। कतिपय समीक्षक सदासुख लाल अथवा राजा शिवप्रसाद सितारे हिंद को हिंदी का पहला निबंधकार मानते हैं, परन्तु एक सुव्यवस्थित एवं सुनिश्चित निबंध-परम्परा का सूत्रपात भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके समसमयिक निबंधकारों से ही होता है।

हिंदी निबंध के विकास को चार भागों में बाँटा गया है-

1. भारतेन्दु युग
2. द्विवेदी युग
3. शुक्ल युग
4. शुक्लोत्तर युग

1. भारतेन्दु युग (1868 ई. से 1900 ई.)

गद्य की अन्य विधाओं के साथ ही भारतेन्दु युग से हिंदी निबंध का सूत्रपात एवं विकास होता है। इस युग के निबंधकारों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बद्रीनारायण चौधरी प्रेमघन, श्री निवासदास आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र आधुनिक हिंदी गद्य के जन्मदाता हैं। वे इस युग के प्रतिभा सम्पन्न निबंधकार हैं। उन्होंने समाज, राजनीति, धर्म, इतिहास, साहित्य आदि विविध विषयों पर निबंध-रचना की है। इनके यात्रा संबंधी निबंध भी विशेष महत्त्व रखते हैं। जिन्दादिली, आत्मीयता एवं व्यंग्यात्मकता भारतेन्दु के निबंध-साहित्य की विशेषताएँ हैं।

बालकृष्ण भट्ट भारतेन्दु युग के सर्वश्रेष्ठ निबंधकार कहे जा सकते हैं। भट्ट जी हिंदी प्रदीप पत्रिका के सम्पादक थे। इनके निबंध भट्ट निबंधमाला, भट्ट निबंधावली तथा साहित्य सुमन संग्रहों में संकलित हैं। विचारात्मक एवं भावात्मक दोनों प्रकार के निबंधों की रचना में भट्ट जी सफल रहे हैं। प्रतापनारायण मिश्र इस युग के स्वच्छन्द एवं मस्तजीवी निबंधकार हैं। इनके निबंध ब्राह्मण पत्रिका में प्रकाशित होते थे। प्रतापनारायण मिश्र ग्रंथावली में इनके निबंध संग्रहीत हैं। मनोरंजन तथा व्यंग्य इनके निबंधों की विशेषताएँ हैं। समग्र रूप से भारतेन्दु युग के निबंधों में हास्य- व्यंग्य, देश-प्रेम, समाज- सुधार और मनोरंजन जैसी विशेषताएँ प्रधान रूप से पाई जाती हैं।

2. द्विवेदी युग (1901 ई. से 1920 ई.)

द्विवेदी युग के प्रवर्तक महावीर प्राद द्विवेदी आचार्य, समीक्षक और निबंधकार के रूप में प्रसिद्ध हैं। आचार्य द्विवेदी ने सरस्वती के सम्पादक रहते हुए विविध विषयों पर निबंधों की रचना की। उन्होंने संस्कृति, साहित्य, समाज, धर्म, शिक्षा, इतिहास आदि विषयों पर विचारात्मक एवं आलोचनात्मक निबंधों की रचना की। उनके निबंधों में विचारों एवं तथ्यों को प्रधानता है। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, पद्म सिंह शर्मा, बालमुकुन्द गुप्त, गोविन्दनारायण मिश्र, श्यामसुन्दरदास, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, अध्यापक पूर्णसिंह इस युग के प्रसिद्ध निबंधकार हैं। इस युग के निबंधों से निबंध का विचार क्षेत्र व्यापक हुआ है। विचार-प्रधान निबंधों की रचना में इस युग के लेखक को सफलता मिली है, परन्तु भारतेन्दु युगीन आत्मीयता जिन्दादिली तथा सजीवता का इस युग के निबंध में अभाव है।

3. शुक्ल युग (1921 ई. से 1940 ई.)

शुक्ल युग के निबंधकारों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल शीर्षस्थ है। आचार्य शुक्ल ने मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक एवं आलोचनात्मक निबंधों की रचना की है, जो चिन्तामणि (दो भाग) में संगृहीत हैं। शुक्ल जी के निबंध विचारात्मक निबंधों का आदर्श प्रस्तुत करते हैं। इनमें बुद्धि और भाव का सन्तुलित समन्वय मिलता है। उत्साह, करुणा, भय आदि शुक्ल जी के मनोभाव संबंधी प्रसिद्ध निबंध हैं। कविता क्या है? आदि इनके साहित्यिक एवं समीक्षात्मक निबंध हैं। शुक्ल जी की भाषा भावों और विचारों की अभिव्यक्ति में पूर्णतया सक्षम है।

शुक्ल युग के निबंधकारों में बाबू गुलाबराय, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, महादेवी वर्मा, राहुल सांकृत्यायन आदि उल्लेखनीय हैं। इन निबंधकारों की अपनी मौलिक विशेषताएँ हैं। बाबू गुलाबराय ने आत्म-परक निबंधों की रचना की है। महादेवी के निबंध संस्मरणात्मक हैं। राहुल के निबंधों में विषय- वैविध्य है। सियारामशरण गुप्त के निबंध वैयक्तिक है। इस युग में श्रीराम शर्मा ने आखेट विषयक निबंध लिखे हैं। डॉ. रघुवीर सिंह के भावात्मक निबंध भी प्रसिद्ध हैं। शुक्ल युग के इन निबंधकारों में विचारों की गम्भीरता के साथ- साथ भाषा-शैली की प्रौढ़ता भी मिलती है।

4. शुक्लोत्तर हिंदी निबंध (1940 ई. से अब तक)

शुक्लोत्तर युग के निबंधकारों में हजारीप्रसाद द्विवेदी अपने ललित निबंधों के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्हें सांस्कृतिक चेतना का निबंधकार माना जा सकता है। प्राचीन और नवीन का सामंजस्य उनकी उल्लेखनीय विशेषता है। अशोक के फूल, कुटज, कल्पलता, आलोक पर्व आदि संग्रहों में द्विवेदी जी के निबंध संगृहीत हैं। उनकी भाषा प्रौढ़ है और शैली में व्यंग्य-

-विनोद। इस युग के अन्य निबंधकारों में वासुदेवशरण अग्रवाल, आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र, भगतशरण उपाध्याय, जैनेन्द्र, रामविलास शर्मा, प्रभाकर माचवे, डॉ. इन्द्रनाथ मदान, डॉ. सत्येन्द्र आदि के नाम भी पर्याप्त चर्चित है। इसी क्रम में ललित निबंध के मार्ग को जिन्होंने प्रशस्त किया है उन निबंधकारों में डॉ. विद्यानिवास मिश्र, धर्मवीर भारती, नामवर सिंह, शिवप्रसाद सिंह, श्रीलाल शुक्ल, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, हरिशंकर परसाई, कुबेरनाथ राय, विवेकी राय आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें डॉ. विद्यानिवास मिश्र ने निबंध के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान प्राप्त किया है। इन्होंने आचार्य द्विवेदी की सांस्कृतिक- साहित्यिक ललित निबंध- परम्परा को विकसित किया है। छितवन की छाँह, कदम की फूली डाल, तुम चन्दन हम पानी आदि मिश्र जी के निबंध- संग्रह हैं। इनके निबंधों में अनुभूति और चिन्तन का मेल है और भाषा में लालित्य और प्रवाह है। हरिशंकर परसाई हास्य व्यंग्य- प्रधान निबंधों के लिए प्रसिद्ध हैं।

यात्रा वृतान्त :

हिन्दी साहित्य में यात्रा वृतान्त एक आधुनिक गद्य विधा के रूप में स्वीकृत है। हिन्दी में यात्रा-वृत्तान्त लिखने की परम्परा का सूत्रपात भारतेन्दु से माना जाता है। इनके यात्रावृत्त विषयक रचनाएँ कविवचनसुधा में प्रकाशित होती थीं। राहुल सांकृत्यायन, अज्ञेय और नागार्जुन को आधुनिक हिंदी साहित्य का 'घुमक्कड़ बृहतत्रयी' कहा जाता है।

भारतेन्दु ने विभिन्न स्थलों की यात्रा की और अपने अनुभवों को साझा किया। यात्रा वृतांत के रूप में उनके कुछ संस्मरण हैं- सरयू पार की यात्रा, लखनऊ की यात्रा, हरिद्वार की यात्रा। भारतेंदु युग में ही कुछ लेखकों के द्वारा विदेश यात्रा के वृतांत भी लिखे गए। इसी प्रकार द्विवेदी युग में भी विभिन्न यात्रा वृतान्त लिखे गए श्रीधर पाठक की देहरादून , शिमला यात्रा। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक की "मेरी कैलाश यात्रा", अमेरिका भ्रमण आदि। सबसे महत्वपूर्ण यात्रावृतान्त लेखक राहुल सांकृत्यायन माने जाते हैं। उन्होंने विभिन्न देशों की यात्रा की और यात्रा में आने वाली कहानियों को बताने के साथ-साथ उस स्थान विशेष कि प्राकृतिक संपदा, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक घटनाओं को भी बारी-बारी से प्रस्तुत किया जैसे- किन्नर देश में, दार्जिलिंग परिचय, यात्रा के पन्ने आदि।

राहुल सांकृत्यायन का नाम जब भी सामने आता है तो स्मृति में सबसे पहले आती है घुमक्कड़ी। उनकी एक पुस्तक का नाम भी है - घुमक्कड शास्त्र, इसके अलावा भी उन्होंने कई पुस्तकें यात्रा और भ्रमण पर लिखी हैं। महापंडित कहे जाने वाले राहुल सांकृत्यायन वास्तव में यायावर थे, लेकिन वैसे यायावर नहीं जो सारी सुविधाओं के साथ घूमने जाते हैं। वे लिखते हैं कि "बढ़िया से बढ़िया होटलों में ठहरने, बढ़िया से बढ़िया विमानों पर सैर करने वालों को घुमक्कड़ कहना इस महान शब्द के प्रति भारी अन्याय करना है।" राहुल सांकृत्यायन ने कोलकाता, काशी, दार्जिलिंग, तिब्बत, नेपाल, चीन, श्रीलंका, सोवियत संघ समेत कई देशों का भ्रमण किया। वे एक साधारण घुमक्कड़ नहीं थे जो किसी देश में जाकर वहां के भूगोल मात्र से प्रभावित हो ले। वह खच्चर पर किताबें लादकर तिब्बत से भारत ले आए थे। वे जहां जाते, वहां की संस्कृति को भी आत्मसात् करते। 30 भाषाएं जानते थे और 140 किताबों के लेखक थे। अद्भुत तर्कशास्त्री थे, समाजशास्त्र, दर्शन, इतिहास, अध्यात्म जैसे विषयों के ज्ञाता थे। संभवत: यह सभी उनके घुमक्कड़ स्वभाव के कारण ही उन्हें मिला। अपने आप में घुमक्कड़ होना या मात्र साहित्यकार होना एक व्यक्ति को अन्य से अलग करता है पर राहुल तो दोनों थे। अपने घूमने के स्वभाव के कारण वह अपनी जड़ों से कभी नहीं कटे। समाज के विभिन्न वर्गों के लिए अपनी आवाज़ बुलंद करते रहे। उन्होंने कहा कि, "घुमक्कड़ होने का अर्थ ही नहीं कि उसका अपनी मातृभूमि से प्रेम ही न हो।" राहुल भी जीवन के आख़िरी पड़ाव में अपने गांव लौट आए थे। एक साहित्यकार की दृष्टि से यायावरी के क्या अनुभव हो सकते हैं, यह जानने के लिए राहुल सांकृत्यायन को अवश्य पढ़ना चाहिए।

राहुल सांकृत्यायन लिखते हैं- 'व्यक्ति के लिए घुमक्कड़ी से बढ़कर कोई धर्म नहीं है। जाति का भविष्य घुमक्कड़ों पर निर्भर करता है, इसलिए मैं कहूंगा कि हरेक तरुण और तरुणी को घुमक्कड़-व्रत ग्रहण करना चाहिए, इसके विरुद्ध दिए जाने वाले सारे प्रमाणों को झूठ और व्यर्थ मानना चाहिए। यदि माता-पिता विरोध करते हैं, तो समझाना चाहिए कि वह भी प्रह्लाद के माता-पिता के नवीन संस्करण हैं। यदि हित-बांधव बाधा उपस्थित करते हैं, तो समझाना चाहिए कि वे दिवांध हैं। धर्म-धर्माचार्य कुछ उलटा-सीधा तर्क देते हैं, तो समझ लेना चाहिए कि इन्हीं ढोंगों और ढोंगियों ने संसार को कभी सरल और सच्चे पथ पर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राजसी-नेता कानूनी रुकावटें डालते हैं, तो हजारों बार की तजुर्बा की हुई बात है, कि महानदी के वेग की तरह घुमक्कड़ की गति को रोकनेवाला दुनिया में कोई पैदा नहीं हुआ।

बड़े-बड़े कठोर पहरेवाली राज्य-सीमाओं को घुमक्कड़ों ने आंख में धूल झोंककर पार कर लिया। मैंने स्वयं ऐसा एक से अधिक बार किया है। पहली तिब्बत यात्रा में अंग्रेजों, नेपाल-राज्य और तिब्बत के सीमा-रक्षकों की आंख में धूल झोंककर जाना पड़ा था। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं, कि यदि कोई तरुण-तरुणी घुमक्कड़ धर्म की दीक्षा लेता है- यह मैं अवश्य कहूंगा, कि यह दीक्षा वही ले सकता है, जिसमें बहुत भारी मात्रा में हर तरह का साहस है- तो उसे किसी की बात नहीं सुननी चाहिए, न माता के आंसू बहने की परवाह करनी चाहिए, न पिता के भय और उदास होने की, न भूल से विवाह लाई अपनी पत्नी के रोने-धोने की फिक्र करनी चाहिए और न किसी तरुणी को अभागे पति के कलपने की।

दुनिया में मनुष्य-जन्म एक ही बार होता है और जवानी भी केवल एक ही बार आती है। साहसी और मनस्वी तरुण-तरुणियों को इस अवसर से हाथ नहीं धोना चाहिए। कमर बांध लो भावी घुमक्कड़ो! संसार तुम्हारे स्वागत के लिए बेकरार है।"

अपने घूमने के स्वभाव के कारण भी वह अपनी जड़ों से कभी नहीं कटे। समाज के विभिन्न वर्गों के लिए अपनी आवाज़ बुलंद करते रहे। उन्होंने कहा कि, "घुमक्कड़ होने का अर्थ ही नहीं कि उसका अपनी मातृभूमि से प्रेम ही न हो।" राहुल भी जीवन के आख़िरी पड़ाव में अपने गांव लौट आए थे। एक साहित्यकार की दृष्टि से यायावरी के क्या अनुभव हो सकते हैं, यह जानने के लिए राहुल सांकृत्यायन को अवश्य पढ़ना चाहिए।

बाद में चलकर अज्ञेय ने अपनी यात्रा वृतांत के द्वारा विदेशी अनुभवों को भी एक भी एक कहानीकार की रोचकता और यात्री के रोमांचक के साथ प्रस्तुत किया है। "एक बूंद सहसा उछली" में यूरोप और अमेरिका की यात्राओं को प्रस्तुत किया है। मोहन राकेश ने अपनी यात्रा वृतान्त "आखिरी चट्टान" में दक्षिण भारत की यात्राओं का वर्णन किया है। निर्मल वर्मा ने "चीड़ों पर चांदनी" नामक यात्रा वृतांत में अपनी यूरोप यात्रा का वर्णन किया है। इस यात्रा वृतांग में वे वहां के इतिहास, दर्शन और संस्कृति से सीधा संवाद करते हैं। उनके यात्रा वर्णन में संवेदनशीलता के साथ साथ बौद्धिक गहराई का भी अनुभव होता है।

डायरी लेखन:

डायरी में निजी अनुभव, प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं का लेखा-जोखा, तथ्य-संग्रह, संपर्क में आए व्यक्तियों, नए अनुभवों, नए स्थानों, नयी घटनाओं आदि का संक्षिप्त विवरण होता है। इसलिए इसे दैनंदिनी भी कहते हैं। इसे लिखने के पीछे लेखक की मंशा जीवन में घटित घटनाओं को लंबे समय तक याद रखना होता है। डायरी लेखन व्यक्ति के द्वारा लिखे गये व्यक्तिगत अनुभवों, सोच और भावनाओं को लिखित रूप में अंकित करके बनाया गया एक संग्रह है। विश्व में हुए महान व्यक्ति डायरी लेखन करते थे और उनके अनुभवों से उनके निधन के बाद भी कई लोगों को प्रेरणा मिलती है। डायरी गत साहित्य की एक प्रमुख विधा है इसमें लेखक आत्म साक्षात्कार करता है। वह अपने आपसे सम्प्रेषण की स्थिति में होता है। मानव के समस्त भावों मानसिक उद्वेगों,अनुभूति विचारों को अभिव्यक्त करने में साहित्य का सर्वोच्च स्थान है।समीक्षकों ने डायरी को साहित्य की कोटि में इसलिए रखा है क्योंकि वह किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के व्यक्तित्व का उदघाटन करती है या मानव समाज के विभिन्न पक्षों का सूक्ष्म और जीवंत चित्र उपस्थित करती हैं। डायरी लेखक अपनी रूचि आवश्यकतानुसार राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक साहित्यिक अधिक विभिन्न पक्षों के साथ निजी अनुभूतियों का चित्रण कर सकता है।

जाहिर है कथेतर गद्य का दायरा विस्तृत है| इसपर बात होनी चाहिए|

काव्य

सुमन झा 'सुमन'

गोरखपुर

जड़

दूर बहुत दूर
टहनी पर लगे हुए
इक छोटे से पत्ते को भी
जब कोई खुशी या ग़म होता है
छोटा या बड़ा
उसका कोई जख्म होता है
तो वो अहसास उस टहनी
से होते हुए
उसकी शाखा तक जा पहुंचता है
और
फिर दरख़्त के तने से लेकर
उसकी जड़ों तक
जा बिखरता है।
पत्ते को ये गुमां भी नही होता
और
जड़ तिल तिल कर बिखर जाता है
पत्ते तो मुरझा कर, झड़ कर
जमाने को दर्द दिखा भी देते हैं
जमाने भर की सहानुभूति
अपने नाम कर भी लेते है
पर जड़???
उसके वश में कुछ भी नही
वह सदियों तक
यूं ही ठूंठ खड़ा रहता है
आग,ताप,पानी औ वर्षा
रात दिन, दिन रात झेलता है
वह तो.....
पुनः कोशिश करता है एक
नयी कोंपल उगाने के लिए
नई संवेदना जगाने के लिए
जीवन सरस प्रवाह बहाने के लिए

आलेख

"कविता की सहज सम्प्रेषणीयता और उत्कृष्टता के कवि : शिवकुमार अर्चन"

सम्प्रेषणीय कविता और प्रभावी प्रस्तुति की दमपर, पिछले पाँच दशकों से कवि सम्मेलनों की निरंतरता के चलते, कविवर शिवकुमार अर्चन जी की मूल पहचान को भले ही, कवि सम्मेलनों से जोड़कर देखा जाता रहा हो, पर वास्तव में शिवकुमार अर्चन जी के व्यक्तित्व और कृतित्व में कहीं भी सम्मेलनी छवि के दर्शन नहीं होते। जब हिंदी काव्यमंच और स्वयं अर्चन जी दोनों अपने चरम पर थे, तब भी अर्चन जी ने काव्य मंचों से प्रेम के नाम पर एक भी मांसल गीत ना तो लिखा और ना ही श्रोताओं को परोसा। ओज के मामले में उनकी कविता में सम्यक प्रतिरोध तो था,पर चीत्कार सिरे से नदारद थी। बीएसएनल में सेवा के दौरान उनका अधिकांश समय रीवा मध्य प्रदेश में ही व्यतीत हुआ। यद्धपि वह अपनी चर्चित गज़ल के एक शे'र में कहते जरूर यही हैं कि,

"आबोदाना न आशियाना है।
हम फकीरों का क्या ठिकाना है।"

सेवा निवृत्ति के कुछ वर्षों पहले ही उन्होंने 10, प्रियदर्शनी ऋषिवैली, ई-8 गुलमोहर एक्सटेंशन, प्रदेश की राजधानी भोपाल में अपना आशियाना बना लिया था। और यहीं से आबो-दाना की तलाश करते-करते अनन्त की यात्रा पर चल दिए।

समकालीन सांस्कृतिक परिदृश्य के सजग और संवेदनशील शब्दशिल्पी, शिवकुमार अर्चन जी के परम साहित्यिक अभिन्न मित्र मयंक श्रीवास्तव जी, अर्चन जी को,याद करते हुए भाव विवह्ल हो उठते हैं, दरअसल, दोनों के मध्य परस्पर साप्ताहिक संवाद का जो सेतु वर्षों से निर्मित था, उसे क्रूरकाल ने ध्वस्त कर दिया है। शायद नियति को यही मंजूर था। राजधानी के लिए अर्चन जी नए थे। और मयंक श्रीवास्तव जी यहाँ के साहित्यिक वातावरण से चिरपरिचित। अतः अर्चन जी को "छन्द"और "अन्तरा" जैसी छंदधर्मी साहित्यिक संस्थाओं से जोड़ने का काम मयंक श्रीवास्तव जी ने ही किया था। अब ना तो छन्द संस्था रही और ना ही अन्तरा।

तदुपरान्त अर्चन जी ने अपनी रचनाधर्मिता और बहुआयामी दृष्टिकोण व समकालीन सोच के चलते सबको मित्र बना लिया। उनका उठना-बैठना ऐसे लोगों के बीच रहा जिन्हें हम हिंदी साहित्य का थिंक-टैंक कह सकते हैं। मसलन, आलोचक कमला प्रसाद, धनञ्जय वर्मा,कैलाश चन्द्र पन्त, विजयबहादुर सिंह, साहित्यकार रमाकान्त श्रीवास्तव, सुबोध श्रीवास्तव, पूर्णचंद रथ, रामप्रकाश त्रिपाठी, महेन्द्र गगन, राजेन्द्र शर्मा, राजेश जोशी, वीरेन्द्र जैन, महेश अग्रवाल सहित जलेस और प्रलेस जैसे संगठनों से सम्बद्ध वे सभी साहित्यकार जो बुद्धिजीवी वर्ग में काउन्ट किये जाते हैं। अर्चन जी की मित्रता सूची में देखे जा सकते थे।

कुल मिलाकर अर्चन जी पक्के यार-बाज़ थे। उनकी आवाजाही दो विपरीत वैचारिक ध्रुवों, दक्षिण और वाम में, समान रूप से ससम्मान अंत तक बनी रही। इस मामले में शिवकुमार अर्चन जी प्रोफेसर अक्षयकुमार जैन के बाद दूसरे ऐसे अजातशत्रु थे, जिन्हें यह महारत हाशिल थी। शिवकुमार अर्चन जी का यह व्यवहारिक सम्यक सन्तुलन अनुकरणीय होने के साथ-साथ उन्हीं के अन्य साथियों के लिए आज भी स्पृहणीय है।

मनोज जैन 'मधुर'
नवगीत पर एकाग्र समूह वागर्थ के
संस्थापक एवं सम्पादक
106, विट्ठलनगर, गुफामन्दिर रोड,
भोपाल.462030
मोबाइल 930137806

अर्चन जी ने अपनी जड़ें और धाक पूरे देश में जमा रखी थी। इलाहाबाद की चर्चा में, वह अक्सर उमाकान्त मालवीय जी को याद करते, तो कभी यश मालवीय जी का जिक्र! माहेश्वर तिवारी जी उनके प्रिय कवियों में से एक थे। मुकुटबिहारी सरोज उनके आदर्श गीतकार रहे हैं और दोनों परस्पर एक दूसरे के प्रसंशक भी।

अर्चन जी के गीतों पर दृष्टिपात करें तो नईम, रमेश रंजक, शलभ श्रीराम सिंह जैसे दिग्गज कवियों की वैचारिकी का प्रभाव और उनकी गज़लों में अदम गौंडवी और दुष्यंत का, कहीं न कहीं सीधा प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। मित्र मण्डली अर्चन जी की बड़ी कमजोरी थी।

अपने आत्मीय मित्रों और परिजनों से संवाद नहीं होने पर मनः स्थिति पर पड़ने वाले सीधे प्रभाव की मार्मिक छवियों के चित्र अंकित किये हैं। द्रष्टव्य है उनका एक नवगीत-

"मुँह बाए उंगली चटकाते/बीत गया एक और दिन/ आँखों से छटे नहीं, स्वप्न के कुहासे/ सांसों में धुले नहीं, धूप के बताशे/ भीतर ही भीतर धुँधवाते/ बीत गया एक और दिन/ मित्रों का परिजन का फोन नहीं आया/ कमरे में डटा रहा, चुप्पी का साया/ खुद अपने ऊपर झुंझलाते/ बीत गया एक और दिन/ शायद यह कठिन समय/ किसी तरह बहले/ खींसे में प्यास लिए, सड़कों पर टहले/ इधर उधर आँखें मटकाते/ बीत गया एक और दिन।"

अर्चन जी की रचना प्रक्रिया में, वस्तु-व्यापार की सघनता, आम आदमी की पीड़ा, जनमानस के संघर्ष, और जद्दोजहद सब कुछ है। उनके यहाँ तरल संवेदना का संसार, अनूठी कल्पनाशीलता, रचनात्मक तल्लीनता, के साथ चीजों के देखने के परखने के अनेक कोण हैं; जिन्हें उनकी गीतनुमा और ग़ज़लनुमा कविताओं में देखा और परखा जा सकता है। अर्चन जी गीत रचने और गज़ल कहने के मामले में कभी भी विशुद्धतादी नहीं रहे। यदि, विशुद्धतावादी रहे होते तो आज अर्चन जी ने,अपने पीछे जो रचनात्मक बौद्धिक सम्पदा हमें सौंपी है, वह नहीं दे पाते। मूल्यांकन के विविध आयाम देखने में आते है उरूज या सनातनी छन्दों के जानकार या मास्टर कवि रचनाओं का मूल्यांकन करते समय छन्दशास्त्र का फीता लेकर कमियाँ ढूँढनें के चक्कर में, कथ्य के निर्मल आनन्द में चाहकर भी नहीं डूब पाते।

अर्चन जी यह भलीभाँति जानते थे कि, उनकी गीति और गज़ल रचानाएँ शास्त्रीय पैमाने के निकष पर खरी नहीं है। यही कारण था की वह रचना पाठ से पहले ही अपनी रचनाओं को "गीतनुमा" या "ग़ज़लनुमा कह देते थे, दरअसल गीतनुमा और ग़ज़लनुमा का तकियाकलाम अर्चन जी का हरवर्ग के श्रोताओं (विशेषकर जो गीत और गजल को मात्राओं के निकष पर कसते हैं।) के ध्यान को अपनी ओर खींचने का एक किस्म का सम्मोहन था।

यद्धपि समकालीन कवियों के दृष्टिकोण में इस तरह की जड़ताएँ वैसे नहीं के बराबर हैं। अर्चन जी अपनी रचना प्रक्रिया के आस्वाद का पता "उत्तर की तलाश में" के पुरोवाक में लिखते हैं कि, कोई भी कविता ऐसे नहीं बनती, उसके पीछे जिन्दगी के संघर्ष होते हैं, उसके पीछे एक दर्शन होता है। एक विचार प्रणाली होती है, जीवन के ताप होते हैं, सुलगते हुए अहसास होते हैं । कथन को आगे बढ़ाते हुए वह कहते हैं कि, "पाखण्ड, विसंगति, असत्य, अन्याय और व्याप्त अंधेरे के खिलाफ जंग में ग़ज़ल ने मेरी रहनुमाई की।" ग़ज़ल मेरे लिए आम आदमी तक पहुँचने का जरिया रही है। इन गजलों में पिरोये अहसास मेरे अपने हैं और उनकी आँच भी। सन्दर्भ : ग़ज़ल क्या कहे कोई से उद्धरत एक अंश दूसरा एक और बड़ा स्टेटमेंट जो उन्होंने कुछ बातें' उत्तर की तलाश' के पुरोवाक़ में दिया जो बेहद महत्वपूर्ण है। यद्धपि इस आशय के संकेत अर्चन जी से पहले के कवियों ने भी दिए हैं। मेरे मतानुसार इस कथन को हर रचनाकार को वेद की ऋचाओं की तरह कंठस्थ कर लेना चाहिए।

अर्चन जी कहते है कि, "मैं समय से बड़ा न्यायाधीश और लोक से बड़ा आलोचक न किसी को मानता हूँ, न जानता हूँ।"अर्चन जी के नये संकलन "सौधो दरस परस सब छूटे" की भूमिका के एक अंश में प्रख्यात आलोचक डॉ.धनञ्जय वर्मा उनकी भाषा की सादगी पर प्रकाश डाला है। और उनकी कविताओं की सादगी और संजीदगी की प्रशंशा की है । हम-आप अपनी रोजमर्रा जिन्दगी में जैसे बोलते लिखते हैं उसी सादा जवान में ये लिखी कही गईं हैं।

यह सादगी लेकिन 'सरल' या 'आसान' नही है,यह अकृत्रिम है, दरअसल यह सहजता का नतीजा है। अनुभव और अनुभूति जितनी तुर्श ओ तल्ख होगी अभिव्यक्ति -उतनी ही सहज होगी।"

इस कथन को यहाँ कोट करने का आशय यहाँ सिर्फ इतना ही है कि, एक बड़ा कवि चिंतन के धरातल पर भले ही शास्त्रीय रहे ; पर अभिव्यक्ति के मामले में उसे, अत्यंत सजग जिम्मेदार और सरल होना चाहिए।

यहाँ हम बात करते हैं, "साधो दरस परस कब छूटे " के एक गीत की , जिसे चिंतन के धरातल पर अर्चन जी ने रचा है। गीत में प्रयुक्त 'अनहद' शब्द पाठक या श्रोता का ध्यान बरबस अपनी ओर खींचता है। गीत में ध्यान की सर्वोत्कृष्ठ भाव दशा उच्चतम भाव व्याप्त है। और इस भावदशा में गहरे पैठ कर ही एक निर्विकार साधक स्वयं से स्वयं का साक्षात्कार कर सकता है। पूरे गीत में कवि ने ध्यान की सिद्धावस्था में उतरकर 'सोहम' की आराधना और 'शिवत्व' की मंगल अर्चना की है। जो सामान्य साधक के यहाँ दुर्लभ है।

द्रष्टव्य है कवि का लिखा एक पूरा गीत-

"अनहद के मतलब समझाता है/ ये गीत नहीं मेरा, आवाज़ नहीं मेरी/ ये शब्द नहीं मेरे, ये कहन नहीं मेरी/ जाने उनसे कैसा नाता है/ मेरे भीतर कोई गाता है/ ये कैसी रुनझुन है मैं रीझ रीझ जाता हूँ/ ये कैसा सावन है मैं भीग भीग जाता हूँ/जब आता बे आहट आता है। मेरे भीतर कोई गाता है/ मिल जाए मुझको आँखों में उसे भर लूँ/गुलमोहर बनूँगा मैं आ तुझे जरा छू लूँ/ सरफूँदें मेरी सुलझाला है/ मेरे भीतर कोई गाता है।"

जिस साधक को अनहद नाद सुनाई देने लगे, जो बिना किसी को गुरू स्वीकार किये, साधना की सिद्धावस्था को वरण करने की मंगलकामना करता है। ऐसा साधक यदि अपने सिक्स-सेंस से अपना भविष्य दर्शन कर ले, तो इसमें क्या आश्चर्य!

साधो दरस परस सब छूटे शीर्षक गीत में कवि ने अपने सारे जीवनानुभवों और मृत्युबोध को एक छोटे से गीत में सम्पूर्ण आख्यायित करने की कोशिश की है। दृष्टव्य है उनका एक गीत -

"साधो दरस परस सब छूटे/ सूख गई पन्नों की स्याही/ संवादों के रस छूटे/ साधो!दरस परस सब छूटे/ मृत अतीत की नई व्याख्या/ पढ़ना सुनना है/ शेष विकल्प नहीं अब कोई/ फिर भी चुनना है/ रातें और संध्याएँ छूटीं/ अब कुनकुने दिवस छूटे/ साधो! दरस परस सब छूटे/ नहीं निरापद हैं यात्राएँ/ उठते नहीं कदम/ रोज-रोज सपनों का मरना/ देख रहे हैं हम/ हाथों से उड़ गए कबूतर/ कौन बताए कस छूटे/ साधो!दरस परस सब छूटे/ आदमकद हो गए आइने/ चेहरे बौने हैं/ नोन राई,अक्षत,सिंदूर के/ जादू टोने हैं/ लहलहाई अपयश की फसलें/जनम-जनम के यश छूटे/ साधो! दरस परस सब छूटे/

दार्शनिक अनुभूतियों की सहज और सरल अभिव्यक्ति ही कविकर्म को कालजयी बनाती हैं। अर्चन जी ने आत्मकथ्य के आलोक में जो छोटे-छोटे स्टेटमेंट हैं। वह फ़लक में थोड़े नहीं बहुत बड़े हैं। अर्चन जी सिर्फ शारीरिक कद-काठी से ही बड़े नहीं, बल्कि वैचारिक दृष्टिकोण से भी बड़े कवि थे।

अर्चन जी की मूल पहचान उक्त संदर्भित गीतों से हो ऐसा नहीं है। बल्कि, उन्हें साहित्य जगत में उनके चिंतन से जाना गया, गीतों में प्रतिरोध उनकी पहचान थी। क्लास हो या मास, अर्चन जी दोनों स्थलों पर अपनी प्रभावशाली प्रस्तुतियाँ देते रहे। मंचीय प्रस्तुति की उनकी एक पसंदीदा रचना रही है। अपने इस कथन के आलोक में प्रस्तुत हैं रचना के कुछ अंश देखें-

ऐसी हवा चली मत पूछो/ चन्दन वन अंगार हो गए/ नन्हें मुन्हें सपन हमारे/ तलवारों की धार हो गए/ क्या गाऊं ऐसे में जब सब दर्द उगाते हैं/ मेरे गीत अधर तक आने में शरमाते हैं।" जीवन होम हो गया सारा/ ऐसी जली पेट की ज्वाला/ सूरज लाने वालों ने ही/ तम से समझौता कर डाला/ क्या गाऊं जब कुएं स्वयं पानी पी जाते जाते हैं/ मेरे गीत अधर तक आने में शरमाते हैं।"

उनसे अद्भुद गीत रचवाता रहा। वह कभी प्रकृति की मनोहारी छटा के शब्द चित्र बनाते, तो कभी जनमानस की पीड़ा के शब्द चित्र उकेरते। वह खुद तो कम पर गीतों में ज्यादा बोलते थे। चुप्पी उन्हें पीड़ा देती थी। देखें एक गीत का अंश

"थके थके संध्या के पाँव रे/ आजा माझी अपने गांव रे/ फैला पर लौट घर पंछी-ले ले कर चोंच पर उजाले/ मेरे घर आँगन पर बैठा/ सूनापन गलबहियाँ डाले/ मूक हुई नयनों की नाव रे।"

1. ग़ज़ल क्या कहे कोई (2007)
2. उत्तर की तलाश (2013)
3.ऐसा भी होता है (2017)
4.सौधो दरस परस सब छूटे (2022)

कुल जमा चार पुस्तकों में छपा उनका रचना संसार किसी भी पाठक को भी अपनी तरफ मोहने के लिए पर्याप्त है। इससे इतर कुछ बातें अर्चन जी के व्यक्तित्व में और जुड़ती हैं। अर्चन जी बेहद पढ़ाकू किस्म के इंसान थे। वह अपने मित्रों को डूबकर पढ़ते, सुनते और उनपर लिखते थे। साथ ही उनका लगाव सिर्फ गीत या गज़ल तक सीमित नहीं था। साहित्य की सभी विधाओं में उनकी आवाजाही रही है। वे अपने समय के बहुत अच्छे समालोचक और समीक्षक भी रहे हैं। कथा, उपन्यास या फिर नई कविता पर विमर्श, आयोजन में अर्चन जी की उपस्थिति सभी जगह होती थी।

भोपाल के चर्चित सात गीतकारों सर्व श्री हुकुमपाल सिंह विकल, जंगबहादुर श्रीवास्तव बंधु, दिवाकर वर्मा, मयंक श्रीवास्तव, शिवकुमार अर्चन, दिनेश प्रभात, और मनोज जैन के दस - दस गीतों को एकत्रित कर अर्चन जी ने अपने सम्पादन में एक दस्तावेजी काम भी किया, जो सन 2012, में पहले पहल प्रकाशन, भोपाल से "सप्तराग" गीत संकलन के रूप में छपकर आया,और अच्छा खासा चर्चा के केंद्र में रहा।

यों तो अर्चन जी को शहर की साहित्यिक गोष्ठियों में खूब सुना पर 1,जून 2017 को कवि मैथिलीशरण गुप्त की पुण्यतिथि के एक विशेष आयोजन में दतिया, के चर्चित कवि एवं संयोजक अग्रज शैलेन्द्र बुधौलिया जी के आमन्त्रण पर अर्चन जी को बड़े काव्य मंच पर देर रात तक डूबकर सुनने का अवसर मिला था। उस कार्यक्रम मेरी उपस्थिति एक आमन्त्रित कवि के रूप में थी।

उसका परिणाम यह हुआ कि मैं अर्चन जी के व्यक्तित और कृतित्व से पूरी तरह जुड़ सका उन्हें पूरी तरह समझने का काम शैलेन्द्र शैली की एक पत्रिका राग भोपाली ने किया जिसने अर्चन जी पर एक विशेषांक केन्द्रित किया था।

अर्चन जी की स्मृतियों से गुजरते हुए सादर उन्हीं की ग़ज़ल के चंद शेर यहाँ रखकर अपनी बात को विराम देता हूँ। किसी ने ठीक ही कहा है। जाने वाला अपने निशान छोड़ जाता है। आज अर्चन जी नहीं हैं। हाँ, उनकी स्मृतियाँ हमारे साथ हैं।

"बस्तियाँ रह जाएंगी, न हस्तियाँ रह जाएंगी/इन दरख्तों पर हरी कुछ पत्तियाँ रह जाएंगी/तुम भले न याद रक्खो मेरी गज़लें मेरे गीत/पर मेरी आवाज की परछाइयाँ रह जाएंगी/"

शिवकुमार अर्चन जी के यहाँ, लोक कंठ की मिठास थी। उनकी गायकी का अंदाज अनूठा था। उनकी जादुई आवाज हर किसी को मंत्र मुग्ध कर लेती थी। इसी लिए वे मंचों पर विशेष तौर पर सराहे जाते थे। आज भी उनके द्वारा गोष्ठियों में अनूठे अंदाज़ में प्रस्तुत किए गए गीत अवचेतन में जस के तस हैं। दूर से आता हुआ स्वर हिरण की तरह मन को अपनी ओर खींचता है। ऐसे लगता है जैसे अर्चन जी गा रहे हैं ...

लघुकथा

दीपक कुमार

"है तो भाई न"

शिवरतन ने कुछ चुनिंदा लोगों के लिए मछली भात का प्रोग्राम रखा। संयोग से उन चुनिंदा जनों में मैं भी शामिल था। दस बारह लोगों को खिलाने में मुझे पूरा यकीन है कि उसकी दो दिन की दिहाड़ी खर्च हो गयी होगी।
खाने की पाँत पर बैठते ही एक शख्स ने कहा, 'कुछ लिक्विड की व्यवस्था होती साथ में तो मछली खाने का मजा आ जाता।'
शिवरतन झट से एक पाँच लीटर का डिब्बा उठा लाया। बोला, 'सबेरे-सबेरे ही ताजपुर से पाँच लीटर महुआ उठा लाया हूँ।
थोड़ी ही देर में वातावरण मछली और महुए की महक से गुलजार हो गया।
खाते-खाते मैने पूछा, 'शिवरतन तुमने बताया नहीं, आखिर ये भोज किस खुशी में?'
शिवरतन बोला,' भतीजा हुआ है। मेरा जो छोटका भाई है न, डोमन उसको तीन लड़की के बाद भगवान ने लड़का दिया है।'
मैने विस्मय से कहा, 'लेकिन उससे तो तुम्हारी लड़ाई है। वो तुमसे अलग है। सुना है बातचीत भी बंद है तुम दोनों में। '
शिवरतन बोला,' ठीक सुने हैं मालिक। हमारी आपस में ताकातकी तक नहीं। '
मैने पूछा,' तो ऐसे भाई के घर बेटा होने पर तुम काहे उतावले होकर खर्च कर बैठे? दो दिन की मजदूरी उड़ा बैठे मछली भात पर। '
शिवरतन ने एकदम निर्दोष सा जवाब दिया,' कुछो हो मालिक, ससुरा है तो मेरा भाई न।'

"अल्जाइमर"

कैसे मैंने उनके दस हजार रूपए उड़ा लिये, बाबूजी को आज तक पता ही नहीं चला। वो बेचारे अपनी यादाश्त को कोस रहे हैं। माँ का भी वही हाल है। संदूक की चाबी कहीं भी भूल जाती है। दिन भर खोजती है और बाद में पता चलता है कि चाबी तो उसके पल्लू में ही थी।

चुपके से किसी दिन चाबी निकालकर संदूक से माँ के गहने उड़ा लेना। बेटी दामाद और बेटों के भ्रम में पड़ी माँ को कभी याद नहीं आएगा कि उसने गहने किसको दिये हैं.....
इससे पहले कि भाई, भौजाई, बहन और जीजा कुछ सोचें, हमें माँ के अल्जाइमर का फायदा उठा लेना है।

"चिंता"

पापा की अलग चिंता है-
पढाया, लिखाया और इस काबिल बनाया कि अपने पैरों पर खड़ी हो सके और देखो शादी होते ही बेटी बदल गयी। पूरी सैलरी पति को देने लगी। वाह! उसकी पढाई लिखाई और शादी पर लाखों रूपये जो मैंने खर्च किये उसका क्या?
पति को अलग चिंता है-
अरे! तुम तो शादी के चार साल पहले से जाॅब कर रही हो? कुछ भी बचाकर नहीं लायी? इतने सालों की सैलरी मायके में दे आयी? मुर्ख हो क्या? पता नहीं था कि पति का घर ही औरत का असली घर होता है? भविष्य की तनिक भी चिंता नहीं थी?
और इन दो लोगों की चिंताओं के बीच पूजा की अलग चिंता थी कि उसकी चिंता किसे है, पापा को या पति को?

आलेख

"कबीर और तुलसी को बाँटने वाले नासमझ हैं"

संत कबीर के जन्म के बारे में प्रचलित कहानियों का निचोड़ यह है कि ये लहरतारा सरोवर के किनारे पाए गए। एक जुलाहे दम्पत्ति ने इनका लालन- पालन किया और ये भी जुलाहे का काम करने लगे। उस समय काशी जनपद में जुलाहे हिंदू नहीं थे पर अन्य मुसलमानों की तरह कट्टर मुसलमान भी नहीं थे। अर्थात् रोजी-रोटी के जुगाड़ में ये सूत कातने वाले सामान्य सर्वहारा थे। शायद इसीलिए कबीर कभी भी इस्लाम या मुसलमानों से प्रभावित नहीं दिखे। जबकि साधारण मुसलमान अवश्य कबीर से प्रभावित थे। कुछ बड़े होने पर कबीर उस समय के वैष्णव गुरु रामानन्द को गुरु बनाने पर अटल रहे। यदि कबीर का परिवार कट्टर मजहबी होता तो पालित बेटे द्वारा यह सोचना भी सम्भव नहीं था। कबीर ने ब्राह्मणों के घोर विरोध और गुरु रामानन्द द्वारा बार-बार ठुकराए जाने के बाद भी उनको ही गुरु माना। अन्ततः रामानन्द ने कबीर को अपने शिष्यों में प्रथम स्थान दिया।

कबीर जीवन पर्यंत "राम" को जपते रहे और "राम" से परिचय कराने हेतु गुरु महिमा गाते रहे। कबीर अपने पूरे जीवन काल में कभी भी इस्लामिक होना नहीं स्वीकार किए और न ही इस संबंध में उनकी कोई रचना उपलब्ध है। हाँ, उन्होंने कई बार स्वयं को "जुलाहा" बताया। अर्थात् कबीर के लिए जुलाहे उस समय के औसत मुसलमानों से भिन्न थे।

कबीर पर विधर्मियों द्वारा राजद्रोह भी लगाया गया और यातनाएँ भी दी गईं। राजैनैतिक और सामाजिक परिवेश विषैला था। शासक अस्थिर थे। शासन में उथल-पुथल था। मुसलमानों के हाथ में सत्ता और तलवारें थीं। हिंदुओं के मध्य निर्गुण-सगुण और शैव-शाक्त-वैष्णव रूपी भेद थे। हिंदू इन भेदों में न केवल बँटे थे बल्कि त्रिशूल-तलवार-धनुष के साथ भी आपस में भिड़ जाते थे।

संत कबीर ने अनुभव किया कि बाहरी विधर्मियों से हिंदुत्व को बचाए रखने के लिए हिंदुओं को एक होना पड़ेगा। लेकिन हिंदू तो कई तरह से बँटे हुए थे। गौरतलब बात यह थी कि हिंदुओं के सारे पंथ या शाखाएँ मानवतावाद की पोषक थी। सत्य एवं सदाचार की पक्षधर थीं। पुरुषार्थ को मानने वाली थीं। परमपिता को सभी मानते थे। परहित पर सबका जोर था। फिर भेद किस बात का था? भेद था तो केवल "मूर्ति" का। "मूर्ति" ने हिंदुओं को बाँट रखा था। तब कबीर ने निश्चय किया कि "मूर्ति" पूजा का विरोध करके समस्त पंथों से मूर्ति को हटाया जाए और विघटित हिंदुओं को एक सूत्र में बाँधा जाए।

"पाहन पूजे हरि मिलैं, तो मैं पुजूँ पहार।
इससे तो चाकी भली, पीस खाय संसार।।"

कबीर ने लटकती तलवारों के बीच भी इस्लाम के मूल तत्व रोज़ा (में गौहत्या) अजान (में बाग देने) और हज़ (में दूरस्थ काँबा जाने) का उपहास उड़ाया। लोगों को इस्लाम से प्रभावित होने से हतोत्साहित किया। वही कबीर सदैव हिंदुत्व और श्रीराम के प्रति पूरी निष्ठा से आजीवन समर्पित दिखे।

डॉ अवधेश कुमार अवध
साहित्यकार व अभियंता
संपर्क 8787573644
awadhesh.gvil@gmail.com

कबीर का हिंदू-एकता का कार्य कमोबेश अप्रत्यक्ष चलता रहा। मुगलकाल के नरभक्षी शासन व्यवस्था में इससे स्पष्ट कोई बोल भी नहीं सकता था। कबीर ने एकता का बीजारोपण किया था। कालान्तर में अकबर का समय आने पर मध्य भारत में स्थितियाँ काफी सहज थीं। गोस्वामी तुलसीदास को सहज और सुगम परिवेश मिला। कबीर द्वारा बोये गए बीज को तुलसी ने "रामचरित मानस" रचकर विशाल वृक्ष बना दिया। बालकाण्ड में तुलसी जी ने सगुण और निर्गुण के बीच की खाईं पाटकर एकीकरण किया।

"सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा।।"

इसके आगे तुलसीदास जी ने स्पष्ट कहा कि भक्तों के लिए वह निर्गुण ही सगुण है।

"अगुन अरूप अलख अज जोई।
भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।"

बालकाण्ड में ही तुलसीदास जी सुकुमारी सीता द्वारा गौरा पूजन कराते हुए शाक्त और वैष्णव को एक करते हैं।

"सेवत तोहि सुलभ फल चारी।
बरदायनी पुरारि पियारी।।
देवि पूजि पद कमल तुम्हारे।
सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे।।"

लंकाकाण्ड में तुलसीदास जी वैष्णव शैव का एकीकरण करते हैं।

"सिव द्रोही मम भगत कहावा।
सो नर सपनेहुँ मोहि न भावा।।
संकर विमुख भगति चह मोरी।
सो नारकी मूढ़ मति थोरी।।"

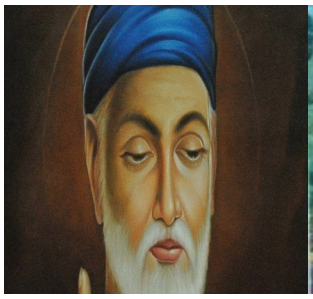

कबीर और तुलसी को बाँटने वाले नासमझ हैं
कबीर के उद्देश्य को तुलसी ने पूर्ण किया
कबीर और तुलसी दोनों हिंदुत्व के पोषक थे

इसके अतिरिक्त भी तुलसीदास ने रामचरित मानस में बिखरे हिंदुओं का बहुविधि से समन्वय किया है। कबीर के रहस्य को जगजाहिर किया है। अद्वैत और द्वैत का एकाकार किया है। लोक और शास्त्र को जोड़ा है। गृहस्थ और वैराग को मिलाया है। ज्ञानी और भक्त को एकात्म किया है।

अब पुनः विचारणीय है कि इस्लामीकरण और बौद्धिक नक्सलवाद क्यों नहीं हिंदुत्व के पोषक तुलसीदास कृत रामचरित मानस का विरोध करेगा! ध्यान रहे कि ये लोग ही श्रीराम को नकारकर पाँच सौ वर्षों तक सबूत माँगते रहे हैं। अब जबकि राम साबित होकर पुनः प्रतिष्ठित हो गए हैं तो अब रामचरित मानस पर आक्रमण शुरू हुआ है।

आप सभी से करबद्ध निवेदन है कि हिंदुस्तान और हिंदुत्व की सुरक्षा हेतु एक जुटता का परिचय दें। संत कबीर के प्रयोजन को समझें और तुलसीदास की शिक्षाओं का पालन करें। हमारी एक जुटता ही उनके लिए प्रत्युत्तर है। जय श्रीराम। एक दोहा द्रष्टव्य है-

मत बाँटो मूरख जनों, तुलसी और कबीर।
राम नाम के आसरे, जपते हिंदू पीर।।

काव्य

धरती यात्री:

1.
धरती यात्री!
तुम कितनी बार आए
कितनी बार गये, बताओ!
तुमने धरती पर क्या देखा!
.2
धरती यात्री!
मौत शरीर को नहीं खातीं
वह जीवन का भख लेती है।
आदमी कोई मरने के लिए थोड़े ही आता है
धरती पर।
3.
धरती यात्री!
सूर्य उजाले के लिए नहीं उगता
धरती उगाती है उसे, अपनी छाती के जोर से। इसलिए कि
उसे अपने बच्चों के लिए उजाला करना है।
4.
धरती यात्री!
धरतीअंधेरे में नहीं रह सकतीं।
उजाले का सरोजाम वह स्वयं करती हैं।
धरती चलती है...देखती है अंधेरे !
उजाले के लिए स्थान!

इनके लिए!

मैं सड़क पर पैदा हुई
मेरे बच्चे भी सड़क पर जन्में
पिता भी सड़क पर पैदा हुए
मां भी...
वह भी सड़क पर पैदा हुआ
दो बच्चे उसके ...एक दिन वह ले गया उन्हें।
मेरे पास एक और पिता
आ गया
उसका एक बच्चा है।
मांगता है कुछ मेरे...कुछ लोगों के
समाज के ...
पेट भरता है
शाम को मेरे पास आता है,सो जाता है...
चला जाता है...
आप को पता नहीं
सड़क पर कितने बच्चे पैदा हुए...मर गए
हम तीनों भी सड़क पर मरेंगे
श्मशान हमारे लिए नहीं हैं।
सरकार आपकी है, हमारी नहीं।

बी.एल.माली 'अशांत'
जयपुर राजस्थान
302017मो.9414386649

लेख

"भारतीय भाषायी प्रेस के प्रवर्तक,जनजागरण और सामाजिक सुधार आंदोलन के प्रणेता - राजा राममोहन राय"

भारत सरकार ने गत बार 22 मई,1772 को बंगाल के वैष्णव परिवार में जन्मे ब्रह्म समाज के संस्थापक, भारतीय प्रेस के जनक, भारतीय पुनर्जागरण के अग्रदूत और आधुनिक भारत के निर्माता राजा राममोहन राय की २५०वीं जयन्ती बड़े ही धूम धाम से मनायी । इस अवसर को और यादगार बनाने के उद्देश्य से बंगाल के हुबली जिले में आयोजित कार्यक्रम में उपराष्ट्रपति वैंकेया नायडू २५० रुपये मूल्यवर्ग का एक स्मारक सिक्का भी जारी किया था ।

जैसा आप सभी को ज्ञात ही होगा राममोहन राय जी को मुगल शासक बादशाह अकबर द्वितीय ने "राजा" की उपाधि दी थी।इन्हें संस्कृत, बंगाली,गुरुमुखी भाषा का तो ज्ञान था लेकिन वर्ण व्यवस्था विरोध के साथ ईसाई धर्म व मिशनरियों के कार्यों की आलोचना वगैरह से नाराज मद्रास के राजकीय कॉलेज के प्रधानाध्यापक शंकरशास्त्री ने जब इनके धार्मिक विचारों से असहमति जता इन्हें शास्त्रार्थ के लिए ललकारा तब इनको अरबी, फारसी, अंग्रेजी, हिब्रू भाषा वगैरह का वृहद ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक लगा।इसलिये शास्त्रार्थ में सफलता प्राप्त करने के उद्देश्य से पहले तो ये भाषायें सीखीं फिर बाईबल का भी वृहद अध्ययन करने के पश्चात शास्त्रार्थ में सफलता प्राप्त कर काफी नाम व यश कमाया।

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि मूर्तिपूजा का विरोध प्रगट करने के उद्देश्य को ध्यान में रख इन्होंने मात्र 15 वर्ष की उम्र में ही एक पुस्तक प्रकाशित कर जनता को समर्पित कर दी।इसके बाद वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध भी एक पुस्तक लिखी थी।

अपने शुरुआती समय में इन्होंने उस समय की कुछ नामी-गरामी पत्रिकाओं में काम भी किया था और उस दौरान इन्होंने अंग्रेजों की बर्बरता के खिलाफ लेख लिख अपना विरोध सार्वजनिक तौर पर प्रकट करने में पीछे नहीं रहे। इस तरह इन्होंने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की ऐसी नींव रखी जो आज भी समाज में अलख जगाने में बडी ही काम आ रही है।

Raja Ram Mohan Roy

कुछ समय पश्चात जब इन्हें ईस्ट इण्डिया कम्पनी में नौकरी मिल गयी तब वहाँ भी नौकरी करते हुए कभी भी अपने स्वाभिमान, अस्मिता और निडरता से समझौता नहीं किया। उदाहरणार्थ आपको बताता हूँ वह घटना जिसमें भागलपुर के अंग्रेज कलेक्टर सर फ्रेडरिक हैमिल्टन ने इनके साथ बदतमीजी की तब इन्होंने गवर्नर जनरल लॉर्ड मिंटो को विस्तार से पूरी घटना बता केवल लिखीत शिकायत ही दर्ज नहीं करायी बल्कि ये तभी संतुष्ट हुये जब गवर्नर जनरल ने कलेक्टर को कड़ी फटकार तो लगायी ही साथ में उनके किए की माकूल सजा भी दी ।

गोवर्धन दास बिन्नाणी 'राजा बाबू'
जय नारायण व्यास कॉलोनी
बीकानेर
7976870397 / 9829129011[W]

ये राजा राममोहन राय ही थे जिन्होंने बाल विवाह के साथ सती प्रथा के विरोध में अनेक समाज सुधारकों को अपने साथ केवल जोडा ही नहीं बल्कि विभिन्न जगहों पर उन सभी के माध्यम से समाज को जागरूक करने का एक अभियान चलाया था। इसके अलावा इन्होंने

उस समय के गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैटिंग की मदद लेकर सती प्रथा के खिलाफ एक कानून तक बनवा दिया था।

राजा राममोहन राय ने अपने जीवन काल में अनेकों धार्मिक सुधारों के अलावा नारी जाति को अनमेल विवाह, बहुविवाह, सती प्रथा,वेश्यागमन, जातिवाद, अस्पृश्यता आदि जैसे कुरीतियों से मुक्ति दिलाने का यथासम्भव प्रयास किया। आपको यह जानना भी आवश्यक है कि उस समय समुद्र पार कर विदेश जाना एक धार्मिक अपराध माना जाता था लेकिन इन्होंने उस दकियानूसी मान्यता की अनदेखी कर विदेश जाकर उस रुढिवादी परम्परा को समाप्त करने में अग्रणी भूमिका निभाई। इन्हीं सब कारणों के चलते सभी का मानना है कि इनके द्वारा उस समय से चालू की गयी जागरूकता का ही परिणाम है कि आज हम इन सबसे मुक्त हो पाये हैं।

राजा राममोहन राय ने उस समय ही कृषि सुधार जिसमें लगान कम करना वगैरह के साथ प्रशासनिक व्यय कम करने पर सभी को एकजुट राय बना, कार्यान्वित करवाने में एक महती भूमिका निभाई।

उपरोक्त जैसे और भी अनेक कारण है जिसके चलते अनेक इतिहासकारों ने इनको न केवल "बंगाल पुनर्जागरण का पिता" बल्कि भारत में सही मायने में सुधारवाद का प्रथम प्रवर्तक कहा है।इसी क्रम में आपसभी को बता दूँ कि राष्ट्रगुरु सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने इनको 'भारत में सांविधानिक आन्दोलन का जनक' बताया जबकि नोबेल पुरस्कार विजेता कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने इनको इस शताब्दी का महान पथ निर्माता घोषित किया था।

निष्कर्ष में मुझे यह लिखने में किसी तरह का संकोच नहीं है कि राजा राममोहन राय द्वारा मानवता के लिये किये गये कार्यों के कारण हम सभी भारतवासी उनके हमेशा हमेशा के लिये ऋणी रहेंगे।

काव्य

मैं अंतिम गाँव हूँ...

मैं जिले का अंतिम गाँव हूँ,
जिसका परिचय बदला है
अभी-अभी |
क्या परिचय बदलना
मेरे विकास का सूचक है ?
शायद नहीं |
मेरा पहले भी कई बार,
परिचय बदला
राजनैतिक चालबाजी में |
इस बदले हुए परिचय से,
मैं आहत हूँ,
विवश, बेबस
लाचार हूँ |
अब नहीं तय करना
मुझे किसी ओर जिले का भूगोल |
क्योंकि,
मैं कई वर्षों से,
भूगोल ही तय करता रहा हूँ |
आख़िर क्यों ?
बार-बार मेरा परिचयबदला जाता है
शायद इसीलिए,
क्योंकि,
मैं जिले का आख़िरी गाँव हूँ |
अगर बदलना हैं तुम्हें,
तो मेरी दशा बदलो |
मेरी छाती पर बने
भयावह गड्ढों को
सड़कों में बदलो |
मेरे गाँव के गरीबों को
अमीरों में बदलो |
मेरे अर्धनग्न लोगों को,
रंगीन वस्त्रों में बदलो |
वीरान, बंजर भूमि को
हरे-भरे खेतों में बदलो |
झुग्गी-झोंपड़ियों को
पक्के मकानों में बदलो |
मेरी सीमा बदलनें से
कुछ नहीं होगा |
मेरा अनुरोध हैइन सरकारों से
मेरा बार-बारपरिचय न बदलो ....

ताराचंद कुमावत
शोधार्थी कोटा विश्वविद्यालय

लेख

सलिल सरोज

विधायी अधिकारी

नयी दिल्ली

"भारतीय संविधान हर भारतीय के सपने को सशक्त बनाता है"

भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद, संविधान निर्माताओं का सपना शासन के ऐसे व्यवहार्य मॉडल को विकसित करने का था जो लोगों की प्रधानता को केंद्र में रखते हुए राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा करे। यह संविधान के निर्माताओं की दूरदर्शिता और दूरदर्शी नेतृत्व है जिसने देश को एक उत्कृष्ट संविधान प्रदान किया है जिसने पिछले सात दशकों में राष्ट्र के लिए एक प्रकाश स्तंभ के रूप में काम किया है। देश लोकतांत्रिक प्रणाली की सफलता के लिए भारत के संविधान द्वारा निर्धारित मजबूत इमारत और संस्थागत ढांचे के लिए बहुत अधिक ऋणी है। हमारा संविधान भारत को एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने का संकल्प है। वास्तव में, यह लोगों को सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक न्याय, स्वतंत्रता और समानता हासिल करने का वादा है; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, आस्था और पूजा की स्वतंत्रता; स्थिति और अवसर की समानता; और सभी के बीच - भाईचारे को बढ़ावा देना, व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता को सुनिश्चित करना। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने बहुत स्पष्ट रूप से विभिन्न प्रतिबद्धताओं को रेखांकित करते हुए मुख्य अपेक्षाओं को रेखांकित किया। उन्होंने कहा: "संविधान तैयार करने में हमारा उद्देश्य दो गुना है: राजनीतिक लोकतंत्र के रूप को निर्धारित करना, और यह निर्धारित करना कि हमारा आदर्श आर्थिक लोकतंत्र है और यह भी निर्धारित करना है कि प्रत्येक सरकार, जो भी सत्ता में है, प्रयास करेगी आर्थिक लोकतंत्र लाने की..."

भारत का संविधान राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक लोकतंत्र के लिए एक संरचना प्रदान करता है। यह शांतिपूर्ण और लोकतांत्रिक तरीकों से विभिन्न राष्ट्रीय लक्ष्यों पर जोर देने, सुनिश्चित करने और प्राप्त करने के लिए भारत के लोगों की प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। यह केवल कानूनी पांडुलिपि नहीं है; बल्कि, यह एक ऐसा वाहन है जो समय की बदलती जरूरतों और वास्तविकताओं को समायोजित और अनुकूलित करके लोगों के सपनों और आकांक्षाओं को साकार करने के लिए देश को आगे बढ़ाता है। भारत को राज्यों के संघ के रूप में बनाना, कानून के समक्ष समानता और कानूनों की समान सुरक्षा संविधान का

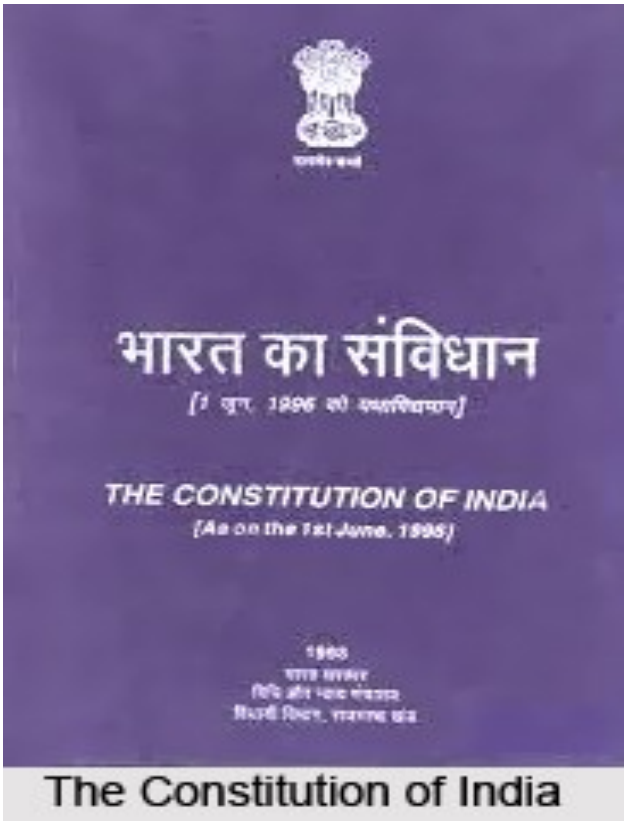

The Constitution of India

सार है। साथ ही, संविधान समाज के वंचित और वंचित वर्गों की जरूरतों और चिंताओं के प्रति भी संवेदनशील है।

29 अगस्त 1947 को, मसौदा संविधान की तैयारी के लिए डॉ बी आर अम्बेडकर की अध्यक्षता में संविधान सभा द्वारा मसौदा समिति का चुनाव किया गया था। संविधान सभा स्वतंत्र भारत के लिए एक संविधान का मसौदा तैयार करने के महान कार्य को सटीक रूप से तीन साल से भी कम समय में पूरा करने में सक्षम थी - दो साल, ग्यारह महीने और सत्रह दिन। उन्होंने 90,000 शब्दों में हाथ से लिखा हुआ एक बढ़िया दस्तावेज़ तैयार किया। 26 नवंबर 1949 को, यह भारत के लोगों की ओर से गर्व से घोषणा कर सकता है कि हम एतद्वारा इस संविधान को अपनाते हैं, इसे लागू करते हैं और खुद को देते हैं। कुल मिलाकर, 284

सदस्यों ने वास्तव में संविधान के पारित होने के रूप में अपने हस्ताक्षर किए। मूल संविधान में एक प्रस्तावना, 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां शामिल हैं। नागरिकता, चुनाव, अनंतिम संसद, अस्थायी और संक्रमणकालीन प्रावधानों से संबंधित प्रावधानों को तत्काल प्रभाव से लागू कर दिया गया। भारत का शेष संविधान 26 जनवरी 1950 को लागू हुआ। उस दिन, संविधान सभा का अस्तित्व समाप्त हो गया, 1952 में एक नई संसद के गठन तक खुद को भारत की अस्थायी संसद में बदल दिया।

भारत के संविधान की प्रस्तावना उन मूलभूत मूल्यों, दर्शन और उद्देश्यों को मूर्त रूप देती है और दर्शाती है जिन पर संविधान आधारित है। संविधान सभा के सदस्य पंडित ठाकुर दास भार्गव ने प्रस्तावना के महत्व को निम्नलिखित शब्दों में अभिव्यक्त किया: "प्रस्तावना संविधान का सबसे कीमती हिस्सा है। यह संविधान की आत्मा है। यह संविधान की कुंजी है।" ... यह संविधान में स्थापित एक गहना है... यह एक उचित पैमाना है जिससे कोई भी संविधान के मूल्य को माप सकता है।"

संविधान, एक लैटिन अभिव्यक्ति में हमारा सुप्रीम लेक्स है। यह लेखों और खंडों के संग्रह से कहीं अधिक है। यह एक प्रेरणादायक दस्तावेज है, हम जिस समाज के आदर्श हैं और यहां तक कि जिस बेहतर समाज के लिए हम प्रयास कर रहे हैं, उसका एक आदर्श है। भारत का संविधान अपनी तह में हमारी सभ्यतागत विरासत के आदर्शों और मूल्यों के साथ-साथ हमारे स्वतंत्रता संग्राम से उत्पन्न विश्वासों और आकांक्षाओं को भी समाहित करता है। संविधान हमारे गणतंत्र के संस्थापक पिता के सामूहिक ज्ञान का प्रतीक है और संक्षेप में, यह भारत के लोगों की संप्रभु इच्छा का प्रतिनिधित्व करता है।

संविधान सभा के विशिष्ट सदस्यों के साथ-साथ संविधान की मसौदा समिति द्वारा किए गए अथक प्रयासों ने हमें एक ऐसा संविधान विरासत में दिया है जो समय की कसौटी पर खरा उतरा है। उन्होंने शानदार तरीके से शासन की एक अनूठी योजना तैयार की, जो न केवल सरकार के एक लोकतांत्रिक स्वरूप के लिए बल्कि एक समावेशी समाज के लिए भी उपलब्ध कराती है। इस तरह के एक संपूर्ण दस्तावेज को रखने का उद्देश्य, यहां तक कि न्यूनतम विवरण भी शामिल है, सिस्टम में निश्चितता और स्थिरता को बढ़ावा देना है। संविधान द्वारा परिकल्पित मुख्य लक्ष्य जीवन रेखा के रूप में जवाबदेही के साथ गरिमापूर्ण मानव अस्तित्व और सभी की भलाई के लिए एक कल्याणकारी राज्य की शर्त है।

भारत का संविधान जो समय-समय पर चुनावों का प्रावधान करता है, प्रतिनिधियों के एक समूह से दूसरे समूह को राजनीतिक सत्ता का लोकतांत्रिक हस्तांतरण सुनिश्चित करता है। पिछले कुछ वर्षों में, निस्संदेह भारत में लोकतंत्र और गहरा हुआ है। लोक सभा के सत्रह आम चुनाव और राज्य विधानमंडलों के लिए अब तक हुए तीन सौ से अधिक चुनाव लोगों की बढ़ी हुई भागीदारी के साथ हमारे लोकतंत्र के सफल कामकाज की गवाही देते हैं। निस्संदेह, भारतीय मतदाताओं ने परिपक्वता प्रदर्शित की है जिसने इसे दुनिया भर से प्रशंसा दिलाई है।

भारत में लोकतंत्र परिपक्व हो चुका है, और सभी बाधाओं के बावजूद, हमने अपनी संसदीय प्रणाली को बनाए रखा है। राजनीतिक स्थिरता, पिछले कुछ वर्षों में, भारतीय मतदाताओं और राजनीतिक व्यवस्था की परिपक्वता की साक्षी रही है। 1.2 बिलियन से अधिक लोगों के साथ दुनिया के दूसरे सबसे बड़े आबादी वाले देश के रूप में, वास्तविक चुनौती भाषा, धर्म, क्षेत्र, जाति, संस्कृति, जातीयता और अन्य कारकों के आधार पर लोगों की असंख्य पहचानों को संरक्षित और संरक्षित करना है। उदार राजनीतिक प्रणाली और उत्तरदायी लोकतांत्रिक संस्थानों ने विविधता में एकता और लोगों के बीच समावेश की भावना को सुरक्षित करने में अच्छा प्रदर्शन किया है। वास्तव में, यह हमारी बहुदलीय प्रणाली है जो लोगों की अधिक राजनीतिक भागीदारी को प्रोत्साहित करती है और भारतीय जनता की विविधता और बहुलता को प्रतिबिंबित करती है।

राजनीतिक संस्थाएँ और ढाँचे न केवल समाज को प्रतिबिंबित करते हैं, बल्कि वे इसे प्रभावित और परिवर्तित भी करते हैं। इस संदर्भ में, भारत की संसद सामाजिक परिवर्तन लाने और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन को प्रभावित करने में प्रत्यक्ष और कंडीशनिंग की भूमिका निभाती है। लोगों की सर्वोच्च प्रतिनिधि संस्था होने के नाते, संसद सभी सरकारी गतिविधियों की जीवन रेखा है।

समग्र रूप से संसदीय गतिविधि - कानून बनाना, वित्त को नियंत्रित करना और कार्यकारी शाखा की देखरेख - विकास के पूरे स्पेक्ट्रम को कवर करती है। यह सदन के पटल पर है कि कुछ प्राथमिक प्रक्रियाओं को गति दी जाती है जो सार्वजनिक जीवन में व्यवस्थित परिवर्तन और नवाचारों का रास्ता खोलने की क्षमता रखती हैं। चूँकि सरकार के संसदीय स्वरूप में कार्यपालिका विधायिका का निर्माण है और विधायिका कार्यपालिका पर नियंत्रण रखती है, कोई भी सरकार विधायिका द्वारा दिए गए निर्देशों की अनदेखी नहीं कर सकती है।

एक के बाद एक आने वाली सरकारों ने विभिन्न विधानों और नीतिगत हस्तक्षेपों के माध्यम से एक कल्याणकारी राज्य की सुविधा के लिए संविधान के निर्माताओं के सपने को साकार करने का प्रयास किया है। परिणामस्वरूप, हमने बहुत कुछ हासिल किया है और कई क्षेत्रों में सफल हुए हैं; फिर भी, ऐसे कई अन्य क्षेत्र हैं जिन पर अभी भी ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। महिलाओं के सशक्तिकरण, बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष जोर, स्वच्छ भारत मिशन, नागरिकों को वित्तीय और अन्य सब्सिडी, लाभ और सेवाओं का सीधा हस्तांतरण, गरीबों के लिए बैंकिंग सुविधाओं में वृद्धि और जो बैंकिंग द्वारा कवर नहीं किए गए थे, जैसे नीतिगत हस्तक्षेप प्रणाली, किसानों के लाभ के लिए नीतियां और कार्यक्रम, वंचित लोगों के लिए सामाजिक सुरक्षा योजनाएं आदि संविधान निर्माताओं के सपने को साकार करने में काफी मददगार साबित होंगी। महात्मा गांधी ने भारत की विशिष्ट और विशेष परिस्थितियों पर लागू सार्वभौमिक मूल्यों के संदर्भ में भारत के नए संविधान की कल्पना की थी। 1931 की शुरुआत में, गांधीजी ने लिखा था: "मैं एक ऐसे संविधान के लिए प्रयास करूँगा जो भारत को गुलामी और संरक्षण से मुक्त करेगा। मैं एक ऐसे भारत के लिए काम करूंगा जिसमें गरीब से गरीब यह महसूस करे कि यह उनका देश है जिसके निर्माण में उनकी एक प्रभावी आवाज है: एक ऐसा भारत जिसमें कोई उच्च वर्ग या निम्न वर्ग के लोग नहीं हैं, एक ऐसा भारत जिसमें सभी समुदाय एक साथ रहेंगे सही सामंजस्य। ऐसे भारत में छुआछूत के अभिशाप के लिए कोई जगह नहीं हो सकती। हम शांति से रहेंगे और बाकी दुनिया न तो शोषण करेगी और न ही शोषित... यह मेरे सपनों का भारत है जिसके लिए मैं संघर्ष करूंगा।"

संविधान लोगों को उतना ही सशक्त बनाता है जितना कि लोग संविधान को सशक्त करते हैं। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने बहुत अच्छी तरह से महसूस किया कि एक संविधान, चाहे वह कितना भी अच्छा लिखा गया हो और कितना विस्तृत हो, इसे लागू करने और इसके मूल्यों के अनुसार जीने के लिए सही लोगों के बिना बहुत कम सार्थक होगा। और इसमें उन्होंने आने वाली पीढ़ियों में अपना विश्वास दर्शाया है।

काव्य

पिंकी सिंघल
दिल्ली

महंगाई

छूटे सारे शौक घटती कमाई मार गई
भूले सारे स्वाद रसोई की रुलाई मार गई
कुछ न पूछो दोस्तों कि हमको क्या हुआ
हमको तो निगोड़ी महंगाई मार गई

नित बढ़ते सारे टैक्स की अदाई मार गई
अपना घर भरते नेताओं की बेहयाई मार गई
हमें खुद समझ न आए कि हमको क्या हुआ
हमको तो निगोड़ी महंगाई मार गई

खत्म हुआ कोरोना तो युद्धों की लड़ाई मार गई
बढ़ती रईसी मुफलिसी की ये खाई मार गई
पूछे आज हर कोई हमसे कि तुमको क्या हुआ
हमको तो निगोड़ी ये महंगाई मार गई

बिगड़ते हुए बजट की रुसवाई मार गई
महंगे पेट्रोल डीजल गैस की चतुराई मार गई
अब क्या बताए किसी को कि हमको क्या हुआ
हमको हाय निगोड़ी महंगाई मार गई

बढ़ते फैशन घटते संस्कार की दुहाई मार गई
बच्चों को मिशन बुनियाद की पढ़ाई मार गई
अब तो समझ गए न कि हमको क्या हुआ
हां हमको यही निगोड़ी महंगाई मार गई

नित बढ़ रहे प्रदूषण की अकुलाई (मन:स्थिति) मार गई
कटते रोज़ जंगलों की चीख ओ चिल्लाई मार गई
न पूछो हालत हमारी अब हुआ जो हुआ
बेरहम निगोड़ी हमको महंगाई मार गई

छूटे काम धंधे बेरोजगारी की वफ़ाई मार गई
भूखे बिलखते मजदूरों की कुलबुलाई(व्याकुलता) मार गई
बस हम न कह सकेंगे अब कि हमको क्या हुआ
बेदर्द निगोड़ी हमको महंगाई मार गई

लेख

"क्रांति ज्योति की मशाल थे महात्मा ज्योतिबा फुले"

19वीं शताब्दी में ज्योतिबा फुले एक महान समाज सुधारक थे जिन्होंने भारत की जनता मैं बिलखती लड़खड़ाती मानवता को संबल प्रदान कर पशुता का जीवन यापन करने वाले इंसानों के आंसू पोछने ने का पुनीत कार्य किया था।उन्होंने अंग्रेजों के गुलाम भारत की जनता को दशा और दिशा बदलने का काम किया। भारत में इंसान को बांटने वाली प्रथा जाती- पाती, छुआछूत जैसी कुप्रथा डटकर, तर्कपूर्ण भाषा एवं कार्यशैली से बदलाव भरा चुनौतीपूर्ण बीड़ा उठाकर सामाजिक विकास का सूत्रपात किया। उन्होंने सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने, महिलाओं को अधिकार प्रदान करने और किसानों की बुरी दशा को सुधारने का उल्लेखनीय कार्य किया था। उनके समय में भारतीय समाज अंधविश्वास की घोर अंधेरी काली रात मैं बेसुध थी। घोर अंधविश्वास में जकड़ा हुआ समाज था। ऐसे समय में महाराष्ट्र की धरती पर ज्योतिराव जैसे महान समाज सुधारक का जन्म हुआ। उनका पूरा नाम ज्योतिराव गोविंदराव फुले था। किंतु उन्हें महात्मा ज्योतिबा फुले के नाम से लोकप्रियता मिली। ज्योतिराव फुले का जन्म 11 अप्रैल 1827 में पुना में हुआ था। महाराष्ट्र के कोल्हापुर के पास एक पहाड़ी पर महाराष्ट्र के बहुजन समाज के देवता "ज्योतिबा/जोतबा" का मंदिर था। वहां की प्रमुखता जोत से थी। मराठों के बहुत से ग्रामों में "जोत" कुल देवता का नाम है। महात्मा फुले के जन्म दिवस पर इस देवता का उत्सव था इसलिए उनका नाम ज्योति राव रखा गया था। दीपक की लौ से उत्पन्न ज्योति से है। जो उन्होंने अपने जीवन में सार्थक भी किया; दीपक की ज्योति के समान। उनके जन्म के 9माह बाद मां चिमणाबाई का स्वर्गवास हो गया था।समझदार पिता गोविंद राम ने दूसरा विवाह न करने का संकल्प लेकर अपने पुत्र राजाराम तथा ज्योतिराव का पालन- पोषण हेतु ज्योतिराव की विधवा मौसेरी बहन सगुनाबाई के जिम्मे दिया गया।1847 वर्ष की उम्र में जोतीराव की एक मराठी पाठशाला में दाखिला करवाया गया। चौथी कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त करने के बाद कुछ हिंदू धर्म ठेकेदारों ने पिता गोविंदराव को धर्म विरुद्ध बताकर 12 वर्षीय ज्योति राव को स्कूली शिक्षा से वंचित कर दिया। 13 वर्ष की आयु में 1840 में ज्योतिराव का बाल विवाह सातारा जिले की 9 वर्ष की सावित्रीबाई से कर दिया गया। उस समय बाल विवाह होना आम बात थी। सावित्रीबाई एक सच्ची जीवनसंगिनी, प्रेरणा स्रोत एवं प्रतिछाया की मूर्ति थी। ज्योति राव बचपन से ही मानवता प्रेमी और बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनकी विलक्षण प्रतिभा एवं तार्किकता को देखते हुए उनके पड़ोसी उनके पिता को पढ़ाने के लिए कहने लगे तब पिता गोविंदराव जी फुले ने 1841 में 14 वर्ष की आयु में जोतीराव को पुनः पढ़ने हेतु बुधवार बाड़ा स्थित स्कॉटीश मिशन की सरकारी पाठशाला में प्रवेश दिला दिया।उन्होंने मन से पढ़ाई की तथा स्कूली शिक्षा के साथ धार्मिक ग्रंथों की गहराई से पढ़ना जारी रखा।

1848 की एक घटना ने उन्हें क्रांतिकारी बना दिया।ज्योतिराव के सहपाठी एवं अंतरंग ब्राह्मण मित्र सखाराम के निमंत्रण पर उनकी बरात में जा रहे थे तब ब्राह्मण जाति के लोगों को बुरा लगा।एक ब्राह्मण ज्योतिबा

डॉ. कान्ति लाल यादव

(युवा समाजसेवी एवं साहित्य सेवी)

साहचर्य माधव एवं विभागाध्यक्ष हिंदी

माधव विश्वविद्यालय पिंडवाड़ा, सिरोही (राज.)

मोबाइल- 8955560773

को डाटने लगा -"शुद्र होकर ब्राह्मण दूल्हे की बारात में चल रहे हो! तुम यहां से एक तरफ हटो!"नन्हे ज्योति राव को बुरी तरह से प्रताड़ित किया। ज्योतिराव को बहुत बुरा लगा और वे वहां से अपने घर लौट आए तब पिताजी को इस घटना को बताने पर पिताजी ने भी उन्हें ही डांटा कि "तुम ऊंची जाति की बरात में क्यों गए ? दोष उनका नहीं तुम्हारा है।" उनके मन में बार-बार प्रश्न उठ रहा था - कैसे कोई उच्च जाति का और एक नीच जाति हो सकता है। इंसान अपने कर्म से कुछ और नहीं होता है। इस घटना ने ज्योतिबा के मन मस्तिष्क में विद्रोह के बीज को बो दिया। इस अपमान की वजह से उन्होंने जाति प्रथा को जड़ से खत्म करने का संकल्प लिया।

ज्योतिबा फुले जाति व्यवस्था को मानवता के लिए घातक मानते थे जो इंसान इंसान को अलग करने वाला दुश्मन एवं जहर है। उनका कहना था कि चालाक मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण करने की व्यवस्था है।

ज्योतिबा को ईसाई धर्म में व्याप्त मानवतावाद ने बचपन में बेहद प्रभावित किया। बचपन में उन पर थॉमस पेन की पुस्तक 'राइट्स ऑफ मैन' का अत्यधिक प्रभाव पड़ा। जिसमें न्याय और मानवता का दिग्दर्शन हुआ। अमेरिका में विद्यमान नीग्रो गुलामी के तीव्र विरोध का वर्णन पढ़ने को मिला। थॉमस पेन के तीनों सिद्धान्तों से वे बेहद प्रभावित हुए। जो उनके जीवन पर्यंत प्रेरणादायी बने रहे - मानवता का सम्मान, व्यक्तिगत स्वतंत्रता का आग्रह और गुलामी को धिक्कार। उन्होंने नारी को पुरुष के बराबर का हक दिलाने हेतु स्त्री अधिकारों का जोरदार समर्थन किया। वे सदा स्त्री-पुरुष में बराबरी का दर्जा दिलाने हेतु सदा स्त्री अधिकार के लिए हिमायती ् रहे।

प्रबुद्ध समाज के निर्माण हेतु उन्होंने मानसिक विकलांगता से ग्रसित समाज को जड़ से उखाड़ फेंकने का भरसक प्रयास किया और उसमें काफी हद तक वे सफल भी रहे।वे कहते थे -"मनुष्य के लिए समाज सेवा से बढ़कर कोई धर्म नहीं है । इससे अच्छी समाज सेवा हो ही नहीं सकती।" वें राजनीतिक गुलामी से ज्यादा सामाजिक गुलामी को घातक मानते थे। उनका मानना था कि सामाजिक बुराइयों एवं असमानता के कारण अशिक्षा, धार्मिक अंधविश्वास, गरीबी, छुआछूत को मानते थे। वे बालिकाओं के लिए पाठशाला खोलने वाले प्रथम भारतीय थे। जनवरी 1848 पुना में भिंडे के मकान में प्रथम बालिका पाठशाला खोली थी। 1855 में उन्होंने रात्रि पाठशाला खोली ताकि कामकाजी लोग पढ़ सके। ऐसी रात्रि में पाठशाला खोलने वाले प्रथम भारतीय थे। दूरदराज के बच्चों के लिए छात्रावास का प्रबंध किया। उनके लिए पुस्तकालय खोला। गरीब छात्रों के लिए सरकार से छात्रवृत्ति देने की सुझाव दिए। व्यवसायिक शिक्षा की पहल की।सन 1882 में हंटर कमीशन को 12 वर्ष तक के बच्चों को नि:शुल्क शिक्षा की सिफारिश की। उन्होंने 1863 में 'बाल हत्या प्रतिबंध गृह' खोला। इसी बीच उन्होंने कठिनाइयों का सामना किया। ज्योतिबा फुले ने विधवा ब्राह्मणी काशीबाई नाम की महिला के पुत्र को गोद लिया और उसे पढ़ा कर डॉक्टर बनाया। उसका नाम यशवंत रखा।बाद में ज्योतिबा का उत्तराधिकारी बना।

11 मई 1888 को मुंबई के मांडवी नामक स्थान पर कोलीवाडा सभागृह में बेठेकर की अध्यक्षता में तथा विशाल जनसमुह के बीच में उन्हें "महात्मा" की उपाधि प्रदान की गई थी। आधुनिक भारत में ज्योतिबा फुले को सबसे पहले "महात्मा की उपाधि" से नवाजा गया था। वे विश्व महामानव थे। युग प्रवर्तक थे। कोल्हापुर नरेश ने उन्हें "मार्टिन लूथर" की उपाधि दी थी। महात्मा गांधी ने उन्हें "असली महात्मा" कहा था। डॉक्टर अंबेडकर उन्हें अपना तीसरा गुरु के रूप में मानते थे। डॉ. आंबेडकर उनसे काफी प्रभावित थे।

वे बुद्धिमान, बेहतरीन लेखक थे। महान विचारक दार्शनिक क्रांतिकारी कार्यकर्ता संपादक एवं क्रांतीज्योती की मशाल थे। उन्होंने गुलामगिरी, छत्रपति शिवाजी, राजा भोसले का पखड़ा, किसान का कोड़ा, तृतीय रत्न, अछूतों की कैफियत आदि प्रमुख ग्रंथ लिखे। 1877 में 'दीनबंधु' नाम का साप्ताहिक समाचार पत्र का प्रकाशन भी किया था।

वे इस बात को अच्छी तरह समझते थे कि सामाजिक असमान तो पूरी तरह खत्म किया जाए ,इसके लिए एकमात्र मंत्र "शिक्षा प्राप्ति" ही है।

अछूत बच्चों को पढ़ने हेतु उन्होंने 1848 में प्रथम पाठशाला में बुधवारपेठ में खोली थी

उन्होंने सर्वप्रथम स्त्री शिक्षा हेतु 1857 में 4 बालिकाओं से विद्यालय प्रारंभ किया। उन्हें घर छोड़ने के लिए बाध्य किया गया किंतु उन्होंने जरा भी परवाह नहीं की और अपने लक्ष्य पर अडिग रहे। महात्मा फुले प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने स्त्री शिक्षा एवं नारी मुक्ति की आवाज उठाई थी। उन्होंने बालिकाओं को पढ़ाने के लिए अपनी पत्नी सावित्रीबाई फुले को पढ़ा लिखाकर तैयार किया। उन्हें भारत की प्रथम शिक्षिका का गौरव प्राप्त हुआ। सावित्री बाई जब पाठशाला में पढ़ाने जाती थी तब कट्टरपंथी लोग उन पर ताने कसते, कीचड़, गोबर ,विष्ठा फैंकते और गालियां देते किन्तु उन्होंने कभी हार नहीं मानी। उनका मानना था कि समाज में बदलाव लाने की शुरुआत घर से होनी चाहिए।ज्योतिबा के पड़ोसी उर्दू फारसी के अध्यापक मुंशी गफ्फार बैग ने उनकी हमेशा सहायता की।उनकी बेटी फातिमा आगे चलकर ज्योतिबा की पाठशाला में प्रथम मुस्लिम शिक्षिका बनी। 1852 में उन्होंने अछूतों के लिए पाठशाला खोली।

वे बिना वेतन भी 4 घंटे पढ़ाते थे। भारत में अछूतों के लिए प्रथम पाठशाला और पुस्तकालय खोलने का श्रेय भी उन्हीं को जाता है। उन्होंने अट्ठारह पाठशाला खोली थी। हैदराबाद के कर्नल टायलर ज्योतिबा को महिला शिक्षा आंदोलन, समाज सुधार और जागृति का जनक मानते थे। उन्होंने ने 1854 में विधवाओं के लिए आश्रम भी बनवाया तथा अवैध बाल शिशु गृह की स्थापना की । 1855 में उन्होंने रात्रि पाठशाला खोली।मैकाले की शिक्षा नीति का उन्होंने विरोध किया था और कहा था कि -"यह शिक्षा सिर्फ उच्च वर्ग के लोगों तक ही सीमित है।" उस दरमियां जॉर्ज पंचम और विक्टोरिया के गीत गाए जा रहे थे तथा हिंदू अंग्रेज एकता के नारे लगाए जा रहे थे तब उन्होंने भरी सभा में अंग्रेजों के सामने कविता पढ़ी-" दादी मां हम बहुत खुश हैं परंतु उन्नीस करोड़ अशिक्षित हैं।"

उन्होंने सर्वप्रथम प्राकृतिक आपदाओं के समय पीड़ितों को आर्थिक सहायतार्थ राहत कोष की व्यवस्था की थी।उन्होंने सरकारी पदों पर शिक्षकों की योग्यता को ध्यान में रखते हुए निर्धारण की सिफारिश की तथा भारतीय कृषि को आधुनिक कृषि हेतु सरकार इंग्लैंड भेजकर नई कृषि तकनीक सिखाने का सुझाव दिया तथा उन्होंने 1883 में ड्युयूक अॉफ कनॉट

को कृषि को की दयनीय हालात से अवगत कराया। उन्होंने श्रमिकों की दीन दशा को देखते हुए उनके सहयोग से समाजसेवी लोखंडे ने 'श्रमिक संगठन' बनाया था।

1868 में अपने कुएं को सार्वजनिक रूप से अछूतों के हितार्थ वर्षों से प्रतिबंधित छुआछूत की कारा को तोड़ा । 1868 में ही अपने पिता की मृत्यु पर अंतिम संस्कार और श्राद्ध पर पुरोहितों को दिया जाने वाला दान को गरीबों, तथा जरूरतमंदों में बांट दिया। छात्रों को पुस्तकें बांटी। आज के दौर में इनके विचार कितने प्रासंगिक है।

उन्होंने बिना पंडित के विवाह संपन्न किए । इसके लिए उन्होंने कानूनी लड़ाई भी लड़ी।

महात्मा ज्योतिबा फुले विधवाओं की स्थिति को देखकर बहुत द्रवित होते थे । उन्होंने विधवाओं के बाल कटवाने

जैसी (केशवपन) घृणित प्रथा के विरोध में आवाज उठाई थी उन्होंने पूना के नाइयों को एकत्रित कर उन्हें जागृत किया। मुंबई में 500 नाई लोगों को एकत्रित कर इस घृणित प्रथा के प्रति रोष जताकर जागृति लाइ। उन्होंने देवदासी प्रथा (भगवान की मूर्ति के साथ लड़कियों का विवाह करा के देवदासी बनाने की प्रथा) का विरोध किया। उच्च कुल की लड़कियों को भोगदासियां तथा वेश्या व्यवसाय में फंसा दी जाती थी। उन्होंने बाल विवाह एवं बहू विवाह को गैरकानूनी तथा अंतर जाति विवाह एवं विधवा पुनर्विवाह को 1872 में सरकार द्वारा नेटिव एक्ट' पास करवाकर वैध करार दिलवाया। उन्होंने मद्यपान का भी विरोध किया।

1873 में उन्होंने दलितों एवं निर्बल वर्ग के लिए न्याय हेतु "सत्यशोधक समाज" की स्थापना की इस संस्था का मुख्य उद्देश्य पिछड़ी दलित जातियों को शोषण से मुक्त कराने का था। कोल्हापुर के शासक साहू जी महाराज ने इस संस्था की तन मन धन से मदद की थी। इस संस्था की कई मान्यताएं थी -धर्म ग्रंथ प्रमाण नहीं है। कोई भी ग्रंथ ईश्वर निर्मित नहीं है। कोई भी मनुष्य जाति के आधार पर श्रेष्ठ नहीं है बल्कि गुण के आधार पर श्रेष्ठ है। भक्त और भगवान के बीच बिचौलियों की आवश्यकता नहीं है। धार्मिक गुलामी को खत्म करना सभी जातियों के स्त्री-पुरुषों को शिक्षा उपलब्ध कराना।धार्मिक और जाति आधारित उत्पीड़न से मुक्ति दिलाना । बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराना आदि प्रमुख बिंदु थे।

उन्होंने चतुर्वर्णीय जाति व्यवस्था का बहिष्कार किया । उन्होंने मूर्ति पूजा का विरोध किया।

उनकी बेहतरीन कार्यों को देखते हुए तथा बदलते हुए समाज के कारण कुछ लोगों को अच्छा नहीं लगा और उनको मारने का षड्यंत्र रचा।धोडीराम और धोड़ीबा नामक दो अछूत वर्ग के गरीब लड़कों को 1000 ₹ का लालच देकर हत्या करने के लिए भेजा किंतु रात्रि में वे जाग गए । पूछा कौन हो? तुम लोग यहां क्या करने आए हो ? उन्होंने कहा कि हम तुम्हें मारने के लिए आए हैं। तब उन्होंने प्रश्न किया कि मारने के लिए तुम्हें कितने पैसे दिए गए। तब उन्होंने कहां की एक हजार रुपया मिला है। ज्योतिबा फुले ने कहा कि मेरे मरने से तुम्हारा भला होता हो तो इस हजार रुपए से तुम्हारे बच्चों को जरुर पढ़ाना। इतना कहने पर उनका दिल पिघल गया और वह दोनों ज्योतिबा के परम शिष्य बन गए।

1873 में उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'गुलामगिरी' का प्रकाशन हुआ। आज भी यह पुस्तक प्रासंगिक है। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा की भारत यात्रा के दौरान तत्कालीन मुख्यमंत्री छगन भुजबलजी ने मुंबई में इस पुस्तक को भेंट किया था।

वे अपनी पुस्तक किसान का कोड़ा में लिखते हैं, कहते है-

"विद्या बिना मती गई
मती बिना गति गई
गति बिना नीति गई
नीति बिना संपत्ति गई
संपत्ति बिना शुद्र पतित हुए
इतना सारा घोर अनर्थ,
मात्र अविद्या के कारण हुआ।"

ऐसी महान आत्मा महात्मा ज्योतिराव फुले ने जुलाई 1888 में अपना शरीर छोड़ दिया। वे एक महामानव,मानवता के पुजारी न्यायशील, प्रेरक कर्मठ तथा बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी महान समाज सुधारक ,बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे।वे आज भी प्रासंगिक हैं। आदर्श कार्यों से वे जनमानस के दिलों में जिंदा है।अमर हैं।

भारत सरकार द्वारा उन्हें भारत रत्न से नवाजा जाना चाहिए।

लेख

"आज भी महिलाएं अपने कानूनी अधिकारों से अनभिज्ञ हैं"

"यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता" यही हमारी परंपरा रही है!!अर्थात् जहां नारी को पूजा जाता है वहां देवताओं का निवास माना जाता है । और यहां पर पूजा करने का अर्थ है - "नारी का सम्मान" किया जाना ।प्राचीन काल में नारी को समाज में विशिष्ट स्थान प्राप्त था, समय तथा परिस्थितियों के परिवर्तन के कारण महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आया। वैदिक काल में मातृसत्तात्मक व्यवस्था अब पितृसत्तात्मक व्यवस्था मे परिवर्तित हो गई थी। समाज में समय परिवर्तन के साथ-साथ महिलाओं की स्थिति में नकारात्मक परिवर्तन आते गए, समाज में उनकी स्थिति दयनीय होती जा रही थी।

विश्व की आधी आबादी महिलाएं हैं परंतु आज भी उनकी स्थिति दोयम दर्जे की मानी जाती है । जहां आज भी समाज में लड़कों और लड़कियों के लालन-पालन में भेदभाव किया जाता है। समाज में लिंग-भेद जैसे भेदभाव व्याप्त हो वहां पर समानता और महिला अधिकारों की बात करना कितना उचित है? जबकि वास्तविकता कुछ और ही है।आज समाज में देश में महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध जैसे कन्या भ्रूण हत्या, बलात्कार ,दहेज के मामलें,लिंगभेद, शोषण शारीरिक- मानसिक प्रताड़ना, घरेलू हिंसा आदि।

महिलाओं के प्रति बढ़ते अपराध जब तक जड़ से समाप्त नहीं होंगे तब तक सशक्त राष्ट्र की कल्पना करना बेमानी लगता है। किसी राष्ट्र के निर्माण में महिलाओं की भूमिका उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी पुरुष की। महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए समय-समय पर कई महत्वपूर्ण कार्य किए जाते हैं। प्रत्येक वर्ष 8 मार्च अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है। महिला अधिकार की बात करना अथवा महिला दिवस मनाना ।मात्र एक दिन महिला अधिकारों पर चर्चा करना कहां तक उचित है जबकि आज भी महिलाओं की समाज में स्थिति असमानता से भरी हुई है। भारत में महिलाओं को स्वतंत्रता के बाद मतदान का अधिकार पुरुषों के समान दिया गया ।परंतु वास्तविक समानता में महिलाओं की स्थिति गौर करने लायक है, आज हमारे समाज में वे सभी महिलाएं नजर आती हैं जो समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपना एक मुकाम हासिल कर चुकी है और हम सब उन्हीं पर गर्व महसूस करते हैं ।परंतु इस कतार में दूसरी और वह महिलाएं भी सम्मिलित हैं जो हर दिन घर में, समाज में महिला होने के कारण असमानता का दंश झेल रही है। महिला घर में बेटी, पत्नी, मां, बहन के रूप में प्रताड़ित हो रही है, वहीं दूसरी ओर वह घर से बाहर भी छेड़छाड़, बलात्कार जैसे कुकृत्य को सह रही हैं क्योंकि वह एक औरत है सिर्फ इसलिए? यह हमारे लिये विचारणिय है। आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस दौर में भी लड़कियों को बोझ माना जाता है ।कन्या भ्रूण हत्या जैसी गैर कानूनी कृत्य हमारे समक्ष आते हैं और ऐसा तब है जब लड़कियों ने समाज में हर क्षेत्र में हर कदम पर स्वयं को साबित किया है। फिर भी समाज में महिलाओं की स्थिति में उनके प्रति रवैया में ज्यादा फर्क नहीं आया है ।

आज हम महिला सशक्तिकरण की बात करते हैं जिसका वास्तविक अर्थ भौतिक या आध्यात्मिक, शारीरिक या मानसिक सभी स्तर पर महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त करना है। इसके अंतर्गत महिलाओं से जुड़े सामाजिक,आर्थिक ,राजनीतिक और कानूनी मुद्दों पर संवेदनशीलता और सरोकार व्यक्त किए जाते हैं ।आज परिदृश्य बदल रहा है महिलाओं की भागीदारी सभी क्षेत्र में उल्लेखनीय रूप से बढ़ रही है। परंतु अपने क्षेत्र में विशेष उपलब्धियां अर्जित कर महिलाओं के कुछ उदाहरणों से हम संपूर्ण महिलाओं की उन्नति का आकलन नहीं कर सकते। हमारी सरकारों द्वारा भी बेटियों के अधिकारों उनकी सुरक्षा के लिए जागरूकता कार्यक्रमों का एवं योजनाओं का निर्माण करती है,जैसे सेव द गर्ल चाइल्ड, चाइल्ड सेक्स रेशों आदि। बालिकाओं के लिए स्वस्थ्य एवं सुरक्षित वातावरण बनाने एवं बेटी बढ़ेगी तो राष्ट्र बढ़ेगा यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा। क्योंकि बेटी पढ़ लिख कर सिर्फ एक घर एक परिवार को ही आगे नहीं बढ़ाती बल्कि वह

रीना यादव

शोधार्थी, विधि विभाग,
गोविंद गुरु जनजातीय
विश्वविद्यालय ,बांसवाड़ा राजस्थान
मोबाइल नंबर 8824002252
ईमेल reena1982yadav@gmail.com

समाज और राष्ट्र को भी आगे बढ़ाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।आज बेटियां समाज के प्रत्येक क्षेत्र में अपना परचम लहरा रही है। संयुक्त राष्ट्र महासचिव एंटोनियो गुटेरेस ने वर्तमान सदी को महिलाओं के लिए समानता सुनिश्चित करने वाली सदी बनाने का आग्रह किया था। उनका कहना था कि न्याय, समानता तथा मानवाधिकारों के लिए लड़ाई तब तक अधूरी है, जब तक महिलाओं के साथ लैंगिक भेदभाव जारी है।

हमारे समाज में बेटियों को बेटों से कम आंका जाता है। उन्हें अपने जीवन में संघर्षों का बेटों की तुलना में अधिक सामना करना पड़ता है। ऐसा माना जाता है कि व्यक्ति को जीवन में संघर्ष अपने जन्म लेने के बाद करना होता है परंतु बेटियों के मामलें में यह बात सही नहीं है, बेटियों को अपने जन्म से पहले ही, जन्म लेने दिया जाए या न लेने दिया जाए।उन्हें इस संसार में आने के लिए ही संघर्ष करना पड़ता है ।यह हमारे लिए सोचनीय एवं मानवीय स्तर पर यह स्थिति पीड़ादायक है। बेटा और बेटी में अंतर करना ईश्वर द्वारा दिए गए इस जीवन मे भेद करने के समान है।

आज बेटियां आगे बढ़ रही हैं।हमारा यह दायित्व है कि हम बेटियों को पढ़ाऐं और आगे बढ़ाएं। महान राजनीतिज्ञ नेपोलियन बोनापार्ट ने कहा था कि ,"तुम मुझे एक योग्य माता दे दो, मैं तुम्हें एक योग्य राष्ट्र दूंगा"। अर्थात किसी राष्ट्र के विकास में पुरुष और महिला दोनों की समान सहभागिता होती है।

हमारा संविधान भी महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार देता है ।भारतीय संविधान में व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र के संबंध में प्रावधानों का अंतिम लक्ष्य देश के सभी नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक स्वतंत्रता एवं न्याय मिल सके तथा अवसरों की समानता हो और महिलाओं पुरुषों को समान अधिकार मिले। जिससे वह बिना किसी भेदभाव के अपना विकास कर सकें। भारत में महिलाओं के कानूनी अधिकार में समानता हेतु समान वेतन का अधिकार, समान पारिश्रमिक अधिनियम के अनुसार -वेतन एवं मजदूर में लिंग आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता आदि कई समानता के अधिकार प्रमुख हैं।

भारतीय संविधान में महिलाओं के अधिकारों में अनुच्छेद 14 अनुच्छेद 15,अनुच्छेद 16,अनुच्छेद 21, अनुच्छेद 23, अनुच्छेद 40,अनुच्छेद 42,अनुच्छेद 46,अनुच्छेद44 अनुच्छेद 243,अनुच्छेद 325-326 आदि महत्वपूर्ण है। भारत का संविधान विश्व में सबसे अच्छा समानता प्रदान करने वाले दस्तावेजों में से एक है।

भारतीय संविधान के जनक निर्माता डॉक्टर भीमराव अंबेडकर ने महिलाओं के महत्व के संबंध में कहा था कि "अपनी गृहणी अच्छे परिवार से आए ऐसी आशा सभी रखते हैं किंतु जब तक उनके लिए स्वस्थ परिवारों का निर्माण नहीं होगा तब तक अच्छी गृहणी का निर्माण नहीं होगा"।

नारी की उन्नति के साथ ही परिवार की उन्नति का प्रश्न जुड़ा हुआ है ।अतः नारी के महत्व को स्वीकारा जाना चाहिए।

हमारे देश के सरकार ने "बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ" कार्यक्रम की शुरुआत की जो समाज को प्रगति के रास्ते पर ले जाने में एक आधार स्तंभ के रूप में प्रकट होती हैं।

कई योजनाएं जैसे "समग्र बाल विकास सेवा","धनलक्ष्मी योजना", "सबला योजनाएं"आदि। इन सभी योजनाओं का उद्देश्य लड़कियों को खासकर किशोरियों को सशक्त बनाना है ताकि वे आगे चलकर एक बेहतर समाज का निर्माण में योगदान दे सकें।आज हम महिला दिवस मना रहे हैं ,क्या कोई एक दिन ही महिलाओं के लिए विशेष रूप से मना लेने से या फिर मात्र अधिकारों या कानून बना लेने से उन्हें

इन अधिकारों का वास्तविक लाभ मिल पाता है ?उनके जीवन में आने वाली चुनौतियों का वे इन अधिकारों व कानूनों के माध्यम से सामना कर पाते हैं ?क्या उन्हें उनकी पूर्ण जानकारी है ?

हमें इस विषय पर गौर करने की जरूरत है।

आज हमारे देश में कन्या भ्रूण हत्या, लिंगभेद ,मातृत्व मृत्यु दर बढ़ रहा है। महिलाओं के खिलाफ भारतीय समाज में अपराध महिलाओं की वास्तविक स्थिति का आभास दिला देते हैं। मात्र कानूनों का निर्माण कर देने से ही महिलाओं को उनके अधिकार नहीं मिलते, महिलाओं को इसके लिए जागरूक करने और उन्हें कानूनों का वास्तविक लाभ मिल सके ,और इसे पूर्ण करना हमारा दायित्व है। हमारे देश की संसद में महिला सांसदों की बात करें तो महज14.3 प्रतिशत महिला सांसद ही आधी आबादी का प्रतिनिधित्व कर रही हैं। जबकि अमेरिका में 32% महिला सांसद हैं तो वहीं बांग्लादेश जैसे देश में 21% है ।राजनीति में बराबरी का हक दिया जाना चाहिए ।ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट 2019-2020 के अनुसार 95 साल लग सकते हैं राजनीतिक असमानता खत्म होने में, आर्थिक आधार पर महिला-पुरुष आर्थिक समानता में 257 साल लग जाएंगे।

हमारा देश ग्लोबल जेंडर गैप रिपोर्ट 2019-2020 के अनुसार वैश्विक स्तर पर राजनीति में 98वें, स्वास्थ्य में 150वें,शिक्षा में 192वें एवं आर्थिक क्षेत्र में

149वें स्थान पर है ।महिला -पुरुष की बराबरी के मामले में हमारा देश भारत 112 वें स्थान पर है।

हमारे देश की न्याय व्यवस्था की उच्चतम इकाई सुप्रीम कोर्ट ने महिलाओं को सशक्त करने की दिशा में भी कई कानूनी अधिकार दिए हैं- जिसमें "सती प्रथा निवारण अधिनियम 1987", "दहेज निवारण अधिनियम 1961","अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956", "बाल विवाह अधिनियम 1929", "औषधियों द्वारा गर्भ गिराने से संबंधित अधिनियम 1971", "स्त्री अशिष्ट रूपण प्रतिबंध अधिनियम 1986", "प्रसव पूर्व निदान तकनीक अधिनियम 1994", "समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976", "घरेलू हिंसा महिला संरक्षण अधिनियम 2005" आदि।

आज हालात बदले हैं महिलाओं की स्थिति में हमें सकारात्मक सुधार नजर आता भी है ।महिलाएं बदलते सामाजिक परिवेश में स्वयं सिद्ध होने का प्रयास कर रही हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि वह आजादी से अब तक कई महिलाएं शिक्षित हुई है ।महिला सामाजिक, आर्थिक ,राजनीतिक ,शिक्षण, विधि, विज्ञान, साहित्य, मीडिया, चिकित्सा, खेल, उद्योग, सेना, आईटी क्षेत्र आदि कई क्षेत्र में सफलतापूर्वक प्रतिनिधित्व कर रही है। परंतु आज भी पुरुष प्रधान समाज की सोच प्रबल है।

महिलाओं को असली आजादी नहीं मिली है। महिला के प्रति देश में बढ़ते अपराध हमारे समाज की एक कड़वी सच्चाई है।

देश में महिलाओं के प्रति उनके कानूनी अधिकारों के प्रति दृष्टिकोण सकारात्मक हुआ है। परंतु यह इतना काफी नहीं है ।हमें सशक्त मानसिकता के साथ महिलाओं को समानता का अधिकार एक आवश्यक हथियार के रूप में देना होगा ।इसके द्वारा वे अपने अस्तित्व को बनाऐं एवं बचाए रख सकने में साबित होगी।नारी समानता का नारा मात्र नारा बन कर न रह जाए,उन्हें उनके अधिकारों की पूरी जानकारी हो।

पुरुष प्रधान समाज में अपने मेहनत, संघर्ष एवं समर्पण से दुनिया की इस आधी आबादी ने अपना परचम लहराया है एक मिसाल कायम की है ।लेकिन महिलाओं को और अधिक मजबूत कदमों से आगे बढ़ाना होगा ,शिक्षित होना होगा, अपने अधिकारों के प्रति और सजग एवं जागरूक होना होगा ।तभी महिलाएं अपने अधिकारों का वास्तविक उपयोग कर पाएंगी ।मात्र मानवाधिकार महिला अधिकारों के निर्माण से ही समाज में पुरुष एवं महिला समानता नहीं आएगी इसके लिए पुरुषवादी विचारधारा को भी बदलना होगा । महिलाओं की स्थिति में कितना परिवर्तन आया है यह देखने के साथ ही हमें आम लोगों की महिलाओं के प्रति सोच में कितना परिवर्तन आया है यह देखने की भी आवश्यकता है।महिलाओं को प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से समाज के प्रत्येक क्षेत्र मे आगे बढ़ाने में पुरुषों द्वारा सकारात्मक मदद करनी होगी। स्त्रियों को कमज़ोर मानना असंवैधानिक है। शास्त्रों में भी स्त्री को शक्ति रूपा कहा है ।पुरुष यदि वास्तविकता में महिला को सशक्त करना चाहते हैं तो पुरुषों द्वारा महिलाओं को स्वतंत्रता, समानता और सम्मान देना होगा।और यही समय की मांग है।

काव्य

गौरीशंकर वैश्य विनम्र

117 आदिलनगर, विकासनगर
लखनऊ 226022

किसान

हे! निष्काम कर्मयोगी तुम,
धरती पुत्र महान हो।
लिखते हो सौभाग्य देश का,
शिल्पी - श्रमी किसान हो।

गर्मी, वर्षा, जाड़ा सहकर
खेतों में हो फसल उगाते
हरियाली को जीवन देकर
पशुओं को भी हो दुलराते

प्रकृति सहचरी के आँगन में,
लाते नया विहान हो।

अन्न देवता के चिर साधक
सुख के मूलाधार बने तुम
भारतमाता के मंदिर में
जय - जय मंत्र पढ़ो अनुपम

पावन ऋषि - कृषि परंपरा के,
पूजा - यज्ञ विधान हो।

दूर करो अज्ञान - अशिक्षा
श्रम से अपना भाग्य सँवारो
अपनी कर्म - शक्ति पहचानो
अपने सिर का बोध उतारो

मिट्टी को सोना कर देते,
सचमुच शिव - वरदान हो।
लिखते हो सौभाग्य देश का,
शिल्पी - श्रमी किसान हो।

आलेख

"आदमी की बात'की बात:डॉ उमेश चंद्र शुक्ल"

परंपरा से ग़ज़ल मन की गहराइयों में छुपी कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। ग़ालिब लिखते हैं- "*हमने माना कि तग़ाफ़ुल न करोगे लेकिन / ख़ाक हो जाएँगे हम तुमको ख़बर होते तक॥*"[1] परंतु समय के साथ इसने अपने कहन में अब आम आदमी के सरोकारों को भी बड़ी खूबसूरती से समाहित किया। आहिस्ता-आहिस्ता इसके वर्ण्य-विषय की परिधि में सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं से लेकर शाश्वत मानव मूल्यों के विघटन का दर्द भी आ गया है। यह काम हिंदी के गीतकारों ने बड़ी खूबसूरती के साथ किया है। हिंदी के जाने-माने ग़ज़लकार दुश्यंत कुमार लिखते हैं- *'कहाँ तो तय था चरागाँ हर एक घर के लिए, कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।*[2]वे यहीं नहीं रुकते बल्कि अपनी ग़ज़लों के माध्यम से शोषित-पीड़ित भारतीय समाज के पक्ष में दमनकारी व्यवस्था को चुनौती भी देते हैं-

वो मुतमइन हैं कि पत्थर पिघल नहीं सकता
मैं बेक़रार हूँ आवाज़ में असर के लिए।
तेरा निजाम है सिल दे जुबान शायर की
ये एहतियात ज़रूरी है इस बहर के लिए।[3]

अदम गोंडवीतो अपने वर्तमान का एक नया इतिहास लिख डालने का संकल्प व्यक्त करते हैं:-

मानवता का दर्द लिखेंगे, माटी की बू-बास लिखेंगे
हम अपने इस कालखण्ड का एक नया इतिहास लिखेंगे।[4]

हिंदी ग़ज़ल बहुतायत में बीसवीं सदी के उत्तरार्ध से विकसित होती काव्य विधा है। कई भाषाविज्ञानी उर्दू को हिंदुस्तानी की ही एक शैली मानते हैं जिसमें फारसी-अरबी शब्दों का बाहुल्य है। शायद यही वज़ह है कि खड़ी बोली हिंदी का कवि स्वयं को उर्दू के करीब पाता है। साथ ही, वह ग़ज़ल के मुहावरे, उसके कहन की ताकत को भी पहचानता है, इसलिए वह इसे हिंदी में उतारना चाहता है। हिंदी में जो दोहा है, कमोवेश वही उर्दू का शेर है। दोहे का अद्भुत अभिव्यक्ति-सामर्थ्य सब जानते हैं- "सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर। देखन में छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर॥" लेकिन शेर-ओ-शायरी का अंदाज़-ए-बयाँ भी निराला है। इसे पहचानते हुए अनेक हिंदी कवियों ने ग़ज़ल की ओर रुख़ किया। हिंदी के एक चर्चित युवा ग़ज़लकार हैं अखिलेश तिवारी। अपने ग़ज़ल संग्रह 'आसमाँ होने को था" की भूमिका में ग़ज़ल की यात्रा के बारे वे बड़ी अच्छी बात लिखते हैं:-

ग़ज़ल को बहती नदी मानता हूँ। भाषाई पत्थर डालकर प्रवाह अवरुद्ध किए जाने का हामी कम से कम मैं नहीं, न ही उसकी गति और दिशा को लेकर फ़िक्रमंद। वैसे भी कहाँ-कहाँ की यात्राएँ करते हुए वह यहाँ तक आ ही गयी है।"[5]

डॉ. स्मिता त्रिपाठी

प्रकाशन- विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में साहित्यिक सामाजिक विषयों पर आलेख प्रकाशित
संप्रति- असिस्टेंट प्रोफेसर सीएचबी एम.डी.शाह महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय मालाड (पश्चिम),मुंबई
संपर्क-ई-73 आर.बी.आई आफिसर्स कॉलोनी,नार्थ एवेन्यू,
सांताक्रूज़ (पश्चिम) मुंबई- 400054
ई-मेल-smee2005@gmail.com

दुष्यंत कुमार, त्रिलोचन, कुँवर बेचैन, रामकुमार कृषक, ज्ञानप्रकाश विवेक, माधव मधुकर मिश्र, रामदरश मिश्र, अदम गोंडवी ऐसे कुछ प्रमुख हस्ताक्षर हैं जिन्होंने हिंदी ग़ज़ल को समृद्ध किया है। अखिलेश तिवारी जैसे कई नये चेहरे भी अपनी प्रभावी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। ये कारवाँ बदस्तूर चलता जा रहा है। इसी यात्रा की एक महत्वपूर्ण कड़ी हैं मुंबई के भावप्रवण कवि-ग़ज़लकार उमेश चंद्र शुक्ल जी। उनके गीत-ग़ज़लें-आलेख आदि तमाम पत्र-पत्रिकाओं में एक अरसे से छपते आ रहे हैं। उनका ग़ज़ल-संग्रह 'आदमी की बात' 2012 में सत्य प्रकाशन, दिल्ली से छपा। सौभाग्य से मुझे भी वह पढ़ने को मिला। संग्रह के आमुख में अपनी बात के तहत इन ग़ज़लों को पाठक को समर्पित करते हुए शुक्ल जी ने लिखा है:-

"ये ग़ज़ल नहीं, महज सच बातें हैं हमारी
जो भीतर से बाहर तक चलती हैं अनवरत
तीखी हैं या तल्ख़, मीठी हैं या कसैली
पहुँचा रहा हूँ आप तक, इन सब को जस का तस।"[6]

उनकी ग़ज़लों से होकर गुज़रने से यह बात साफ हो जाती है कि उमेश चंद्र शुक्ल जी ने अपने शेरों में सच को उसकी संपूर्णता में पकड़ने का प्रयास ईमानदारी से किया है, फिर चाहे वह व्यक्ति के भीतर का सच हो, उसकी भावनाओं की सच्चाई हो या सामाजिक जीवन के सच के अलग-अलग पहलू हों। साहित्य की सोद्देश्यता, लेखकीय प्रतिबद्धता उनके लेखन की खास विशेषता है। उनका एक

शेर है-

लिखें तो ऐसा लिखें, जाग उठे आफ़ताब
अँधेरों को, इस शहर से, भगाया जाये॥[7]

उनके लेखन के वैशिष्ट्य को समझने के लिए हमें उनकी कुछ प्रतिनिधि ग़ज़लों को देखना होगा। जैसा कि हम बात कर चुके हैं कि ग़ज़ल परंपरा से मानव मन की कोमल भावनाओं, जज़्बात और प्रियतम से मिलन की चाह एवं बिछोह के दर्द की अभिव्यक्ति के लिए अत्यंत उपयुक्त माध्यम रही है। उमेश जी की ग़ज़लों में भी हम इस रागात्मकता का आनंद ले सकते हैं। प्रेमिका के दीदार से पुलकित प्रेमी हृदय की कैसी सुंदर छवि शायर ने उकेरी है। ग़ज़ल का ही मानवीकरण करते हुए कितना सुंदर सौंदर्य-चित्र खींचा गया है:-

उनको देखा तो मुझको कुछ ऐसा लगा
ताज पूनम में जैसे नहाया हुआ
उनका चलना है, शायर की क्वारी ग़ज़ल
जैसे 'ख़ैय्याम' फिर से नुमाया हुआ।[8]

प्रेम का दर्द, मिलन की चाह, नायिका के सौंदर्य का चित्रण – इनके अलावा ग़ज़लकारों का एक और पसंदीदा विषय रहा है- जीवन का फलसफ़ा यानी जीवन-दर्शन। आदमी की ज़िंदगी के अनुभव ही जीवन सिद्धांत बनकर ग़ज़लों में आए हैं। शुक्ल जी अपनी एक ग़ज़ल में बताते हैं कि आत्मान्वेषण बहुत ज़रूरी है। जब व्यक्ति दूसरों की कमियों, उनकी बुराइयों पर ज्यादा ध्यान देने लगता है तो वह अपने ही चरित्र का नाश करता जाता है। शुक्ल जी लिखते हैं:-

अफ़सोस यह चरित्र ही, मुझको डुबो गया।[9]
मैं तो सदा था झाँकता, गैरों की खिड़कियाँ

अपनी एक ग़ज़ल में शुक्ल जी ने बड़ी खूबसूरती से जीवन की कुछ सच्चाइयों से हमें संवेदना के स्तर पर जोड़ने की सफल कोशिश की है:-

बुरे दिन हों तो अपनों से भी रिश्ता टूट जाता है
कि जैसे डाल से पतझड़ में पत्ता टूट जाता है।
जब आँसू देखता है माँ की आँखों में कोई बच्चा
तो उसके हाथ से गिरकर खिलौना टूट जाता है।
जो अपने बंद कमरे में बुना करती है शहजादी
सहर होने से पहले ही,वो सपना टूट जाता है।
कोई आसाँ नहीं है दिल से दिल को जोड़कर रखना
ज़रा सी बदगुमानी से, ये धागा टूट जाता है।[10]

एक संवेदनशील शायर के तौर पर शुक्ल जी अपने आसपास के समाज में व्याप्त विसंगतियों से मुँह नहीं मोड़ते। उन्हें यह अहसास बार-बार कचोटता है कि सब-कुछ ठीक नहीं चल रहा है। उनका एक शेर है:-

तू बता किस मोड़ पर दुनिया खड़ी है
ये बता कि क्यों! कहाँ पर गड़बड़ी है।[11]

शुक्ल जी अपनी एक ग़ज़ल में लिखते हैं:-

ये ग़ज़लें नहीं मेरे रास्तों के छाले हैं
जो हमने बड़े जतन से सँभाले हैं।[12]

भौतिक प्रगति की अंधी दौड़ में भागते मनुष्य को आगाह करता हुआ शायर लिखता है:-

तेरी मुट्ठी में भले आसमान है लेकिन
तेरी इंसानियत में, आज भी वीरानी है।[13]

शहरीकरण में मानव का अस्तित्त्व दिन-प्रति-दिन छोटा होता जा रहा है। इस दर्द की कचोट को कम करने की लालसा में वह गाँव की ओर लौटना चाहता है:-

शहर की रातों की रंगीनियाँ नागिन की बहनें हैं
आओ गाँव की अब चाँदनी बन करके देखें हम।[14]

भ्रष्टाचार आज के समय की बड़ी समस्या है। जिस देश में प्रधानमंत्री खुद यह स्वीकार करे कि केंद्र से चलने वाला सौ रुपया जनता तक पहुँचते-पहुँचते दस रुपया हो जाता है, उस देश के हालात अच्छे नहीं है, यह जग-जाहिर है। शुक्ल जी लिखते हैं:-

जब भी बरसात चली, गाँव तक आने के लिए
राह में कैद हुई, बँगले भिगाने के लिए।[15]

सर्वहारा के प्रति शायर के मन में गहरी संवेदना है। उसकी दुरवस्था देखकर उसका मन सामाजिक न्याय के लिए तड़प उठता है:-

खींच रहा है जो रिक्शा, वो आदमी बहुत बीमार है
अपने कुनबे की खातिर वह मरने को तैयार है।
जिन्हें पचाते जा रहे हो, अपनी शातिर जेब में
सच है उन रोटियों का, वह पहला दावेदार है।[16]

ये पंक्तियाँ बरबस कलकत्ते के रिक्शाचालक पर लिखी अशोक चक्रधर जी की उस लघु कविता की याद दिला जाती हैं जिसमें घायल पाँव लिए हुए रिक्शाचालक कवि से कहता है- "बाबूजी, रिक्शा पैर से नहीं, पेट से चलता है।" शुक्ल जी के भीतर का ग़ज़लकार जमाने के दर्द को अपना बनाकर उसे अपना कलाम बना लेना चाहता है:
-
मैं जी रहा हूँ इसलिए, आओगे एक दिन
शिकवाओं की फेहरिस्त, बताओगे एक दिन
अब भी कलम है हाथ, मौसम की आस है
यकीं है मेरे पास बैठ जाओगे एक दिन।
मैं फिरपढ़ूँगा, बहकती साँसों की वो ग़ज़ल
तुम भी मेरी जुबाँ से गुनगुनाओगे एक दिन।[17]

सामाजिक क्रांति का स्वर भी शुक्ल जी की नज़्मों में आया है:-
मुझे जुनून है जब अमन को घर लाने का
यह मुमकिन नहीं –तन्हाइयों से डर जाएँ
इससे पहले की भूखी आँत का बारूद फटे
आप खु-ब-खुद अब कुर्सी से उतर जाएँ
नोंचकर फेंक दो, अपनी नकाब तुम नकली
हम खुद तय करेंगे कि अब हम किधर जाएँ।[18]

धार्मिक उन्माद ने सामाजिक जीवन में जहर घोल दिया है। निरक्षर गरीब आदमी से लेकर अच्छे खासे पढ़े लिखे डॉक्टर-इंजीनियर-प्रोफ़ेसर तक इसकी चपेट में हैं। ऐसे खतरनाक ब्रेन-वाश के समय में मानवीय प्रेम और विश्वास भी दाँव पर लगे हुए हैं। शायर का मन बार-बार इस टीस का अहसास करता है:-
जिसको समझ रहा था वो, अपना सगावही
ज़ेहादी ज़हर पीकर, जल्लाद हो गया।
कैसे बचेगी आबरू, अपने मुकाम की
अब जाति-धर्म मौत का पैग़ाम हो गया।[19]

देश के विरुद्ध सीमा-पार से चलाए जा रहे आतंकवाद की समस्या को भी ग़ज़लकार ने अपने शेरों में व्यक्त किया है:-

ऐसा अब बेदर्द मौसम हो गया कि-
वादियों की धूप भी जलने लगी है
आ रहा आतंक का उस पार से स्वर
सरहदों की नींव भी हिलने लगी है।[20]

आम आदमी का दर्द ग़ज़लकार के कलम से कुछ इस तरह बयाँ होता है:-
जो छिल रहा है समय के दुधारेनस्तर से
उसके जख़्मों की दास्तान ही पढ़ी जाए।[21]

लेकिन ग़ज़लकार शुक्ल जी की विशेषता है कि तमाम निराशा, हताशा के माहौल के बीच भी वे आशा और उम्मीद का दामन थामे रहते हैं। वे मानते हैं कि आज जिस चीज़ के सबसे ज्यादा दरकार है वह है- अमन, भाईचारा, सकारात्मकता।
बहुत हो गया है तल्ख़ अब मौसम
इस पर पाबंदगी की बात करें
बहुत भटके हो तुम अदावत में-
आओ, राज़ी-खुशी की बात करें।
यह मुनासिब नहीं हम सबके लिए –
कि गिरकर आदमीयत से बात करें।[22]

शुक्ल जी की ग़ज़लों की भाषा पर भी विचार करना समीचीन होगा। हिंदी ग़ज़ल की भाषा पर डॉ. नगेंद्र अपने प्रसिद्ध आलोचना ग्रंथ 'हिंदी-साहित्य का इतिहास'में लिखते हैं-

"कुछ ग़ज़लें (जैसे त्रिलोचन की) हिंदी में तत्सम शब्दों के प्रयोग से अपने में हिंदीपन लाना चाहती हैं, कुछ में फारसी के कठिन और चालू शब्दों का खुलकर प्रयोग हो रहा है। वास्तव में हिंदी ग़ज़ल को यदि अपनी अस्मिता बनानी है तो उपर्युक्त दोनों पद्धतियाँ उचित नहीं जान पड़तीं। ग़ज़ल में जो चुटीलापन है, वह तत्सम शब्दों की अपेक्षा तद्भव या चलते हुए तत्सम शब्दों के प्रयोग से आता है। भाषा का बहता हुआ रूप ही ग़ज़ल के लिए उपयुक्त होता है।"[23]

ग़ज़ल जिस अंदाज़-ए-बयाँ के लिए जानी जाती है, उसमें जो रवानी होती है जिसके कारण हिंदी का कवि उसकी ओर आकर्षित होता है, उसे भी डॉ. नगेंद्र ने बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से देखा है। अपने उसी ग्रंथ में वे आगे लिखते हैं-

"हिंदी ग़ज़ल की रवानी को भी उर्दू ग़ज़ल का पर्याय नहीं मानना चाहिए। हिंदी में शब्दों को तोड़-मरोड़ कर लिखने की परंपरा नहीं है। यहाँ शब्द अक्षत रूप में आते हैं। अत: हिंदी ग़ज़ल की रवानी हिंदी छंद की रवानी से भिन्न नहीं होगी।"[24]

हिंदी ग़ज़लकारों का यह प्रयास होता है कि वे ग़ज़ल का फॉर्म तो इस्तेमाल में लाएँ पर शब्द यथासंभव हिंदी के हों। शुक्ल जी ने यथासंभव हिंदी के प्रचलित शब्दों को ही ग़ज़ल के ढाँचे के अनुकूल इस्तेमाल किया है।इसके कुछ उम्दा उदाहरण उनके इस गज़ल-संग्रह में मिलते हैं। बानगीके तौर पर यह ग़ज़ल देखने योग्य है:-

हर कोई अपना था लेकिन कोई भी अपना न था
ज़िंदगी से इस तरह रिश्ता कभी टूटा न था

यूँ मुझे मालूम था, मिलकर पिघल जाएगा वो
फिर नदी बनकर बहा ले जाएगा, सोचा न था।[25]

लेकिन उन्हें उर्दू की परिचित शब्दावली और प्रतीक से कोई परहेज नहीं है। हरिवंशराय बच्चन जी की प्रसिद्ध पंक्तियों की याद दिलाने वाले एक शेर के उल्लेख के बिना बात अधूरी रहेगी:-

अब भी ईमान है, मयखाने के हमराहों में
हमपियालों को, गिर-गिर कर उठाया होगा। [26]

इस प्रकार की ग़ज़लें हिंदी ग़ज़ल की भाषिक जमीन तैयार कर रही हैं, यदि यह कहा जाए तो मेरे विचार से कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

शुक्ल जी की कुछ गज़लों में लुभाने वाला तरन्नुम भी है। वे प्रगीत का आनंद देती हैं। एक उदाहरण प्रासंगिक होगा:-

मुझ पर जो तुम्हारी नज़रों की, थोड़ी सी इनायत हो जाए
जीवन के रूखे मरुस्थल में, प्यारी सी तरावट आ जाए।[27]

मिथकीय और ऐतिहासिक प्रसंगों एवं प्रतीकों का भी प्रभावी प्रयोग किया गया है:-

राखी के बंधन में बँधकर, हूमायूँ दौड़ा आया था
अब भाई के हाथों बहनों के ईमान का सौदा होता है।
कितनों की जान बचाने को दधीचि ने तन का दान किया
नोटों की गड्डी के बदले अब जान का सौदा होता है।[28]

निष्कर्षत: उमेश चंद्र शुक्ल जी भावप्रवणग़ज़लकार हैं। साथ ही, लेखन उनके लिए बुद्धि या कल्पना का विलास नहीं है। सामाजिक सोद्देश्यता और लेखकीय प्रतिबद्धता को उनकी शायरी में कदम-कदम पर लक्षित कियाजा सकता है:-

चलो अब आज, एक ऐसी ग़ज़ल लिखी जाए
जिसमें बस आदमी की बात ही कही जाए।[29]
चलो इक बार फिर से आदमी बन करके देखें हम
अँधेरों से निकलकर रौशनी बन करके देखें हम।[30]

ग़ज़ल उनके लिए उस मालिश की तरह है जिससे उन जख़्मों में आराम मिलता है जो दुनिया ने दिए हैं:-

आजाओ ग़ज़ल की बहरों की, अबतो कुछ बारिश करलें हम
दुनिया से पाए जख़्मों की, हल्की सी मालिश कर लें हम।[31]

रचनाकार के समक्ष यह चुनौती सदा से रही है कि वह अपने साहित्य में वह संतुलन ला सके कि उसकी रचना का सामाजिक प्रदेय तो हो, परंतु साहित्य का सौंदर्य भी अक्षुण्ण रहे। ज़ाहिर है, कि उमेश चंद्र शुक्ल जी भी इस चुनौती से जूझे हैं परंतु प्राय: सफल रहे हैं। अपने शेरों को उन्होंने यथासंभव सपाटबयानी से बचा के रखा है।

अंत में, कहना होगा कि उमेश चंद्र शुक्ल जी के प्रथम ग़ज़ल संग्रह 'आदमी की बात' में बात तो है। एक बात और, वे नि:संदेहहिंदी ग़ज़ल की यात्रा को आगे ले जा रहे हैं।

संदर्भ: -

1-https://www.rekhta.org/couplets/ham-ne-maanaa-ki-tagaaful-na-karoge-lekin-mirza-ghalib-couplets?lang=hi
2-कविता कोश,भारतीय भाषाओं के काव्य का सर्वप्रथम और सबसे विशाल ऑनलाइन विश्वकोश
3-वही
4-*अदम गोंडवी की चुनिंदा ग़ज़लें, क़तआत एवं नज़्म*,युगतेवर', हिंदी त्रैमासिक (सुलतानपुर, उत्तर प्रदेश), अप्रैल-जून, 2021, पृ.63)
5-*'आसमाँ होने को था', अखिलेश तिवारी, लोकायत प्रकाशन, जयपुर, 2012, पृष्ठ 6.*
6-*'आदमी की बात' (ग़ज़ल संग्रह), उमेश चंद्र शुक्ल, सत्य प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 6.*
7-*वही, पृ. 29*
8-*वही, पृ. 16*
9-*वही, पृ. 35*
10-*वही, पृ. 92*
11-*वही, पृ. 45*
12-*वही, पृ. 49*
13-*वही, पृ. 34*
14-*वही, पृ. 40*
15-*वही, पृ. 71*
16-*वही, पृ. 43*
17-*वही, पृ. 61*
18-*वही, पृ. 68*
19-*वही, पृ. 44*
20-*वही, पृ. 65*
21-*वही, पृ. 39*
22 -*वही, पृ. 72*
23-*हिंदी-साहित्य का इतिहास' (सं.), डॉ. नगेंद्र, 2012, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1998 पृष्ठ सं. 644)*
24-*वही*
25-*आदमी की बात' (ग़ज़ल संग्रह), उमेश चंद्र शुक्ल, सत्य प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 91.*
26-*वही, पृ. 66*
27-*वही, पृ. 46*
28-*वही, पृ. 51*
29-*वही, पृ. 39*
30-*वही, पृ. 40*
31-*वही, पृ. 58*

व्यंग्य

"गमले में अल्फांसो"

इधर डीडी नगर की कॉलोनी में ये आम चर्चा उफान पर थी कि मंजुला जी के गमले का आम पक गया है। बारी बारी से आम को देखने वालों का यह कहना था कि गमले में ही पके हुए आम का पीलापन कुछ ऐसे टपक रहा है, जैसे कृष्ण पीतांबर वस्त्र पहने हुए अपने पग बढ़ा रहे हों।

आम पर ही खास चर्चा इसलिए भी होने लगी थी , क्योंकि उनके किसी परिचित ने उस पके हुए आम की फोटो उसके पैतृक गमले के साथ सोशल मीडिया में शेयर कर दी थी। अब केवल यह तय करना बाकी था कि आम की यह प्रजाति कौन सी है?

गमले के करीब ही खड़े शंकर ने कहा -मैं गूगल में सर्च कर तो लूं ,लेकिन इसके पहले इस लटके हुए पके आम की थ्री डायमेंशन फिगर चाहिए और उन्होंने अपने मोबाइल से पीले पड़ चुके आम की फोटो तीन बार अलग-अलग एंगल से क्लिक कर ली। फिर मोबाइल में पके हुए पीले आम की फोटो को जूम करके बोले -फोटो देखकर मैं यह दावे के साथ कह सकता हूं ये यह आम कोई जनरल आम नहीं है बल्कि खास है। इसका चेहरा किसी अवसाद से पीला नहीं हुआ बल्कि यह नेचुरली मिठास का पीलापन है। गमले में ही पके - पीले बड़े साइज की डाल से झूलते आम की फोटो व्हाट्सएप में वायरल होने के कारण अग्निहोत्री जी को भी पता चल गया था ।वे शाम को ऑफिस से सीधे मंजुला जी के घर आ गए ।बोले -सही में आम पक गया, मंजुला जी बधाई हो। वैसे मैंने फोटो तो देखी है आम की ,वो कोई विशेष प्रजाति है ।यह कोई साधारण आम नहीं है बल्कि मैंगो है विशेष प्रकार का।

हां यही तो पड़ताल करना है ,। आज आम पक गया कल टपकेगा भी, इसके पहले बस यह कन्फर्म हो जाए कि ये आम किस प्रजाति का है-मंजुला जी बोली

कालोनी के सोशल वर्कर शंकर प्रसाद बोले- बाये साइड से मैंने गमले के नीचे से नाईन्टी डिग्री से एक जबरदस्त फोटो ली है। उससे समझ में आ जाएगा कि यह कौन सी प्रजाति का आम है। आप धैर्य रखिए,बस।

वैसे मेरा ख्याल है , यह आम ,कोई चलताऊ आम नहीं है ।कुछ खास ही है।-अग्निहोत्री जी उबासी लेते हुए बोले

वैसे मैंने आम विशेषज्ञों को फोटो तो सेंड कर दी है उनके अभिमत आने पर अंतिम निर्णय ले लेंगे और फिर आम की प्रजाति तय हो जाएगी।

दूसरे दिन अग्निहोत्री जी ऑफिस जाने के पहले आम के संबंध में कोई नई बात जानने के लिए मंजुला जी के घर आ गए। कुछ पता चला?

अभी तो नहीं?

जैसे ही पता चलेगा , सबको, मैसेज सेंड कर दिया जाएगा। देखिए भूलिएगा नहीं ,यदि मैं ऑफिस के काम में व्यस्त हो जाऊं तो फोन कर दीजिएगा। व्हाट्सएप में मैसेज कभी-कभी देख नहीं पाता हूं

जी -डिफनिट ?

हां हां भाई पक्का। आप विश्वास रखिए

सतीश उपाध्याय

वरिष्ठ व्यंग्यकार

स्वतंत्रता संग्राम सेनानी कुटी

वार्ड नंबर 10 मनेंद्रगढ़ जिला एमसीबी छत्तीसगढ़

9300091563

अग्निहोत्री जी आम वार्ता के कारण आज आफिस टाईम से 5 मिनट लेट हो चुके थे वे तेजी से निकल गए।

इधर शंकर प्रसाद जी ने चैट जीपीटी का भी सहारा लिया और सर्च किया-"उत्तम प्रजाति के आम"

देखते ही देखते कई प्रजाति के आम उनके स्क्रीन पर पल भर में आ गए। वे अपनी तीन कोणों से अलग-अलग खींची गई आम की फोटो से, स्क्रीन में आए हुए आम की फोटो का मिलान करने लगे। लेकिन मंजुला जी के गमले में लगे आम की प्रजाति फिर भी फाइनल न हो सकी।

फिर उन्होंने सर्च किया-" आम की सबसे मशहूर प्रजाति का नाम बताइए"

फौरन नाम आ गया। आम की सबसे मशहूर प्रजाति है अल्फांसो।

उनकी बाहें खिल गई ।आंखों में चमक आ गई । उन्होंने अपने मोबाइल में वो फोटो निकाली जो उन्होंने काफी मेहनत से खींची थी । पहले गमले के नीचे से आम के करीब 90 अंश के कोण वाली अपनी फोटो को अल्फांसो आम की प्रजाति से मिलान किया

थोड़ा बहुत अंतर था, पर उनका दिल नहीं मान रहा था। फोटो काफी मेहनत से खींची गई थी इसीलिए उन्होंने माना कि - गमले वाले आम की फोटो दुनिया भर में मशहूर अल्फांसो आम की ही प्रजाति से मिलती जुलती है ।उन्होंने तुरंत अग्निहोत्री जी को फोन कर दिया

हैलो अग्निहोत्री जी ,मुझको लगता है मंजुला जी के गमले में पके हुए बिग साइज के मैंगो की प्रजाति दुनिया भर में मशहूर अल्फांसो आम की ही प्रजाति है। अग्निहोत्री जी जल्दी में थे। वे बोले- ऑफिस पहुंचकर आपसे इत्मीनान से बात करता हूं और उन्होंने फोन काट दिया।

कुछ देर बाद अग्निहोत्री जी का ऑफिस से फोन आ गया ।

जी , अब बोलिए ,आप क्या कह रहे थे शंकर प्रसाद जी ?

जी मैं यह कह रहा था कि देखिए उलझन दूर हो गई है, कन्फर्म ही हो गया है समझिये, यह मानकर चलिए कि आम की प्रजाति को मैंने खोज निकाला है ।मेरी खींची गई 90 डिग्री की फोटो दुनिया भर में मशहूर आम की प्रजाति "अल्फांसो" से हुबहू मिलती जुलती है। गमले का आम बाएं साइड से झूल रहा है और गूगल और चैट जीपीटी में जो अल्फांसो आम की फोटो दिखाई पड़ रही है वह भी बाएं साइड से देखने पर सेम टू सेम दिखाई पड़ती है ,इसीलिए मुझे तो पक्का यकीन है कि गमले वाला पका आम अल्फांसो प्रजाति का ही आम है।

अग्निहोत्री जी भी खोजी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे ।वे अपने मोबाइल में ऑनलाइन मोड में ही आम की फोटो लेकर दफ्तर के बड़े बाबू के पास चले गए बोले _यह देखिए डीडी नगर की हमारी कॉलोनी के मंजुला जी के छत पर अल्फांसो प्रजाति का आम।

आम की प्रजाति उच्च कोटि की थी वह भी दुनियाभर में मशहूर अल्फांसो प्रजाति का,। जो इस सीजन में जल्द ही मार्केट में लांच होने जा रहा था, इसीलिए बड़े बाबू भी आम में इंटरेस्ट लेने लगे। वे आम के बड़े शौकीन थे और जानकार भी ।बड़े बाबू ने भी कई घंटे अग्निहोत्री जी से आम चर्चा की।

देखिए अग्निहोत्री जी आम को यूं ही नहीं फलों का राजा कहा जाता है।आम की तमाम किस्मों में 'अल्फांसो' को सबसे अच्छा माना जाता है लेकिन अपने बेहतरीन स्वाद एवं कम उत्पादन की वजह से इसके दाम अक्सर आम लोगों के पहुंच से बहुत दूर होते हैं। भाई आम खाना है ,तो खाना है। -

पिछले साल इसी सीजन में मैंने ₹800 प्रति दर्जन के भाव से अल्फांसो को खरीदा था । दोनों की बातचीत को पास ही खड़ा दफ्तर का प्यून रामलाल भी सुन रहा था।

वे रामलाल की तरफ देखते हुए बोले - रामलाल,इस खास आम का स्वाद तुम्हारे जैसे लोगों के लिए और आम जनता तक पहुंचाने के लिए अब नई मार्केटिंग स्टार्ट हो गई है।

कैसे सर ? हम भी वो वाला आम खा सकते हैं क्या?

अरे क्यों नहीं रामलाल ,अब किसी महंगे इलेक्ट्रॉनिक सामान की तरह आसान मासिक किस्तों में यानी ईएमआई पर अल्फांसो को भी खरीद सकते हो। जब उसका स्वाद ही लेना है तो ईएमआई से ले लो।

भाई यह आइडिया बहुत अच्छा है जब हम फ्रीज कूलर जैसी दूसरे इलेक्ट्रॉनिक उपकरण को ईएमआई पर खरीद सकते हैं तो फिर आम को क्यों नही?

इस तरह हर कोई इस आम को खरीद सकता है। आम आदमी भी अल्फांसो आम खा सकता है।

अल्फांसो खरीदो उसका स्वाद लो ,और किस्त पटाते रहो। हां इसके लिए क्रेडिट कार्ड होना चाहिए। बस छै या बारह महीने की किस्त ही तो देनी पड़ेगी।

अरे साहब हम कहां ?रामलाल थोड़ा झेपते हुए बोला

दफ्तर का समय पूरा हो रहा था। रामलाल जल्दी-जल्दी बिखरी हुई फाइल समेटने लगा।

अग्निहोत्री जी ने कहा -अच्छी चर्चा रही बड़े बाबू, चलूं लौटते हुए मंजुला जी के घर भी जाना है।

फटाफट एक फोन लगा लेता हूं। और वे फिर शंकर प्रसाद को फोन लगाने लगे

दिनेश गंगराड़े,
9425936653
निपानिया, इंदौर, मप्र

"झूठ तैरता,सच डूबता"

सच और झूठ में चार इंच का फासला है,जो आंखों देखी वो सच और कानों सुनी झूठ,लेकिन दुनिया उलटा कर रही हैं।संसार में सत्यता का कोई महत्व नहीं है।फोकट में जो मिलती है।झूठे लोगों को भी सच इतना प्रिय नही कतई अच्छा नही लगता,जो उसे अपना लें।सच और झूठ में वही एक रिश्ता होता है जो बल्लेऔर गेंद में होता है।सच सदैव झूठ पर टूट पड़ने को बेताब रहता है।यूँ तो अदने से लुच्चे को बड़ा लुच्चा पीट देता है,खा जाता है,जैसे बड़ी मछली,छोटी मछली को निगलती है,परंतु बड़े झुठेले से हारने से छोटा फरेबी सत्यवादी नही हो जाता?सच के मार्ग में दूसरी बाधा होती है दूजा सच्चा शख्स।दो सच्चे बंदे मिलकर काम-धंधा,बिजनेस,नौकरी नही कर सकते?दो सच्चे लोगों का गंतव्य एक हो सकता हैं किंतु उनका पहुंच मार्ग एक सा नही होता है।फलतः वे एक पगडंडी तक नही बना पाते हैं जिसपर दूसरे लोग चल सकें।दूसरी ओर झूठे,कलूटे मुख्य पक्का मार्ग का निर्माण कर उसके बाद अन्य फ़र्ज़ी मार्ग बनाते जाते है।अगर सत्यगामी कोई रास्ता बना भी लें,जिसपर चला जा सकें तो दूसरों को उस पर चलने में ,अनुशरण करने में काफी दिक्कतें होती है,याने सत्यता से दिक्कतें,मुसीबतें जन्मती है।सचाई बड़ी भयावह,डरावनी,कड़वी मैथी होती है।फरेब इससे ख़ौफ़ज़दा रहता है।सच्चाई, से फरेबी का परिवार,कुनबा भी भयाक्रांत रहता है।कारण की संसार की हर तकलीफें सत्यता से ही उपजती है।सत्य परेशान,हबला-कबला ही रहता है।आज झूठे का मुंह उजला और सच्चे का थोबड़ा काला हो रहा है।लोगों ने जाते दुर्बल ,अस्त-व्यस्त राहगीर से जाना-भय्या,तुम्हारा क्या नाम है?परिचय...?

मैं,हरिश्चंद वाला सत्य हूँ।अंग्रेज मुझे ट्रूथ या ऑनेस्ट कहते है।

तुम इतने कड़कभट्ट, खरे-खरे,अकड़ू,स्पष्टवादी,बिंदास क्यों हो?

वजह तो नही पता,पर इस कलियुग में,मैं बहुत बड़ा दुर्गुण,ऐब,सिरदर्दी,कमज़ोर कड़ी हूँ।

आमजीवन में बच्चा 8-10 साल का होता है तो सच,झूठ का अंतर उसे समझ आने लगता है।लोग भले-बुरे गुणों का बखान कर बताते हैं कि सच-झूठ क्या है?पुलिस की कुटाई,और पुरस्कृत को मिठाई प्राप्त होने पर उसे जँचता है कि झूठ-सच क्या है।वो महसूसता है कि सच मे ईश्वर, व झूठ में शैतान का वास है।दुनिया वाले राजा हरिश्चन्द्र की स्टोरी सुनाकर बताते है

हरिश्चन्द्र की स्टोरी सुनाकर बताते है कि-सत्य का मार्ग बड़ा कठिन है।तुम जीवन मे असत्य का मार्ग अपनाओगे तो "ऐश" करोगे,हर मज़ा केश करोगे।सत्य का रोग,खुद में मत लगा लेना,अपना मत लेना वरना पछताओगे।ये सीख ताउम्र याद रखना की सच का बाशिंदा ईश्वर है,वे सत्य में विराजते है।असत्य में भगवान ,दिन में तारों की तरह गायब रहते है।सच्चे इंसान की सँतानें,फ़र्ज़ी हो सकती है तथा फरेबी लोगों की औलादें कभी-कभी अपवाद रूप में सत्यवादी,सुशील,सज्जन,व्यवहारिक भी निकल सकती है? सच्चा इंसान कभी भी मूर्ख नही होता और न कोई उसे बना सकता है।मूर्ख मानुस कभी भी चतुर नही होता?दोनो आपस मे 36 के अंक जैसे होते है।झुठेला, शातिर-चालाक रहेगा जबकि सत्य वाला मर्द शातिर कम,भोला-भाला,सीधा रहेगा।झूठ बोलना पृथक बिंदु है और खुद झुठेला बनना अलग।पुराने ज़माने में धारणा थी कि सच में ईश्वर तथा झूठ में शैतान रहता है किंतु अब लोग झूठ में भगवान को एवं सच मे हैवान को तलाशते फिरते है? सत्यता में नाटक, दिखावा,नौटँकी नही होती किंतु झूठ पूरे नाटक,फर्जीवाड़े पर ही टिका होता है।सच्चाई में साहस लेकिन झूठे में पस्तता रहती है।जो चाहती है कि झूठे के साथ भी न्याय हो।सच्चे लोगों का यह तर्क का लाभ हर फ़रेबी उठाता है। सच्चाई,लालटेन नही,चमकता सूरज है।यदि वह न चमके तो सत्यता, सत्य न रहें।एक दमकता हीरा न रहें।सत्य मानुस परेशान हो सकता है किंतु परास्त नही?वह जानता है कि उसे ऑनेस्टी देकर भगवान ने कोई गुस्ताखी नही की है।झूठा,फ़र्ज़ी बंदा तो इतनी गहरी बात विचार भी नही सकता।झूठे होने का आरोप आदमी दूसरे पर लगाता है परंतु सच्चे होने का दोष,व्यक्ति अन्य दूजे पर नही लगा पाता है।झूठों की समस्त त्रुटियां,दूसरों से ही होती है,खुद से नही,ऐसा वे बताते हैं।सच्चा,गर गलती करता है तो बता देता है,स्वीकार लेता है,उजागर कर देता है।इस संसार मे झूठ चाहे90फीसदी हो जाए पर सच कभी भी नही मरेगा,वजह ये है कि प्रत्येक झूठा,दूसरे फ़र्ज़ी से भी सत्यता की ही उम्मीद रखता है।असत्य भी सच्चा बन जाता है, जब काम सत्यता से होने वाला हो,लेकिन सच्चा कभी ,झूठा नही बनता ।आमधारणा है कि झूठे के पास,सच नहीं होता, पर वास्तव में उसके पास भी सच्चाई खूब होती है।जो कभी समाप्त नहीं होती,फिर भी वो फरेब का सहारा लेता है।सच्चे को यह कहने में संकोच नही होता कि वो सच्चा है,न ही बताना पड़ता है।झूठे को यह कहने में भारी शर्म महसूस होती है कि वो झूठा-फरेबी है।वास्तविकता ये है कि

वह चोर है,ताकि दुनिया उसे असत्यवादी समझे?झूठा मनुष्य भी खुद को सत्यवादी ही बताता है।यह सत्यता ही सबसे बड़ी ताकत है।धर्मग्रंथ उगलते है कि-इस सत्य से ही सूर्य,चंद्र, हवा संचालित होते है।असत्यता से तो झूठे,फ़र्ज़ी इंसान चलते है।जो ईश्वर को खटकते है।सत्य-असत्य,नैतिक-अनैतिक के बीच महज 'अ' का ही फर्क है।जिसमे करोड़ों लोग फंसे पड़े है।जिसमे से सच्चों का ईश्वर छाँट कर मदद करता है और झूठों को छिटकता है।राम-रावण,कृष्ण-कंस,प्रह्लाद-हिरण्यकश्यप में सच-झूठ का विवाद था और अंत तक सच का ही बोलबाला कायम रहा।आज,झूठ को सौ बार कहो तो वो सच दिखने लगता है किंतु सत्य को हजार बार झूठ कहो तब भी वो सत्य ही नज़र आता है, झूठ नही?इस फ़र्ज़ी युग मे साँच,पाप सा एवं झूठ ,तप सा दिखता है?इस युग मे कबीर होते और ज़माने का चलन देखते तो लिखते-झूठ बराबर तप नही,साँच बराबर पाप, जाके हिरदे फरेब है,ताके हिरदे आप?तो भय्या फर्जीवाड़ा अमर रहे।

लघुकथा

डा. मधु आंधीवाल
अलीगढ़

"छोटी सी खुशी"

देव तुम क्यों चले गये ? ये प्रश्न रोली हमेशा देव की तस्वीर से रोकर पूछती पर जो इस दुनिया में है ही नहीं वह क्या जवाब देता । आज तो वह सुबह से ही रो रही थी क्योंकि आज होली थी उसको पिछली सारी घटनाएं व्यथित कर रही थी क्योंकि देव के मम्मी पापा ने और रोली के मम्मी पापा ने एक कठोर फैसला लिया रोली की दूसरी शादी का । देव बहुत ही हंसमुख और शरारती शख्स था । रोली से मुलाकात भी होली मिलन समारोह में हुई । मस्ती का माहौल हुड़दंगो की टोली । सब आपस में एक दूसरे को होली के रंगो में रंग रहे थे । कालोनी की कुछ लड़कियां शायद इस हुड़दंग से बचने के लिये पार्क के कोने में चुपचाप जाकर बैठ गयी थी । रोली सबसे अलग ही दिखाई देती थी । सांवली सलोनी रोली में एक गजब का आकर्षण था । वह बहुत ही गम्भीर प्रकृति की लड़की थी । देव की निगाह बहुत देर से बार बार उस पर अटक जाती । रोली के पापा का ट्रांसफर अभी कुछ समय पहले ही हुआ था । वह इस कालोनी में नया परिवार था । देव ने रोली के बारे में सब पता लगा लिया था । उसने आकर रोली पर गुलाल डाल दिया । रोली एकदम चिल्ला दी । देव ने बड़ी शरारत से और भोलेपन से कहा कि बुरा ना मानो होली है। सारी लड़कियां खूब जोर से हंसने लगी । रोली गुस्सा होकर घर चली गयी ।

दूसरे दिन रोली ओटो का इन्तजार कर रही थी देव ने अचानक उसके पास आकर अपनी बाइक रोकी रोली सकपका गयी । देव ने कल के लिये कान पकड़ कर बहुत भोलेपन से माफी मांगी । रोली उसकी इस अदा पर हंस दी । बस दोनों की मुलाकातें बढने लगी । प्यार कभी छिपता नहीं है। जब दोनों के परिवारों को पता लगी तो उन्हें भी कोई आपत्ति नहीं हुई क्योंकि दोनों अपने आप में सक्षम थे । रोली एक बैंक में कार्यरत थी और देव भी एक मल्टीनेशनल कम्पनी में था । दोनों की शादी बहुत धूमधाम से हुई । दोनों बहुत खुश थे और होली का ही इन्जार था क्योंकि होली पर ही दोनों के प्यार का बीज अंकुरित हुआ था पर शायद ईश्वर को यह खुशी मंजूर नहीं थी और एक दिन जब देव आफिस से घर आकर बिस्तर पर लेटा तो उठा ही नहीं । देव की मम्मी ने आकर उसे आवाज दी तो देव तो दुनिया से विदा होचुका था । डा. को बुलाया तो उसने कहा की इन्हें अचानक ब्लडप्रेशर बढ़ा और ब्रेन हेमरेज हुआ जब तक कोई मैडीकल सुविधा मिलती तब तक सब खत्म हो चुका था । रोली को जब पता लगा उसका रो रो कर बुरा हाल था ।

जब उसकी सास और ससुर ने उसका हाल देखा तो वह भी रोने लगे । दोनों ने उसे समझाया बेटा हम एक बेटे को खो चुके हैं हम बेटी को नहीं खो सकते । तुम हमारी बेटी हो । देव की जगह तो नहीं भर सकते पर तुम हमेशा हमारी बेटी बन कर रहोगी । अकेले जीवन काटना बहुत कठिन है हम लोग नहीं रहेगे कौन तुम्हारा ख्याल रखेगा । हमने बहुत सोच समझ कर अमित से तुम्हारी शादी का फैसला क्या है क्योंकि अमित मेरा भतीजा जरूर है पर परवरिश मैने ही की है । सबके समझाने पर उसने कहा मुझे कुछ समय दीजिये और आज उसने कहा मां यदि आपकी बेटी हूँ तो आप भी वायदा करिये कि आप रहेगी मेरे साथ ही । सास जी ने कहा बेटा हम दोनों तुम्हारे साथ ही रहेगे अमित और तुम्हारे साथ ही हम दोनों रहेगे । रोली देव की तस्वीर के सामने खड़ी थी सोच रही थी देव तुम हमेशा मेरे साथ रहोगे पर मम्मी पापा की भी खुशी भी मेरा कर्तव्य है।

कहीं यह गाना उसे सुनाई दे रहा था " छोटी सी खुशी ,छोटी सी हंसी छोटा सा टुकड़ा चांद सा.....

कहानी .

डॉ लेखराज,

255, शहीद भगत सिंह
नगर, सुजानपुर -145023

"काली"

इस संसार की कोई भी माँ ऐसी नहीं जो अपने बच्चों को तीन चार साल तक दूध लगातार पिलाए लेकिन काली ने हमें पूरे पंद्रह बर्षो तक अपना दूध पिलाया था। साल में केवल कुछ महीने ही हमारे घर में दूध ना रहता वो भी तब जब उसे बछड़े अथवा बछड़ी को जन्म देना होता।

आज हमारी वह माँ अत्यंत मुश्किल में है। पहली माँ वह थी जिसने हमें अपनी कोख से जन्म दिया और दूसरी माँ यह है जिसने केवल मुझे ही अपना दूध नहीं पिलाया बल्कि मेरे बच्चों को भी अपने दूध से पाला और पोषा। वह पूरी उम्र हमारे घर में ही रही। सभी उसे काली कह कर बुलाते। मौसम गर्म हो अथवा सर्द, समय दुखों से भरा हो अथवा सुखों से भरपूर, उसने सब कुछ हमारे परिवार के साथ साथ अनुभव किया और झेला भी। हम भूखे रहे तो वो भी भूखी रही। हमने भरपेट खाना खाया तो उसने भी भरपेट चारा खाया। हमने अगर घी, मक्खन खाया तो उसने भी खल, बडेवें, फीड और चौकखर खाया। उसकी हर गोद भराई के समय हम उसे दो किलो देसी घी अवश्य खिलाते। अगर कभी देसी घी नहीं होता तो तिलों का मीठा तेल देते। वह कभी गुस्साई नहीं थी। कभी भूख के लिए ज़ोर ज़ोर से रम्बाई नहीं थी। कभी उसे प्यास लगी तो भी उसने आवाजें नहीं लगाई। उसे पता रहता कि जब भी हम अपने घर काम से लौटेंगे तो सबसे पहले उसी के पास जायँगे। हम दोनों कामकाजी थे इसलिए जब भी काम से लौटते तो सब से पहले उसकी कुशलक्षेम पूछने उसके पास ही जाते। उसने कोई हमारी तरह अपना दुःख दर्द कहकर थोड़ा बताना है। फिर भी उसकी आँखों से स्नेह झलकता है। उसके व्यवहार से, उसके चाहने से हमें पता चल जाता है कि वह हमें प्यार कर रही है। घर आ कर सब से पहले उसे पानी पिलाते। फिर उसका खाने के लिए रखा चारा त्यार कर उसके सामने रखते। जब वह चारा खाने लगती तभी हम खुद रसोई में अपना खाना त्यार कर खाते। लगभग हर रोज़ हम ऐसा ही करते। अगर कहीं जाना होता तो उसकी देखभाल के आवशयक प्रबंध करके ही कहीं जाते। काली बहुत ही शीतल स्वभाव की थी। आज बर्षो के पश्चात भी सभी बच्चे बूढ़े उसे भूल नहीं पाए हैं। सभी बराबर उसे याद करते हैं।

उसका पूरा बदन काला था। इसीलिए सभी उसे काली के नाम से पुकारते थे। कहीं कोई दूसरे रंग का निशान उसके शरीर पर नहीं था। काले रंग की गाय को किस्मत वाली और दुखों को हरने वाली माना जाता है। काली गाय क़ो घर परिवार की सुख समृद्धि के लिए भग्यशाली माना जाता है। जब कोई उसे काली कह कर पुकारता तो झट से उसके कान खडे हो जाते। वह झट से समझ जाती कि वह उसे बुला रहा है।

आज से पूरे चार साल पहले वह बीमार हुई थी। उन दिनों कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। दिसंम्बर के महीने के आखिरी दिन थे हड्डीयाँ जमा देने बाले। वह एक बार फिर माँ बनने वाली थी। हमारे घर परिवार में सभी खुश थे। मेरी धर्मपत्नी ने अब उसका दूध निकालना बंद कर दिया था। इन दिनों दूध से भरी रहने वाली हमारी रसोई आज कल दूध, दही और मक्खन से खाली खाली रहती थी। थोड़ा बहुत उसने घी जोड़ कर रखा हुआ होता। उससे घर का पूरा एक महीना निकल जाता। लेकिन हर बार की तरह इस बार गोद भराई के समय काली के लिए घी घर में नहीं था। इसलिए उसे घी बाजार से ला कर खिलाना पड़ा था। असल में इन दिनों हम घर में बनने वाली चाय आदि के लिए दो किलो दूध लेकर आते। वह देखते ही देखते खत्म हो जाता। इन दिनों कभी कभार ही हमें आधा गिलास ही दूध पीने को मिलता। दही और मक्खन तो कभी दिखाई ही नहीं देता। लेकिन ऐसा सभी कुछ अब कुछ ही दिनों में समाप्त हो जाएगा। अब बह दिन दूर नहीं रह गया था जब एक नन्हा सा मेहमान आ जाएगा और बह फिर से दूध की बाल्टीयां भर भर देगी। तभी सभी के भाग्य एक बार फिर से खुल जाएंगे और हर शाम सभी को भर भर कर दूध के गिलास मिलेंगे।

इसलिए सभी इसी प्रतीक्षा में थे कि कब उसके प्रसब का समय पूरा हो और हमारे घर में एक बार फिर से दूध की नदी बहने लगे। लेकिन इसे भाग्य की बिडंबना ही कहा जायगा कि एक दिन वह घर के पिछबाड़े ऐसी बैठी कि फिर उससे दुबारा उठा ना गया। सभी की आशाओं पर पानी फिरने लगा था। बह चारा खाती, समय पर पानी पीती, उठने की कोशिश करने के लिए पूरा ज़ोर लगाती लेकिन उठ ना पाती। हमारे पूरे परिवार ने भरसक प्रयास किया कि उसे उठाया जाय लेकिन लाख कोशिश करने पर भी हमें सफलता ना मिल सकी। शाम ढलने लगी तो हमारा मन घबराने लगा। रात भर बाहर ठंड से पड़ते जबरदस्त कोहरे में रहेगी तो उस की कुल्फी जम जायगी। ऐसा सोच कर मेरा हृदय काँपने लगा था। रात उतरती देख मैं डाक्टर साहिब को बुलाने चला गया। शुक्र था कि वो भी आज शाम घर पर ही थे अन्यथा संदेश छोड़ कर

लौटना पड़ता । उस दिन वह उसी समय अपना मोटर साइकल लेकर आ गए थे ।

घर पहुंचा तो काली अभी भी वैसी हालत में ही बैठी थी । उसने ज़रा सी भी करवट ना बदली थी । करवट ना बदल पाना अब उसकी मज़बूरी बन गई थी । वह कोशिश तो करती थी लेकिन करवट ना बदल पाती थी । अब जैसे वह परिसिथियों से समझौता करने वाली है । पास जाने पर वह हमारी तरफ कुछ करने की उम्मीद लगाए देखती मगर मुँह से कुछ ना कह पाती । ऐसे लगता जैसे वह अपनी पीड़ा और घबराहट को बतला ना पा रही हो । ऐसे लगता जैसे हम हर तरफ से असहाय अनुभव कर रहे हो । फिर डाक्टर साहिब ने आगे बढ़ कर हाथ से उसके पेट को दबा कर देखा था, कानों को पकड़ कर उसके शरीर का तापमान जानना चाहा था, उसके गले में हाथ डाल कर कुछ अन्य बातों की जानकारी हासिल करनी चाही थी । हमने भी उसे स्वस्थ करने के लिए जो खिलाया था, वह बता दिया । डाक्टर के आने से पहले स्वयं उसका उपचार करना चाहा था । थोड़ा सा तिल का तेल उसके हलक में उड़ेला था । खल और गुड़ भी खिलाया था । आस पड़ोस के मित्रों को बुला कर उसे अपने पांवों पर खडे करने के अनेकों प्रयास भी हम कर चुके थे । तिल के तेल से उसकी टांगों की मालिश भी हमने की थी । जैसा हमने किया था बैसा ही हमने बता दिया । उसने भी अत्यंत गंभीरता से सुना, जाँचा, परखा था फिर अपने बैग में से कुछ टीके काली की गर्दन के पास लगाए थे । कुछ दवाएं पर्ची पर लिख कर बाजार से ले आने के निर्देश दिए । फिर उसने ढाढ़स बँधाया था कि इन टीको से उसके शरीर में ताकत भी आए गी और उसे थोड़ी राहत भी मिलेगी । एक दो घंटे में इसका अपने पाँव पर उठ कर खडे होना मुमकिन हो सकेगा । आप चिंता ना करें । कल सुबह तक काली स्वयं चल कर अपनी शैड तक आ जाय गी । इतना कह कर उसने पास लगे वास वेसिन में साबुन से अपने हाथ धोए थे और वैग उठा कर अपने मोटर साईकिल के पीछे रख लिया था । मैंने भी धन्यवाद के साथ उनकी फीस दी और कल दोवारा एक फिर उसकी आ कर जाँच करने की उनसे विनय की थी । हाथ में पकड़ाए ढाई सो रूपये देख़ कर डाक्टर साहिब भी खुश हुए और कहने लगे कि हमारे लिए इन मूक पशुओं को देख़ कर हाथ पर हाथ रख कर बैठना बड़ा कठिन है । हम इसे कभी कभी महसूस भी करते हैं । फिर वो टैलीफोन पर हाल चाल पूछ लेने की बात कर अपना मोटर साईकल स्टार्ट कर चले गए । उनके पीछे पीछे मै भी एक बार फिर से दवाई लेने बाजार की तरफ चला गया था, मन मैं थोड़ी बहुत आस, उम्मीद लिए ।

केवल हम ही नहीं बल्कि हमारे आस पड़ोस के सभी लोग उसके इस तरह से अचानक बीमार हो जाने से दुखी अनुभव कर रहे थे । समय आता तो सभी उसकी बाऊली के लिए ततपर रहते थे । मेरी पत्नी बारी बारी सभी पड़ोसियों के लिए उसके पहले दूध की बाऊली बना कर बड़े चाव के साथ भेजती थी । छाछ की आस मैं तो

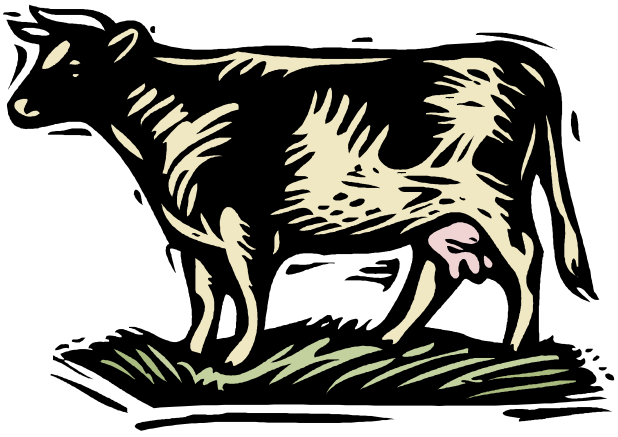

सभी हमेशा रहते । उसकी छाछ की कड़ी बना कर तो सभी बड़े स्वाद से खाते । रसोई मैं बनते खाने मैं से काली के घी की भीनी भीनी खुशबु आती तो हम सभी के नथुने खिलखिला जाते । मेरी धर्मपत्नी जब चावल बनाते समय उसका घी डालना कभी ना भूलती क्योंकि उससे चावलों का स्वाद दुगना हो जाता और भीतर तक मन को स्वाद स्वाद कर जाता था । उसके दूध का दही इतना सघन, मोटा और स्वादिष्ट होता कि सभी उसे खाने को लालयत रहते । हरेक अपने घर के आँगन की फूलबाड़ी को हरा भरा रखने और उसमे उगे पौधों और फूलो को खिलते, हँसते, चहकते देखने और रखने के लिए उसके गोबर की खाद ले जाकर उनकी जड़ों मैं डालते । अभी सड़क पर हम कुछ कदम ही आगे बढ़े थे कि सांझी राम जी मिल गए । बजुर्ग थे, एक समझदार और सियाने इंसान । पशुओं और जानबरों की बीमारियों की बिशेष जानकारी रखने बाले और निस्बार्थ भाव से काम करने बाले नेक इंसान । गाय के बीमार होने का समाचार सुन कर हमारे घर की तरफ ही आ रहे थे ।

काली के पास पहुंचते ही उसने अपनी सर्दी ढकने के लिए ओढ़ रखी खेस की बुकक्ल को उतार कर पास के एक छोटे से बृक्ष पर रख दी थी । फिर उसने काली की पीठ थपथपाई थी । उसके गले पर अपने खरबे हाथो से धीरे धीरे प्रेम भरी मालिश की थी । काली ने भी प्रेम से लथपथ होकर अपने कानों को फड़फड़ाया था । बज़ुर्ग जैसे उसके दिल की भावना को समझ गए हों । फिर प्यार से मेरे पास आ कर कहने लगे -----'लगता है इस की गोद भरी है । कमज़ोरी से वह बहक गई है । भाई जब तक इस का प्रसव नहीं होगा तब तक यह उठ नहीं पाए गी । आप चाहे कुछ भी कर लो । उसकी बात सुन कर मन पहले से भी अधिक चिंतित हो गया था । फिर वह कुछ देर के लिए हमारे पास बैठा । काली की बीमारी को लेकर कई प्रकार विचार विमर्श हुआ लेकिन रात उतर आने की वजह से कुछ भी करना मुश्किल होता चला गया । मैं उनको कुछ देर और रुकने के लिए कह कर बाजार दवाएं लेने चला गया ।

बाजार से दवाएं लेकर आया तो बज़ुर्ग जा चुके थे । मुझे एक अजीब सी चिंता ने घेर लिया था । रात सर्द और लंबी थी । काली के लिए अभी किसी आरजी छत का इंतज़ाम करना अत्यंत जरूरी था । थोड़ी देर के लिए मेरी

पत्नी ने उसके पास आग जलाई और उसे थोड़ी गरमाहट देने की कोशिश की। फिर मैं भी उठ खड़ा हुआ और इधर उधर से कुछ बल्लीयां इकठा कर यहां काली बैठी थी वहां उसके चारों तरफ ख़डी करके उसके ऊपर तरपाल विछा कर एक छोटा सा छपपर तैयार कर दिया ताकि रात भर उसे सर्दी और कोहरे से बचाया जा सके। उस रात मैं कई बार जगा था। पूरी रात हम दोनों सो ना पाए थे। नींद जैसे कोसों दूर चली गई थी। नींद से पलकें बंद होने को आती तो झट काली का ध्यान आ जाता। हम झट से उठ कर बैठ जाते। कर कुछ नहीं सकते थे फिर भी कभी मैं और कभी मेरी पत्नी उसकी सहायता के लिए उस तरपाल की बनाई झोपडी में उसे देखने चले जाते। जब भी उसे हमारे पावों की आवाज आती उसे झट से पता चल जाता। उसका काँपता, थरथराता गले से निकलता स्वर हमें बताता कि वह जान गई है कि हम आ गए हैं। पास जा कर तरपाल उठा कर उसकी तरफ नज़र उठाते तो हमें देख़ कर काली अपने कान फड़फड़ाती अपनी पूँछ हिलाती और धीरे धीरे उसके गुरगुराने की आवाज सुन कर मेरे मन को कुछ तसल्ली मिलती। मैं सोचता किसी तरह आज की रात निकल जाए तो सुबह किसी अच्छे डाक्टर की सलाह ली जाए। इस सिलसिले में कभी मैं उसके पास बैठता या कभी मेरी पत्नी उसके पास जाकर बैठती। पूरी रात ऐसा क्रम चलता रहा। इसी आस में कि कब सूरज निकले और हम इस गाय का कष्ट हरने के लिए फिर से कुछ करें। यह गाय हमें सिखा रही है कि बड़ी से बड़ी मुश्किल आने पर घबराना नहीं चाहिए, ना मन से ना कर्म से। अनिश्चिचता और भय के वातावरण में प्रेम की बहुत क़ीमत होती है। थोड़ा सा प्यार देकर भी तुम पशुओं को भी संभल प्रदान कर सकते हो। प्रात: सूर्य की किरणे इधर उधर बिखरने लगीं तो मैंने बलियों पर औढ़ी तरपाल को उठाया। काली को जुगाली करते और आँखें पीछे की तरफ मोड़ते देख़ कर मन खुश हुआ। वह उसी तरह बैठी हुई थी जैसे शाम को बैठी थी। सूर्य की किरणों से काली के जिस्म में थोड़ी गरमाहट आने लगी और हम सभी को अपने पास खडे देख़ कर उस का मन खुश हो गया। उसने ज़ोर से अपनी गर्दन हिलाई थी। मैंने थोड़ा सा चारा एक टोकड़ी में डाल कर उसके आगे रखा तो वह वैसे ही खाने लगी जैसे हमेशा खाती थी। हम सभी वेशक पूरी रात जागते रहे थे और थके हुए थे फिर भी सब से पहले काली की तरफ ही आए थे। मेरी पत्नी भी उसी तरह थकी हुई बाल बिखरे हुए, कपड़े वही मैले जो कल शाम को पहने हुए थे। शाम को उसकी बहन का फोन आया था। उसने उसे भी किसी प्रकार टाल दिया था कि वह कल किसी कारण उसके घर नहीं आ सकती। हमारा पूरा परिवार काली को इस हाल में देख़ कर भावुक हो उठा था।

जब उसने चारा खा लिया तो हम उसे एक बार फिर से उठाने में लग गए। असफल रहने पर मैं डाक्टर साहिब को बुलाने चला गया था यह सोच कर कि अगर वो काम पर चले गए तो फिर शाम को ही आ पायंगे। अगर जाने से पहले एक बार देख़ लें तो शायद कोई दवा दारू हो सके। मैंने डाक्टर साहिब का दरवाजा खटखटाया था वो भी किसी उत्ताहट के बाहर बरामदे में आ गए थे ऐसे जैसे उनका जीवन इन मूक पशुओं के लिए ही है। मैंने रात की पूरी कहानी, पूरी उठक बैठक उनको सुना दी थी। वह झट से तैयार होकर मेरे साथ चले आए थे। उनका दवाईयो वाला थैला तो हमेशा की तरह मोटर साईकल के पीछे लटका था। घर आ कर डाक्टर साहिब ने एक बार फिर से अपने मनस्पटल पर ज़ोर देते हुए अपना बैग उठा कर काली के पास आ कर उसे पुचकारा था। काली ने भी शांत रहते हुए अपनी पूँछ भी हिलाई और कान भी फड़फड़ाए। डॉ साहिब ने अपने अनुभव को खंगालते हुए कुछ टीके उसकी गर्दन की तरफ लगाए थे। जो दवाई रात को मँगबाई थी वह भी लगाई थी। और कुछ समय के लिए प्रतीक्षा करने की सलाह दी थी। लेकिन अब दोपहर उतर आई थी और काली पर दवाईयों का कुछ असर ना हो पा रहा था। आस पड़ोस के लोग भी अब काली का हाल चाल पूछने आने लगे थे। सभी अपने अपने अनुभवों को साँझा करते और बताते कि ऐसा करो तो काली अपने पैरों पर ख़डी हो जाएगी। कोई कहता इस को तिल के तेल में खल बडेवें मिला कर दो। कोई कहता मोटी इलायची के साथ अजबायन को तिलों के साथ दो। इस तरह कोई कुछ कहता कोई कुछ। जितने मुँह उतनी बातें। लेकिन हमने भी हर किसी की बात को सिर माथे पर रखते हुए सब कुछ किया कि किसी तरह काली ठीक हो जाए। लेकिन ज्यों ज्यों दिन बीतते गए हमारी आशा कम होती गई। किसी प्रकार का रत्ती भर असर भी ना हुआ। वह लगातार बारह दिन तक कड़कती सर्द रातों में भी बाहर बैठी रही। आख़िर किसी ने किसी और डॉक्टर को बुलाने की सलाह दी। उस डॉक्टर को भी बुलाया गया।

जिस दिन डॉक्टर साहिब आए उस दिन धूप खिली हुई थी मैंने हर रोज़ की तरह तिल के तेल से उसके शरीर और टांगों की मालिश की हुई थी। उसने भी काली को अपने लंबे अनुभव से जाँचने की कोशिश की। हमने भी पिछले बारह दिनों में किये गए प्रयासों को बताया था। आख़िर सब कुछ देखने और सुनने के पश्चात उसने काली को गुलुकोस चढ़ाने की सलाह दी। हमने भी उसी समय उन्हें दवाई और गुलुकोस ला कर दे दी जो उन्होंने लिखकर दी थी। थोड़ी देर के बाद उन्होंने एक एक कर के कैल्शियम की दो बोतलें काली को चढ़ा दीं। लगभग आधा घंटा गुज़र गया तो काली ने अपना पूरा बल अपनी अगली टांगों पर लगा कर उठने का प्रयास किया। एक बार तो ऐसा लगा कि बह अभी उठ कर ख़डी हो जाएगी। लेकिन अगले ही

बाजार से दवाएं लेकर आया तो बज़ुर्ग जा चुके थे। मुझे एक अजीब सी चिंता ने घेर लिया था। रात सर्द और लंबी थी। काली के लिए अभी किसी आरजी छत का इंतज़ाम करना अत्यंत जरूरी था। थोड़ी देर के लिए मेरी पत्नी ने उसके पास आग जलाई और उसे थोड़ी गरमाहट देने की कोशिश की।

पल अपना साहस छोड़ कर बैठ गई। पास खडे हम सभी ने उसे खूब हल्ला शेरी दी और उसे उत्साहित करने का काम किया। लेकिन उसकी टांगें थी कि उसका भार सहन ना कर पा रही थीं। एक बार फिर से मेरे पास खडे एक पड़ोसी ने उसके पूरे बदन की मालिश की थी। लेकिन अब बह पूरी तरह असहाय हो कर बैठ गईं थी। कुछ देर के बाद डॉक्टर साहिब मेरे पास आ कर कहने लगे,'भाई साहिब, कहीं इसे किसी ओपरी शै ने तो नहीं पकड़ रखा?'मैं आज के इस युग में उसकी बात सुन कर आवाक रह गया। क्या ऐसा भी हो सकता है?मैंने मन ही मन सोचा था। फिर मैंने धीरे से उनके कान में कहा,'क्या बात करते हो डाक्टर साहिब? वह बोले,'विश्वास तो हम भी नहीं करते लेकिन कभी कभी ऐसी बातें सच्ची प्रतीत होने लगती हैं। अब तो हमारी आपको एक ही सलाह है कि किसी सयाने को बुलायो जो इस की झाड फूँक करे। कुछ लोग पेड़ा आमंत्रित करके भी देते हैँ। हमने तो अपनी तरफ से काफ़ी दवाई खिलाई है इसे। लेकिन इस पर जितना असर होना चाहिए था वो उतना दिखाई नहीं देता। फिर वो कहते कहते चुप हो गए और अपना वैग समेटने लगे। मैं भी अब तक खामोश खड़ा इधर उधर देखने लगा था। मेरा मानसिक संतुलन कुछ कुछ बिगड़ने लगा था। अनेक प्रश्न मेरे मानसिक पटल पर हथोड़ो की तरह चोट करने लगे थे कि अब क्या किया जाय। डॉक्टर साहिब की सलाह मान कर किसी सयाने को बुलाया जाय अथवा डॉक्टर साहिब को अपना इलाज जारी रखने को कहा जाय। इस उठक पटक में मैं डॉक्टर साहिब से अपना इलाज जारी रखने का अनुरोध कर थोड़ी देर के लिए पास ही पडे स्टूल पर बैठ गया था। डाक्टर साहिब ने मुझे सांत्वना देते हुए हौसला ना छोड़ने की सलाह दी और कल सुबह फिर चैक अप के लिए आने को कह कर हम से विदा ली।

डाक्टर साहिब के चले जाने के पश्चात् मेरी पत्नी चाय बना कर लें आई थी। आस पड़ोस के कुछ लोग इकठा हुए थे, मिल बैठ कर सब चाय पीने लगे और विचार विमर्श भी करने लगे थे। हमारे एक पड़ोसी ने कहा कि मै सुबह हर रोज़ पास सटते गांव में एक गुज्जर परिवार से दूध लेने जाता हूँ। उन्होंने अनेक मवेशी रखे हुए है। उनका सारा दिन उनके पालन पोषण में ही गुजरता है। उन्हें यह धंधा विरासत में ही मिला है। उनके पशुधन के लिए मैंने कभी भी किसी डाक्टर को स्वस्थ करने हेतु आते नहीं देखा। वे सभी अपने इस धंधे में इतने पारंगत हैं कि स्वयं ही अनेक प्रकार की जड़ी बूटियों और मंन्त्रों आदि के उच्चारण से उन्हें स्वस्थ करने में कामयाब हो जाते हैं। अगर कहो तो उन से बात करूँ? उसने अपने मन की बात हमारे सामने रख दी थी। लेकिन मेरा हृदय इसे स्वीकार करने में कुछ हिचकिचा रहा था। हम खामोश उसकी बात सुनते रहे। चायपानी समाप्त हुआ तो एक निराशाजनक स्थिति चारों तरफ व्याप्त थी।

आज हमारा पड़ोसी सुबह सुबह नियाज अली को अपने साथ लेकर आ गया था। बर्षो से वह बाजार में एक हलवाई की दुकान पर अपने मवेशियों का दूध देने आता हैं। बह भी हर प्रात:सूरज निकलने से पहले उसके यहाँ दूध लेने जाता था। बर्षो से ऐसा क्रम चलता आ रहा था।

घर में प्रवेश करते ही वह सीधा काली के पास चला गया था। हम सभी पहले से ही उसके पास खडे थे। मै उसे चारा डाल रहा था। उसे देख़ काली एक दम से सतर्क हो गईं थी। मेरे पास आकर उसने उसकी ऐसी हालत के बारे में अनेक प्रश्न पूछे थे। फिर काली की पीठ पर हाथ फेरा, उसे प्यार से दुलारा और थपथपाया था। मवेशियों के साथ रहते उन्हें पीढ़ियों हो गए थे। मुवेशियों की मुश्किलों और बीमारियों को वह झट से समझ जाते हैं। अनेक प्रकार की देसी दवाईयों का प्रयोग वह बर्षो से इन्हे स्वस्थ करने के लिए करते आ रहे हैं। अब तो वह झट से देख़ कर बता देते हैं कि उन्हें क्या हुआ है। पशु क्या चाहता है। उनका तो काम ही पशुओं के साथ उठना बैठना सोना जागना है। इस लिए उनके अनुभव का लाभ अवश्य उठाना चाहिए। कुछ देर जाँचने के पश्चात् उसने मुझसे एक पानी का गिलास मंगवाया था। पानी से हाथ मुँह धोया और बाकी पानी कुछ काली पर छिड़का और कुछ का छिड़काव चारों तरफ कर दिया। फिर हाथ जोड़ कर अपने भगवान को याद किया। थोड़ी देर बाद मुझे कहने लगा --'भाई, आप की गाय सूने वाली है। सब से पहले इसका प्रसब कराना पड़ेगा। इससे वह स्वयं ही स्वस्थ हो जायगी। इतना कह कर वह सीधा अपने मोटर साईकल के पास हैंडल पर लटके थैले को उतार कर ले आया। उसमें से पोटली निकाल कर खोली और मुझे थोड़ा देसी घी ले आने के लिए कहा। मैं भी झट अपनी रसोई में से देसी का डिब्बा ला कर उसके सामने रख दिया। लगभग आधा डिब्बा उसने उस पोटली में पड़ी दवाई पर उडेल दी और अपने हाथो से उसे खूब मसला। जब वह उस में पूरी तरह से मिल गई तो उसने उसे काली के आगे रख दिया। काली ने उसे सूघा और झट से खाने लगी। कुछ ही मिनटों में उसने उसे चट कर लिया। हरेक के चेहरे पर एक आशा की किरण दिखाई देने लगी थी।

अब वह थोड़ा और आगे बड़ा। उसने मुझे एक लंबा और मोटा रस्सा लाने को कहा। साथ ही पांच सात नौजवानों को भी बुलाने के लिए कहा ताकि इसे ज़ोर लगा कर उठाया जा सके। रस्सा हाथ में लेकर उसे जांचा परखा था। फिर उसने उसे बड़ी युक्ति से काली के गले से निकाल कर पीछे की तरफ ले जा कर दूसरी तरफ से गांठ दे कर बांध दिया और सभी को एक साथ ज़ोर लगा कर ऊपर की तरफ उठाने को कहा था। सभी ने ऐसा ही किया और काली ने खुद भी ज़ोर भरा और उठ ख़डी हुई। अब वह अपने पांवो पर ख़डी थी भले ही उसके पाँव लड़खड़ा और टांगे कांप रही थी। उसने विना समय गंवाए स्वयं तिल के तेल की मालिश की। सभी काली को ख़डी देख़ कर ख़ुशी से झूमने लगे। काली वेशक दस मिनट तक ही ख़डी रह पाई थी फिर भी नियाज अली आश्वस्त था कि वह अवश्य पहले की तरह चलने फिरने लगेगी। फिर कहने लगा कि अब हर रोज़ आप को इसे इसी तरह उठाना है। इसको तेल की

मालिश करनी है। किसी पशु को उठाने का सब से कारगर तरीका है यह।

अगली सुबह वह फिर से आ गया था। दवाई भी बना कर खिलाई और रस्सा बांध कर काली को सभी की सहायता से उठाया भी। इस बार काली का हौसला भी बुलंद था। उसने खुद भी ज़ोर लगाया था। आज वह काफ़ी देर तक अपने पांवो पर ख़डी रही थी फिर खुद ही वह बैठ गई थी। सभी का हौसला बड़ा था। हमें पूरी तरह से आशा बंध गई थी। अब काली अवश्य स्वस्थ हो जायगी।

दिन गुज़र गया था। रात उतर आई थी। चारा डाल कर हम सोने चले गए थे। काली क़े स्वस्थ होने की आशा हमारे मनों में हिलोरे लेने लगी थी।

सुबह हुई तो हर रोज़ की भांति सबसे पहले मेरे कदम उसकी तरफ बड़े थे। वह अपनी जगह पर खुरली क़े सामने ख़डी थी। आज मेरी तरफ देख़ कर वह ज़ोर से रम्बाई थी। एक छोटा सा बछडा उसके पास ही इधर उधर उछल कूद कर रहा था। मैंने ख़ुशी की हवा पर सवार हो कर अपनी धर्म पत्नी को आवाज लगाई थी।

अरे देखो, काली स्वयं अपने पांवो पर ख़डी हो गई है। एक नया मेहमान भी हमारे घर आया है। मेरे शब्दों में भावुकता और स्नेह स्पष्ट झलकता दिखाई दिया था। मेरा मन, मेरा शरीर मेरा आस पास सब कुछ हल्का हल्का महसूस करने लगा था। मुझे लगा जैसे मेरा सब कुछ बापस लौट आया हो। मैंने मन ही मन नियाज अली का ह्रदय की गहराइयों से शुक्रिया अदा किया। मुझे लगा जैसे वह कह रहा हो कि विपत्ति क़े समय में कभी कभी धैर्य भी और युक्ति भी प्रभावी औषधी का काम करतीं है।

लघुकथा

डोली शाह

पोस्ट -सुल्तानी छोरा,जिला-हैलाकंदी
असम-788162

"नारी शिक्षा का महत्व"

राधा पढ़ाई में शुरू से ही सदा अब्बल रही लेकिन उसके पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी ना होने के कारण वह उसकी आगे की पढ़ाई जारी रखने मे असमर्थ थी,पर राधा अपने आगे की पढ़ाई जारी रखने के लिए कटिबद्ध थी। इसलिए विपरीत परिस्थिति मे भी उसने बी ए तक की पढ़ाई खुद ट्यूशन पढाकर पूरी कर ली ।उसी दौरान अपने साथ पढ़ने वाले सहपाठी रमेश से उसकी दोस्ती हो गई, यह दोस्ती धीरे-धीरे प्यार में बदल गयी तो दोनो ने परिवार की सहमति से विवाह बंधन मे बंध गये ।दोनो की शादी के साल भर बाद ही भगवान की कृपा से एक संतान भी तोहफा के रूप राधा को मिल गया।

संतान की खुशी अपनो के बीच बांटने के लिए राधा अपने पति के साथ मिल कर एक पार्टी देने का निश्चय की। उसी की तैयारी मे वह दोनो बाजार से कुछ सामान जाने गये थे ,सामान लेकर वापस घर लौट रहे की अचानक राधा के पतिदेव चक्कर खाकर जमीन पर गिर गये, किसी तरह राधा उनको लेकर अस्पताल ले गयी, अस्पताल मे डाक्टर ने पतिदेव की हालत निराशा जनक देख ,जो हो सकता दवा दिया ।साथ ही कह दिया आप इनको अब घर ले जाये क्योकि इनको गम्भीर दिल का दौरा पडा है,अब यह कुछ
ही पल के मेहमान है। आप घर ले जाकर इनकी सेवा कीजिए और भगवान से प्रार्थना करे,

डाक्टर की बात सुनकर राधा के आखों के सामने अंधेरा छा गया। वह सोचने लगी पति के न रहने पर उसका और उसके बच्चे का भविष्य क्या होगा ।यह राधा सोच ही रही थी कि उसके पति ने अंतिम सास ली और सब को बैसवारा छोडकर दुनिया से चला गया।

आखों के सामने यह सब देख राधा विचलित हो गयी ,उसे समझ नही आ रहा धा कि अब वह अकेले क्या करेगी,

राधा को परेशान देख उसके पिता ने उसके सिर पर हाथ रख कर बोले ,तुम इतनी पढ़ी- लिखी हो कुछ भी करके अपना जीवन- यापन कर सकती हो, इतनी चिंता ना करो बेटी, दुख की घड़ी में भी यह बात मेरे लिए आत्मविश्वास का एक नई चिंनगारी जगा गई।

पति के मृत्यु के एक महीने बाद से ही राधा नौकरी के लिए आमंत्रण पत्र भरने लगी। उसका प्रयास सफल हुआ, 6 महीने के अंदर ही उसे अध्यापिका के पद पर नियुक्ति मिल गयी, जिससे वह अपने बच्चे का भी जीवन- यापन भली-भांति करने में सफल हो गई। बेटी को आत्म निर्भर देख उसके पिता उसके घर आकर पीठ थपथपाते हुए बोले बेटा- आज तुमने मुझे गलत साबित कर दिया हर पिता को भी कितनी भी मजबूरियों के बीच कम भोजन करके भी उन्हें बच्चों को उनकी पढ़ाई से कभी वंचित नहीं करना चाहिए।तुमने आज एक नयी राह दिखाया कि लड़कियों को भी आत्म निर्भर बनाने के लिए उसको भी शिक्षा दिलाना उतना ही जरूरी है जितना एक लड़के को...।

कहानी

दिवा शंकर सारस्वत 'प्रशांत'

"यादों का भंवर"

बाहर जोरदार बारिश शुरू हो चुकी थी।आसमान काले बादलों से घटाटोप था। रह रह कर लपलपाती बिजलियों की कड़कड़ाहट और बादलों की भयंकर गर्जना, ऐसा लग रहा था कि अब प्रलय अधिक दूर नहीं है।

उत्तर काशी के एक घर में दुबकी अवंतिका के चेहरे की मुस्कुराहट और आँखों की चमक अब गायब होती जा रही थी।जिसका उसे बरसों से इंतजार था, वह पूरा होने वाला था लेकिन अब इस प्रलयकारी बारिश तो!उफ्फ!कई आते जाते सवालों को मन में ही झटक कर अवंतिका कमरे से निकल कर रसोई घर में पहुंची।

वहां उसकी माँ रात के डिनर बनाने में लगी व्यस्त थी।

अवंतिका एक पल को रुकी। मन में उठ रही आशंकाओं को मन में ही छिपाने की नाकामयाब कोशिश करने लगी। पर माॅ की आंखों से क्या छिपता है।

साधना एक पल को रुकी। आज वह अपनी बेटी अवंतिका को एक बार फिर से चुप कराना चाहती थी। पर रुक गयी। शायद वह जानती थी कि उम्र के पायदान के साथ साथ माॅ और बेटी का रिश्ता बदलता जाता है। बढती आयु के साथ माॅ बेटी की सखी बन जाती है। उसे सही और गलत बताने के लिये हुक्म से आगे बढकर मित्रता की सीढियाँ चढती है। पर फिर कुछ और आयु के बाद यह दोस्ती भी मंद करनी होती है। आखिर अब बेटी को उसके पलों के साथ छोड़ना होता है।

वे पल जो केवल और केवल अवंतिका की यादों का हिस्सा हैं।हर बार तेज बारिश में वह उन्हीं यादों के झंझावात से जूझती है। पर आज वह ज्यादा बैचेन है। मन ज्यादा ही अस्थिर है। वैसे किसी की नजर में आज चिंता का कोई कारण नहीं है। पर माॅ तो माॅ है। सब जानती है। सचमुच चिंता की बजह है।

" अरे। तूने अभी सतीश को फोन कर पूछा नहीं। वे घर पहुंचे या नहीं। ऐसे मौसम में कहीं रास्ते में अटक तो नहीं गये। साथ में उनकी माॅ भी तो है।"

साधना ने बात को घुमा दिया। अवंतिका भी यादों से बाहर आ गयी। सचमुच वह पागल ही है। सतीश को निकले कितना समय हो चुका है। उसे पूछ लेना चाहिये।

,सतीश अवंतिका का मंगेतरएक होनहार नवयुवक। जल्द ही दोनों की शादी होने बाली है। वैसे दोनों के मध्य प्रेम या पूर्व पहचान जैसी कोई बात नही है। वह तो सतीश की माॅ को ही अवंतिका कहीं पसंद आ गयी। आखिर केवल लड़की बाले ही लड़के की तलाश में नहीं भटकते। लड़के बालों को भी अच्छी लड़की की तलाश रहती है। किसी न किसी तरह वही उसके घर का पता कर चली आयी थी। फिर बातचीत.... ।लड़का और लड़की की रजामंदी.... वे सारे चोचले जो एक अरेंज मैरिज की निशानी है। वैसे अवंतिका को सतीश पसंद आया या नहीं। पर नापसंद करने जैसी तो कोई बात नहीं रही। विवाह तय होने के बाद से दोनों की हर रोज एक बार फोन पर बात तो हो ही जाती है। दोनों एक दूसरे की आदतों को समझने की कोशिश कर रहे हैं।

वैसे क्या यह सत्य है कि केवल वार्तालाप से दो एक दूसरे को समझ लेते हैं। शायद नहीं। अनेकों बार समझने को पूरी जिंदगी कम पड़ जाती है। न जाने कितने विश्वासपात्र ही धोखा देते हैं।

आज सतीश और उसकी माँ अवंतिका को उसके पसंद से विवाह की खरीदारी कराने आये थे। विवाह की साड़ियाँ, लहंगा, कुछ सूट, और भी कुछ ज्वैलरी भी। जब पहनना अवंतिका को है तो पसंद भी उसकी। हालांकि ज्वैलरी ज्यादा नहीं खरीदी। कुछ सतीश की मम्मी ने अपनी खुद की ज्वैलरी उसे भेंट की थी।

अवंतिका यथार्थ में वापस आ गयी। जल्द ही मौसम साफ हो गया। आज तो चिंता नहीं है। पर आगे चिंता होगी। अब अवंतिका जल्द विवाह होकर अपनी ससुराल चली जायेगी। फिर ऐसी स्थिति में उसे कौन सहारा देगा।

अब अवंतिका अपनी ससुराल में आ चुकी है। वैसे ससुराल में ज्यादा बड़ा परिवार नहीं है। वह, उसका पति, उसके ससुर और सास। लगता है कि घर में सास की ही सबसे ज्यादा चलती है। हालांकि अवंतिका सास की ही मुख्य पसंद थी। फिर भी स्त्री स्वभाव हमेशा वर्चस्व चाहता है।

पुरानी यादें जरा फीकी हो चुकी थीं। नयी परिस्थितियों में नयी बातें जीवन का हिस्सा थीं। सचमुच वे लड़कियां सुखी होती हैं जो अपने पति के साथ अलग रहती हैं। जिनके पति कहीं बाहर नौकरी करते हैं, उन्हें यह सौभाग्य मिल जाता है। वे अपनी मर्जी की स्वामिनी होती हैं। ससुराल में रहने बाली लड़कियों की क्या हैसियत। भले ही ऊपरी तौर पर सब अच्छा दिखे पर अच्छा कब होता है।

समय बदलता है। फिर वही समय आ गया। आसमान में घने बादल छाये हुए थे। बिजली कड़क रही थी। मूसलाधार बारिश होने लगी। आज फिर अवंतिका को वही याद आ रहा था। दुर्भाग्य, आज उसे सम्हालने के लिये

उसके पास माॅ न थी।

क्या हुआ था उस रोज। उसकी क्या भूल थी। यही कि उसने विश्वास किया था।

उस रोज भी घने बादल थे। बिजली कड़क रही थी। मूसलाधार बारिश हो रही थी। और अवंतिका संघर्ष कर रही थी, खुद के सम्मान की रक्षा के लिये। वह भी उसी से जिसपर वह विश्वास करती थी। जिससे वह प्रेम करती थी। राघव और उसके साथियों के इरादे जाहिर थे। दुष्ट कौरवों के मध्य द्रोपदी अपनी लाज बचाने को कृष्ण को पुकार रही थी।

कृष्ण आये पर कलियुग में कृष्ण खुद के प्राण भी नहीं बचा पाये। मोहन ने अपने प्राण गंवा दिये। तब अवंतिका को उसका प्रणय निवेदन समझ आया।

मोहन की मृत्यु हो जाने के कारण राघव को सजा मिली। पर एक सजा निर्दोष अवंतिका को भी मिल गयी। वह तो शायद सतीश और उसकी माँ को पता न था। नहीं तो वे भी उन अनगिनत में होते जिन्होंने अवंतिका का रिश्ता ठुकरा दिया था।

आज यादों के भंवर से बाहर निकालने के लिये उसके पास उसकी माँ न थी। लगता है कि गलत है। आज भी उसके पास उसकी सासू माॅ थी। जिसने अपने बड़े स्वर्गीय बेटे मोहन की चाहत को जानकर भी अपने घर की बहू बनाया। और सच जानकर अवंतिका अपनी सास के गले लग गयी। ठीक उसी तरह जिस तरह वह अपनी माॅ के गले लग जाती थी।

लघुकथा

सपना चन्द्रा
भागलपुर (बिहार)

"बीच का"

ओह!..फिर टूट गया बटन!उपर का होता तो छोड़ा जा सकता था। पर ये तो बीच का है। मुझे मीटिंग में पहुँचने में कहीं देर न हो जाए। आज ही इसे भी मसखरी सूझी है।हमेशा ' बीच ' वाले मामले पर अटक जाता हूँ। रमेश बाबू की पत्नी रमा चार वर्ष पूर्व परलोक गमन कर चुकी थीं।बच्चे भी सभी अपने-अपने में व्यस्त।
एक बेटा और एक बेटी,दोनों ही अब्रॉड जा बसे।

रमेशजी को बुलाया जाता पर उनका दिल नहीं लगता ठीक वैसे ही बच्चों का भी था। यहाँ के लोग बहुत फुर्सत में रहते है। ऐसा उनको लगता था। अपने आप को व्यस्त रखने के लिए
रमेश बाबू समाज की सेवा में पूरी तरह लग गए थे। हर किसी की समस्या को सुनते और अपने स्तर से उसका समाधान भी निकालते। आज बटन टाँकते हुए सूई चुभ गई थी,ख्यालों में जो खो गए थे। पत्नी की एक-एक बात ,क्रियाकलाप चलचित्र की भांति दिमाग की नसों में दौड़ रही थी।

रमा को भी कई बार सूई चुभ जाती होगी। पर कभी जताया ही नहीं।आज अगर मैं अकेला न होता तो इस दर्द को महसूस नहीं कर पाता। उऽऽऽहहह...कितनी टीस मार रही है।सूई का दवाब बीच वाली अंगुली ही झेलती है।
रमा भी तो बीच सफ़र में छोड़ गई। इस बीच से मेरा संबंध इतना गहरा क्यूँ है..?

"जुगलबंदी"

"तुम हमेशा सर्तक रहते हो!दूसरों की चुगली सुनने में।"
"तुम्हारी ही मेहरबानी है। अब तुम बोलो और मैं न सुनूँ ये कैसे हो सकता है।"
कान और मुँह की वार्तालाप गंभीर हो चली थी। "अच्छा ये चुहलबाजी छोड़ो और बताओ... तुम कैसे इतनी बातें अपने अंदर समा लेते हो!थकते नहीं..?
मैं तो थक जाता हूँ कभी-कभी,पर क्या करूँ ,बिना बोले रहा भी नहीं जाता। क्यूँकि खामोशी संदेह पैदा करती है।"
"बात तुम्हारी ठीक है। मैं भी थक जाता हूँ पर शुक्र है कि हम दो हैं। इसी कारण संभाल लेना आसान है। मेरा मुड बिगड़ता है तो एक से सुनता हूँ और दूसरे से निकाल फेंकता हूँ ।"
कभी सोंचा है कि हम दोनों की जुगलबंदी न होती तो क्या होता...?" पता है न ! न ही कोई महाभारत होता न ही रामायण लिखी जाती। सदियों से हम काम पर लगे हैं। इतिहास यूँ ही नहीं बनता प्यारे....
क्यूँ सही कहा न!..ह ह ह ह ह ह..।

कहानी

सुनीता मिश्रा
भोपाल

"नकटौरा"

बारात प्रस्थान कर चुकी थी ,अब घर में औरतें ही थीं। लगातार दो दिनों से विवाह की रस्मों में उलझी,तकरीबन सभी औरतों के चेहरे पर थकान की शिकन स्पष्ट थी। कुछ औरतें मंडप में बिछी जाजमों पर पसर गईं,कुछ दोने में मोतोचूर के लड्डू और नमकीन सेव ले मंडप के पास बैठकर टूंगने लगीं ।बच्चें पूरे घर में उछल-कूद मचा रहे थे।

मर्द के नाम पर दो प्राणी थे।एक दीना काका,जो दिन भर नदी से घड़ा भर-भर कर पानी लाते और घिनौची के आले में रखते।कम से कम बीस आले की घिनौची थी। आखिर शादी का घर,मेहमानों से भरा।पानी तो चाहिये न।

दूसरा मर्द था जुगती। दो दिन हुये,घाटमपुर से लौटा था। गोपीनाथ जी के बड़े भाई की बेवा,जिन्हें पूरा घर ताई बुलाता था।(,गोपी नाथ और उनकी पत्नी को छोड़)उन्होनें जुगती को एक चिट्ठी देकर घाटमपुर भेजा था।

जुगती दुबला-पतला साधारण शक्लो-सूरत का ,निरीह सा प्राणी,जो दीक्षितपुरा के जमींदार गोपीनाथ जी के यहाँ खेत की रखवाली से लेकर घर के भी काम करता।

परिवार की बहुयें जुगती से परदा नहीं करतीं थीं।

कभी कभी तो जरूरत होने पर उससे वे हाट-बाज़ार से बिन्दी,काजल,महावर,बालों के किलिप मँगवा लेतीं।

शाम गहराने लगी।लालटेनों का प्रकाश फैल गया।तुलसी चौरा पर साँझ का दिया जल गया।दुछत्ती पर दीना काका ने अपना डेरा डाल लिया।जुगती भी वहीं आ गया।आज मचान पर नहीं गया।जमींदार मालिक का ऑर्डर रहा।ज़मीदारी चली गई तो क्या,रुतबा तो है।

चैत का महीना,रात की हवा में सुरसुराहट है।हुक्का तो चाही।गर्माहट होय शरीर मा।गुड़गुड़ाहट से तनिक सुर- -सुराहट को आराम तो आये।दीना काका के लिये हुक्के का इन्तजाम किया गया।

महराजिन बुआ ने चूल्हा सुलगा लिया,कढ़ाई चढ़ी है।शुद्ध घी गरम हो रहा है,बिली हुई पूरियाँ राह देख रहीं हैं ,घी में डूबने के लिये,सिकने के लिये।जेवनार तैयार।

चैत का महीना,रात की हवा में सुरसुराहट है।हुक्का तो चाही।गर्माहट होय शरीर मा।गुड़गुड़ाहट से तनिक सुर- -सुराहट को आराम तो आये।दीना काका के लिये हुक्के का इन्तजाम किया गया।महराजिन बुआ ने चूल्हा सुलगा लिया,कढ़ाई चढ़ी है।शुद्ध घी गरम हो रहा है,बिली हुई पूरियाँ राह देख रहीं हैं ,घी में डूबने के लिये,सिकने के लिये।जेवनार तैयार।

पत्तल में पूड़ी,दोने में आलू की रसीली सब्जी,रायता बूंदी का,और बालूशाही। जो महक फैली,कि औरतों का आलस टूट गया।

"अरे उठो भई सब लोग।नकटौरा न होई का।समधियानें के दरवज्जे बारात पहुँच गई होयेगी।अब देर न करो।खाव पियो औ तैय्यार हो जाव ।"ताई की अवाज ने सजग कर दिया औरतों को।

जालौन,उरई ,कन्नौज,उन्नाव,ओरैय्या,एटा सभी जगह से आईं,छोटी,बड़ी-चाची,मामी,बुआ,मौसी,बहिनें झटपट उठ बैठीं।

पंगत बैठी।हँसी-ठठ्ठा के बीच ज्योनार हुआ। दुछत्ती पर भी पत्तल पहुँचा दी गई।

जेवनार खत्म हुई।अब नकटौरा की तैयारी।कौन क्या बनेगा।ताई तो तैयार हो के आ गईं।धोती-कुर्ता ,कन्धे पर पंचा,सिर पर टोपी,माथे पर तिलक,बन गई पंडित।

एटा वाली भाभी ने पहिना सूट,बूट,बाँधा सेहरा ,कन्धे पे डाली कटार,जँच गईं,बन के दुल्हा।

बँट गईं दो हिस्से में औरतें ।आधी वर पक्ष,आधी कन्या पक्ष की ओर से।

अब दुलहिन कौन बने।ताई ने निर्णय सुना दिया।

"दुलहिन बनेगी कुसुम।गोपी लाला की दुलहिन,कुसुम के गहने ले आव ,औ उसे पहना देव।"उन्होनें अपनी देवरानी को हुक्म दिया।कुसुम,----गोपीनाथ की पत्नी और ताई की साझा बिटिया।पिछले साल इन्हीं दिनों,इसी जगह मंडप बना था, कुसुम के विवाह का।कन्या दान ,गोपीनाथ और उनकी पत्नी ने किया।फेरे हुए।विदा की बेला आई।

अचानक कुसुम के श्वसुर तारक चंद, गोपीनाथ से प्रश्न कर बैठे -"समधी जी ,जरा कन्या का कुल गोत्र तो बतायें?"
चौंक गये गोपीनाथ।किस दुश्मन ने विष बीज बो दिये ,तारक चंद के कान में।

संभल कर बोले"कैसी बात कर रहें हैं तारक जी।जो हमारा कुल गोत्र वही बिटिया का।"

"गोपीनाथ,आप हमें भरमाय रहे।कन्या आपके कुल की नहीं है।और हम बेनाम कुल की कन्या को अपनी कुल वधू नहीं बना सकते।"

ताई पर जैसे काली माई का क्रोध उतर आया-बोलीं "तारक चंद,अरे अधर्मी!कन्यायें, शक्ति स्वरूपा होतीं हैं ।उनके कुल-गोत्र नहीं होते।वे तो कुल-गोत्र अपनी कोख में पालतीं हैं,उन्हें जनमतीं हैं।"

"ताई ,जो मर्जी आये कह लो,मैं अपने वंश से खिलवाड़ नहीं कर सकता।अच्छा हुआ भेद खुला।गोपीनाथ तो सब छुपा गये थे हमसे।"

"बहुत अज्ञानी हो तारक चंद।भाँवर पड़ी कन्या को इस तरह उसके मायके में छोड़ जाना ठीक नहीं।बहुत कलपोगे।"ताई का सुर थोड़ा भीगा,और दृढ़ अधिक था।

"जो कह दिया सो कह दिया।उठोकमल----चलो।" तारक चंद ने दुल्हा बने बेटे को आदेश दिया।

कमल ने पिता के आदेश का विरोध करने का प्रयास किया।पर सफल न हो पाया।
कमल घाटमपुर में नौकरी करता,बी ए पास,एकलौता बेटा था तारक चंद का।

अज्ञानी रहे तारकचंद।नहीं समझ पाये कुल गोत्र से भी ऊपर एक गोत्र है।प्रेम-गोत्र।जो कमल की आंखों में कुसुम बन कर समा गया,और कुसुम के दिल में कमल खिल गया।

नकटौरा का स्वांग अपने-अपने हिस्से का सब औरतों ने भर लिया।
ताई एकटक कुसुम को देख रहीं थीं।
सत्रह साल पहले एक नवजात बच्ची गोपीनाथ के खेत की मेड़ के पास कपड़ों में लिपटी मिली।पता नहीं कौन किस्मत की मारी ने अपनी ममता को यूँ मरने के लिये छोड़ दिया था। गोपी लाला इसे घर ले आये।मेरे और गोपी की दुलहिन के छाँव में पल गई कुसुम।

"ताई ,का सोच रई?खेला शुरू हो जाय।"जालौन वाली मामी,वर्तमान में लौटा लाईं ताई को।

नकटौरा शुरू।जो-जो,वहाँ बारात में घट रहा है,वो-वो यहाँ भी खेला जायेगा।
बारात का द्वारचार,समधी मिलन,स्वागत बारातियों का।ठीक वैसे ही जो वहाँ घटित हो रहा है।ढोलक धमक उठी ,गाने गबे।दुल्हा-दुलहिन मंडप में बिठाये गये।मन्त्रोच्चार हुए।कन्या दान की रस्म भी हुई।दुलहिन कन्या के पैर पूजे गये।

खूब हँसी-ठठ्ठा,मज़ाक,कहीं कहीं द्विअर्थी भान कराते गीत ,हमारी पम्पराओं का जीवन्त अहसास दिलाते। लगता ,औरतें अपनी भावनाओं को प्रगट करने की स्वतंत्रता का अधिकार मांगती हों।चूल्हे-चौके से दूर,खुली हवाओं में अपने अस्तित्व की महक घोलना चाहतीं हों।

"अब वर-वधू फेरों के लिये तैयार हो जायें"।ताई ने पंडताई स्वर में उदघोष किया।

ठीक इसी वक्त दो फटफटियाँ मंडप के सामने आकर रुकी।तीन नकाबपोश मंडप के अंदर घुसे।एक ने बन्दूक तान ली"कोई भी अपनी जगह से हिलेगा नहीं।हमें अपना काम करने दो।"
सबकी साँसे बंद।मज़ाल है,किसी की धड़कन की आवाज़ सुनाई पड़ जाय।

दीना काका को कुछ संदेह हुआ।वो उठे।नीचे जाने के लिये बढ़ते कि जुगती ने उनका हाथ पकड़ लिया -"रुक जाओ काका।नीचे न जाओ।ये भी नकटौरे का एक हिस्सा है।"

नकाब पोश मे से एक आगे बढ़ा।उसने कुसुम का हाथ पकड़ा और उसे लेकर मंडप के बाहर की ओर निकला।उसके पीछे उसके साथी भी हो लिये।फटफटियों की आवाज़ आई,और खेला खतम।

बहुत देर तक मंडप में सन्नाटा रहा।कुछ औरतें दहशत में थीं।कुछ के, जो करीबी रिश्तें में थीं,माज़रा कुछ कुछ समझ में आ रहा था उनके।फिर भी औरतों में तरह-तरह की अटकलों के साथ खुसर-पुसर जारी थी।

ताई पूजाघर में अपने कन्हैया के सामने मत्था टेके बैठी थीं। गोपीनाथ जी की पत्नी महराजिन बुआ को भोजन पकाने से सम्बन्धित जानकारी दे रहीं थीं ।

दोपहर होते होते बारात,नव वधू को लेकर आ गई। बहू का स्वागत हुआ।दरवज्जा रुकाई हुई।नेग हुए।घर के भीतर कदम रखे नयी बहू ने।
जुगती ने आकर ताई के कान में कुछ कहा।ताई के चेहरे पर संतोष और होठों पर हलकी सी मुस्कराहट झलकने लगी।

गोपीनाथ ने ताई से पूछा-भाभी ,का हुआ?। इस प्रश्न में बहुत से प्रश्न समाए थे।ताई ने सबके उत्तर न दे केवल इतना कहा-
"ना कुछ लाला।आज कन्हैया की कृपा बरसी हम पर।अपने घर एक बिटिया आई है और एक बिटिया अपने घर गई।"

कहानी

श्यामल बिहारी महतो
बोकारो, झारखंड
फ़ोन नं 6204131994

"जियो और जीने दो"

' आखिर उसने जो कहा,कर ही डाला '
मंच,मंच पर हमने नेताओं का रूप बदलते, पार्टी बदलते औरनीतिबदलते भी देखा है। लेकिन यह आदमी तो जरा भी नहीं बदला। लोग क्या कहेंगे,लोग क्या सोचेंगे - एक पल भी नहीं सोचा । अपने भाव, अपनी विचारों को खुला रूप देते, सार्वजनिक करते हुए उन्हें ज़रा भी संकोच नहीं हुआ। ज़रा भी सोचा -विचारा नहीं उसने। डंके की चोट पर, एक दम से खुला-खुला ! आओ बुढ़वा खेलें होली। अपने रंग हजार। जीवन एक बार ही मिलता है -बार-बार नहीं। जितना हो सके, हंसी -खुशी से जी लो ।यह दुनिया एक मुसाफिरखाना है । एक सराय है । रैन बसेरा ।जीने के लिए जो सांसें मिली है, उसे पूरा पूरा जी लो ।यह जीवन भी एक सराय ही है । यहां कोई अपना कोई पराया नहीं । पैसा हैं तो प्यार है, पावर है तो सब हैं, पास-पास ! क्योंकि पैसा है तो प्रेम है । पैसा नहीं तो सब तरफ विरानी, उजाड़ ! मलाल ! ऐसा जीवन से अच्छा है प्रेम से दो पल जी लो - जी उठोगे "
यह किसी महान संत का विचार या किसी दार्शनिक की कही बात नहीं थी । बल्कि अपने ही गांव के शंभू काका का कथन था।

वह एक बुजुर्ग सम्मेलन था। खुला मंच था । हर किसी को अपनी बात रखने की खुली छूट दी गई थी। और कहने वाले भी कहने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ रहे थे। किसी ने जीवन की तरक्की में आई रूकावटों का रोना रोया, कोई पेंशन लागू न होने पर रूदन विलाप किया तो कोई मंहगाई पर भस्म कर देने वाली विचारों से सरकार को श्रद्धांजलि देकर उत्तर गया। लेकिन शंभूवा काका एक दम निराले निकले। उसकी एक एक बात निराली थी। बातों से लगता जैसे कोई युवा किसी वार्षिक सम्मेलन में अपने जीवन के सपनों को सार्वजनिक कर रहा हो " सोचता हूं फिर सांघाबिहा कर लूं " कह लोगों को चौंकाया था। उसने कहना जारी रखा " काफी दिन हो गए शादी किए। जब हमारी शादी हुई थी, बाराती पैदल और दुल्हा गरूगाडी (बैलगाड़ी) पर होता । तब तिलक-दहेज नहीं होता, दुल्हन ही दहेज है,कहा जाता । पहले वरमाला नहीं होता, दुल्हे का द्वार लगी होता, शादी के पहले लड़का लड़की को देख नहीं पाता,अब वरमाला के साथ ही लड़के को लड़की सौंप दी जाती है " देखा- देखी कर लो, संग संग नाच लो, फोटो सोटो खिंचवा लो " यह देख मेरा भी जिया ललचा उठा । और इसी के साथ फिर सांघा करने को, मेरा मन मचलने लगा । पहले बेरोजगार था, एक साइकिल और एक गाय तिलक दहेज के रूप में लड़की के साथ भेज दिया गया था । अब रोज़गार में हूं । नौकरी है, अच्छी खासी सेलरी है, घर है, गाड़ी है, बैंक बैलेंस है, यार दोस्तों के

बीच अच्छी पकड़ है, किसी चीज की कोई कमी नहीं है। बस रात को उल्लू की तरह जागता रहता हूं । पहली वाली तो बेवफा निकली,लोक छोड़ परलोक में जा बसी । उसकी याद में आंसू बहाता रहता हूं। मुझे रोता देख एक दिन उसने आकर कहा " मेरी याद में कब तक आंसू बहातेरहोगे, दूसरी कर ले, तुम्हें तकलीफ़ होती होगी । मैं मान गया । अब मन फिर बाप बनने को उकसा रहा है । तिलक दहेज नहीं चाहिए, सिर्फ एक जोड़ी कपड़े में लड़की विदा कर दो..!" वह एक पल को रूका था । सभा स्थल में खुसरफुसर होने लगी थी " किस सनकी पागल को माइक थमा दिया गया है,जो मन में आ रहा है, बके जा रहा है..!"
" कल और आज का फर्क बता रहा है..!" कोई बोल उठा।
" हमें तो लग रहा है,यह सभा को संबोधित नहीं, अपनी दूसरी शादी का प्लान बता रहा है..!"

" पर बोल तो अच्छा रहा है..!" उस पर लोग बोलने शुरू कर दिए थे।
पर शंभूवा काका का रेडियो बंद नहीं हुआ था । विविध भारती की तरह उसने चालू रखा " बुजुर्गों ने भी फ़रमाया है कि यह दुनिया एक सराय है। एक मुसाफिर खाना है। जब तक जीवन है जिते ही जाना है । यही नहीं,लोगों को बीच बीच में शादी-बिहा करते रहना चाहिए, जैसे पहले के बुढ़- बुजुर्ग किया करते थे और जैसे आज के नेता लोग बीच बीच में पार्टी बदलते रहते हैं और लड़कियां दोस्त ! फिर हम पीछे क्यों रहें? आखिर उम्र ही क्या हुई है मेरी ! पचपन का हूं पर दिल तो बचपन का है, अच्छी खासी सेलरी है और क्या चाहिए.आज की लड़कियों को ? पैसे वाला हो तो आज की लड़कियां बुढ़ा-सुढा, काला-गोरा और ठिगना भी नहीं देखती और सीधे हां कर झपट लेती है - जैसे बाज़ कबूतरों पर झपटता हैं..!"
" कर लो ! कर लो ! " कुछ ने उकसाने वाली आवाज लगाई ।

" तशेड़ी, नशेड़ी,गंजेड़ी, चार पांच लाख तिलक पा रहा है..!" शंभूवा काका कहते रहे " माना कि वे कुंवारे हैं, अरे,तो हमें भी कुंवारे समझ लो न,घंटा भी फर्क नहीं पड़ेगा। बोलो, कोई मेरा दूबाराबिहा करवा सकते हैं, कोई दूर द्राष्टा ! कोई महानुभाव है ! बिहा सिर्फ मेरे साथ होगा, हमारे घर परिवार के साथ नहीं । जीवन भर का साथ मैं दूंगा। हमारे घर परिवार से उसका कोई लेना देना नहीं रहेगा । परिवार का किसी तरह का भार उस पर पड़ने नहीं दूंगा। खाना भी उसे बनाना नहीं पड़ेगा । बर्तन भी मांजने नहीं पड़ेंगे । लेकिन लड़की किसी जाति की नहीं होनी चाहिए - बस सिर्फ लड़की होनी चाहिए। वह फेसबुक,वाटशप, ट्विटर और इंस्टाग्राम वगैरह में सिर्फ चेटिंग करने का काम करेगी, हमेशा ऑनलाइन रहेगी और ऑनलाइन खाना मंगवा कर मुझे खिलाएगी और खुद भी खाएगी । सप्ताह में एक दिन हम किसी पार्क में घूमने जायेंगे, फोटो शूट करेंगे और फिर किसी दिन किसी नदी में नहाते, किसी झरने के नीचे अपनी कोमल देह को सहलाते-नहलाते वो फोटो शूट करेंगी..! फिर उसे फेसबुक पर अपलोड़ करेंगी । इंस्टाग्राम में चेपेंगीं और हर साल हम शादी सालगिरहमनायेंगे,जो अभी तक हमने पहली के साथ नहीं मनाए थे..! क्या कहा आपने ? पहली शादी के बारे बताऊं, और बेटा-बेटी के बारे भी बताऊं, ठीक है तो सुनिए..

चालीस साल पहले बिना तिलक दहेज की मेरी शादी हुई थी। तब मेरी उम्र यही कोई बारह साल की होगी, और हाई स्कूल तेलो में वर्ग आठ में पढ़ता था। मूंछ दाढ़ी अभी निकली नहीं थी और हाथ में मोबाइल नहीं कॉपी किताबें होती थी। आज तो पैदा होते ही बच्चों के हाथ में मोबाइल आ जाता है और कितने तो मोबाइल के साथ ही पेट से निकल आते हैं जैसे महाभारत का कर्ण कवच कुंडल पहने पैदा हुआ था । हमारे भी तीन बेटे पैदा हुए। जैसे किसी युग में तीन भगवान पैदा हुए थे, ब्रह्मा,बिष्णु और महेश ! तब से कइयों युग गुजर गये। लेकिन अब धरती पर भगवानों ने पैदा होना बंद कर दिया। अब वे सिर्फ स्वर्ग और नरक का काम देखते हैं । हालांकि हमारे तीनों बेटे बड़ी सरलता से पैदा हुए। किसी ने हस्पताल का मुंह नहीं देखा और न आज के बच्चों की तरह किसी हस्पताल का नाम उनके नामों के साथ जुड़ा ! पर सभी के साथ कुसराइन (गांव में बच्चा पैदा कराने वाली चमारिन) नाम जरूर जुड़ा हुआ था । अपने लालन पालन में भी उन तीनों

ने कोई मुश्किल पैदा होने नहीं दी और तीनों जर्मन सेफर्ड की तरह पले -बढ़े ! बड़े हुए तो, एक एक कर हमने तीनों की शादी कर दी, तब भी वो नहीं बदले,तब भी वो तीनों जर्मन सेफर्ड की तरह आज्ञाकारी बने रहे । लेकिन मेरे नहीं - अपनी-अपनी पत्नियों के ! तभी से उनकी सोच बदली थीं - हमारे प्रति। अपने बाप के प्रति। बाप के जीवन और ज़िन्दगी के प्रति। साल भर पहले की बात है। छः माह पहले पत्नी मर चुकी थी । बाहर कड़ाके की ठंड पड़ रही थी । मैं अपने कमरे में कंबल ओढ़े गठरी बने बैठा हुआ था । तभी सुबह आंगन में आग के अलाव को घेरे तीनों जर्मन सेफर्ड बेटों के बीच गुफ्तगू हो रही थी। शुरुआत बड़े ने की । कह रहा था " रिटायर होने के पहले अगर बाप किसी कारण वश मर जाता है, तो बाजार चौक की वो दस डिसमिल वाली जमीन मैं लूंगा। उस पर मैं एक शानदार " शंभू मार्केट " प्लेस बनाऊंगा और सभी किराए पर लगा दूंगा। यही मेरा रोजी रोजगार होगा ..।"

" नहीं, नहीं, ऐसा नहीं होगा..।" मांझिल ने एतराज जताया " उसमें मेरा भी हिस्सा होगा। बाप के मरने के बाद मिलने वाले सारे पैसे हम दोनों बांट लेंगे ..।"
" आप दोनों तो बड़े मतलबी निकले। जमीन में दोनों का हिस्सा, रूपए भी दोनों बांट लेंगे और मैं क्या बाबा का घंटा बजाऊंगा। मैं क्या पेड़ की खोंढर से पैदा हुआ हूं !"

छोटकाछटाक भर उछल पड़ा था ।
" अरे छोटे, नाराज़ काहे होते हो । तुम्हारे लिए नौकरी तो हम दोनों छोड़ ही रहे हैं। तुम मज़े से नौकरी करना..। "
" नहीं, नहीं,भले पैसे मत देना, लेकिन मार्केट में दो कमरा मुझे भी चाहिए..!"
" ठीक है, मंजूर..।" बड़ा बोला।
" ठीक है ..। " ,मंझिला भी सहमत।
" तो फिर ठीक है,तब मुझे एतराज नहीं। "
तीनों ने मेरा उसी दिन तेरहवीं पार कर दिया ।
" आज के श्रवण !" भीड़ से किसी ने कहा।
" तभी मैंने निश्चय कर लिया, जर्मन सेफर्ड बेटों की सोंच और उनके हसीन सपने पर सुतली बम लगाने का...! " शंभूवा काका कहते चले गए " काम पर मैंने अपना और बेटों के प्लान के बारे अपने कुछ खाश दोस्तों को बताए । कुछ ने मजाक में लिया और कुछ ने बेहद गंभीरता से।
" गजब की कुंठित चाहत, बाप अभी मरा नहीं और घर में जलाने के समान आ गये ..!" एक साथी ने कहा
" आज कोई अपना नहीं,सबका सपना मनी -मनी !" दूसरा बोला ।
" शंभूदा, जिंदगी तो वही है, जो अपनी मर्ज़ी से जिया जाए, कौन क्या कहता है, क्या सोचता है,कान देने की जरूरत नहीं..!" तीसरे ने जीवन की लोजिक बताया ।
उस दिन के बाद से ही मैंने रातों को सोना कम कर दिया और जागना शुरू कर दिया। कहीं ऐसा न हो जिस छत के नीचे की कड़ी से बेटों के लिए कभी झूले लगा दिए करते थे, क्या पता किसी दिन उसी कड़ी से बेटे बकरे की भांति मुझे टांग दें ..!" शंभूवा काका की बातों ने एक समा सा हो बांध दिया था। कहिए तो कुछ कुछ सहमा सा दिया था ।

जो लोग शुरू में उनकी बातों से उकता कर जाने को उठे थे, पुनः अपनी जगह पर दिल थाम कर बैठ गए थे । शाम होनी अभी बाकी थी। उनका भी और उस सभा की भी।
जीवन की ढलान पर शंभूवा काका के अंदर एक तुफान सा उठा था। समाज की गोष्ठी - बैठकों में जाते रहता था । कह रहा था " एक दिन समाज की मीटिंग से शाम को रामगढ़ से घर लौट रहा था। गोला चौक में दो स्त्री - पुरुष के बग़ल में एक लड़की गाड़ी के इंतजार में खड़ी थी। पता चला पेट्रोलियम पदार्थों के मूल्य वृद्धि के विरोध में सवारी गाड़ियां दिन भर रोड़ पर नहीं चली । और शाम हो चली थी। पर गाड़ियों का अब भी पता नहीं था। तीनों परेशान दिखे। मैंने गाड़ी रोक दी और बाहर निकल आया । पूछा -
" क्या बात है..?"
" हमें बहादुरपुर जाना है और कोई गाड़ी मिल नहीं रही है..।" लड़की ने बताया।

" मैं उधर ही जा रहा हूं, फुसरो, चाहो तो मेरे साथ आप लोग चल सकते हैं ।"
" डेढ़ दो घंटा से खड़े हैं, एक भी गाड़ी नहीं आई..!" स्त्री ने आदमी की ओर देखा।
" और रूकना ठीक नहीं है..!" आदमी का मुंह धीरे से खुला ।
" मां,आओ, इन्हीं के साथ चलते हैं..!" लड़की बोली और गाड़ी के बग़ल में आकर खड़ी हो गई। मैंने गेट खोल दिए। वह आगे मेरे बगल की सीट पर आकर बैठ गई। मां बाप दोनों पीछे की सीट पर समा गये । मैंने गाड़ी आगे बढ़ा दी। पहली बार मैंने लड़की का अवलोकन किया। गौर से देखा। अंदर से महसूस किया। मासूम लगी । वह आगे देख रही थी। सूनी मांग !पर आंखों में सपनों की उड़ान बाकी !
लड़की विधवा थी और पेट से भी थी । कुदरत की करिश्मा कहिए या जीवन का संयोग। घंटा भर पहले मीटिंग में विधवा विवाह पर मेरे जोरदार भाषण को लोगों ने तालियों की गड़गड़ाहट से स्वागत किए थे । मैं कह रहा था " हर विधवा स्त्री को, एक और ज़िन्दगी जीने का अवसर मिलना चाहिए। एक ही जिन्दगी में उसका सब कुछ खत्म नहीं हो जाता!" अपनी ही कही बातें याद आ रही थीं मुझे ।
" आप क्या करते हैं..?" अचानक से वह पूछ बैठी।
" नौकरी..!"
" घर कहां हुआ..?"
" मुंगो गांव..!"
" पत्नी क्या करती है?"
" वह चल बसी, इस दुनिया में नहीं है..!"
वह चुप हो गई। एक बार उसने मुझे देखा और कुछ पल मूडी गड़ाए बैठी रही । शायद कुछ सोचने लगी थी । मेरे बारे, अपने बारे या फिर समय की विडंबना पर ।
बहादुरपुर आ गया था । सामने विशाल शिव मंदिर खड़ीथी । बुढ़ा बाबा का एक और घर ! मैंने गाड़ी रोक दी और बाहर निकल आया। पूर्णिमा का चांद आसमान पर उग आया था । इक्का दुक्का लोग आ जा रहे थे । जैसे शाम को लोग टहल को निकले हों ।सबकीअपनी धूनअपनी चाल !

" बाहर.आ जाओ.!" मैंने लड़की से कहा। वह बेधड़क गाड़ी से नीचे उतर आई । आगे बढ़ कर मैंने उसका हाथ थाम लिया। वह सहजता के साथ मेरे सामने खड़ी हो गई । निरखने सा भाव-मुद्रा ! ऊपर-नीचे ताकने लगी ।
उसकी कोमल हथेलियों को सहलाते हुए मैंने कहा " मेरे साथ, हमारे घर चलोगी? मैं भी जीवन में अकेला हूं,अब तुम भी अकेली हो गई हो । शायद इसी लिए जीवन के मोड़ पर किस्मत ने हम दोनों को मिलाया है । उम्र में भले बड़े हूं पर बूढ़ा नहीं हूं । आखिरी सांस तक साथ दूंगा। कभी किसी चीज की कमी होने नहीं दूंगा..!"

" मैं,.. मेरे पेट में बच्चा पल रहा है...!" वह हकलाई थी।
" सब कुछ देख, समझ कर ही मैंने यह प्रस्ताव रखा है " बच्चा, तुम्हारे नयनों का तारा होगा और मैं तुम दोनों का माली.- शंभू माली.. शंभू नाम है मेरा !"

" मैं फूलमती, फूलमतीमहतो.!" उसने मेरी आंखों में झांका । जहां उसे एक पूरा जीवन मंडल विराजमान नजर आया । तब उसने मां बाप की ओर देखा, हमें गाड़ी से उतरे देख वे दोनों भी उतर गए थे और अचंभित भाव पूर्ण नजरों से हम दोनों को देख रहे थे.. "

" फिर क्या हुआ...?" भीड़ ने पूछा ।
" क्या आप लड़की को साथ लेते आए..?"
" लड़की के माता पिता ने क्या कहा..?"

" तभी उसकी मां आगे बढ़ी थी ..!" सवालों के जवाब समेटते हुए शंभूवा काका ने कहा -" पहले तो उसने बेटी के सर पे हाथ रखा और मंदिर के अंदर चली गई। लौटी तो उसके हाथ में कागज से लिपटी सिंन्दुर की पुड़िया थी । पुड़िया उसने मेरे हाथ पर रख दी और बेटी से कहा -" यह सिंन्दुर मांग में भर लो बेटी ! भगवान घर का है, सदा जगमगाती रहेंगी..!"

" शादी के छः माह बाद ही तुम्हारी किस्मत में छेद हो गई। अब उसी किस्मत ने तुम्हें एक मौका फिर दिया है, जाओ बेटी, इस फ़रिश्ते के साथ सदा खुश रहना !" बाप ने फूलमती के सर पर हाथ रख दिया था..!"

" घर में स्वागत हुआ या आफ़त आई...!" किसी ने बीच में फिर पूछ बैठा।

" धमाका हुआ ! जर्मन सेफर्ड बेटों के सपनों पर सुतली बम फट गया ..!" शंभूवा काका ने जैसे जीत की डफ़ली बजाते कहा था " बहादुरपुर से छूटे तो हम सीधे बोकारोमॉल में जा घुसे। फूलमती की वेश भूषा भी तो बदलनी थी । नये परिधानों में वह सचमुच की फूलकुमारी लग रही थी । खुद का नया रूप देख खुद से शर्मा गई और देर तक मुझसे लिपटी रही । रास्ते में हमने एक होटल में खाना खाये । घर पहुंचे तो रात काफी हो चुकी थी और सभी अपने अपने कमरे में गहरी नींद सो रहे थे। हमने किसी को जगाया नहीं और हमेशा की तरह किसी ने उठ कर हमसे पूछा नहीं कि " खा कर आ रहे हो, या खाना भी है..!" हमेशा की तरह हमने अपने पास की चाबी का इस्तेमाल किया। पहले गाड़ी अंदर की फिर फूलमती को बाहों में लिए अंदर अपने कमरे में समा गए। लगा बहुत बड़ी जंग जीतकर लौटा हूं। सोए तो दोनों यही दुआ कर रहे थे कि इस रात की फिर सुबह न हो। लेकिन फिर सूरज उगा, फिर सुबह हुई, और ऐसी सुबह हुई, कि बहुतों के सालों साल की नींद उड़ा दी। कौवे छत की मुंडेर से उड़ गए और मैनों ने डाल बदलने से मना कर दिया।

सुबह सबसे पहले फूलमती ही उठी । शौचालय से निवृत्त होकर मुझे उठाया। आंगन में जर्मन सेफर्ड पुत्रों को

अपनी पत्नियों के संग खड़े पाया । बड़ा पुत्र दहकते अंगारों सा आंख किए आगे बढ़ आया " पापा,यह आपने क्या कहर बरपाया ? बुढ़ापे में दूसरी शादी कर लाया..!"
बड़े का शह पाकर मांझिल भी बढ़ आया -
" लोग क्या कहेंगे ज़रा भी न सोचा , खुद को जवान समझा, क्या है यह लोचा..?"
तभी छोटा था फुसफुसाया " खाने को बप्पा को कोई नहीं पूछता था। आज बप्पा ने हम सबके खाने में जहर मिलाया..!"
" कल तक बप्पा को कोई पूछ नहीं रहा था। आज बप्पा का किसी का साथ पाना बहुत अखर रहा है । जाओ तीनों मिल बना लो शंभू मार्केट। लगा दो किराए पर, हम चले अपनी राह..!" कह साबुन तौलिया लिए मैं बॉथरूम में जा घुसा और फूलमतीमुर्झाए सूरजमुखी पौधों को पानी देने लगी ..।"

कहानी

अंतिम निर्णय

मैथानी साहब जब तक सेवा में रहे सब ठीक ही चल रहा था। यह भी कह सकते हैं कि घर–गृहस्थी की गाड़ी उनके अनुकूल सुचारू रूप से चल रही थी, लेकिन सेवानिवृत्त होते ही कुर्सी तो गयी ही उनके अपने भी दूर होने लगे। सबसे पहले उनकी जीवन संगिनी ने ही जिन्दगी की गाड़ी अकेले खींचने के लिए उन्हें छोड़कर चली गयी। वह शायद भविष्य दृष्टा थी। जानती थी कि पति जिनके लिए खून–पसीना एक करके जो बना रहे हैं, वही सब अवसर आने पर उन्हें तिरष्कृत एवं उपेक्षित करने में जरा भी देर नहीं करेंगे, उसने अपने बेटों की आँखों पर स्वार्थ का चश्मा चढ़ते शायद देख ली थी और तब पति का अपमान सह नहीं पायेगी। इसीलिए अपने हमराही को राह में ही छोड़कर चली गई।

पत्नी के जाते ही मैथानी साहब के बेटों ने रंग दिखाना शुरू कर दिया। माँ थी तो टोका–टाकी भी करती थी। पर मैथानी साहब देखकर भी अनदेखा कर देते। शायद यह उनकी विवशता भी थी। तभी तो सबसे पहले उनके दो बड़े बेटों ने सोचा कि पिता से अब कोई आर्थिक सहयोग तो मिलेगा नहीं ऊपर से उनकी स्वतंत्रता में भी खलल पड़ेगा। इससे तो अच्छा है उनसे किनारा ही कर लिया जाये दोनों ने अलग किराये के मकान में जाकर गृहस्थी बसा ली।

छोटा बेटा अखिलेश अभी भी उनके साथ था। उसकी पत्नी भी उसके साथ नौकरी करती थी। उनके दो बेटे थे जो अभी पढ़ रहे थे। इसीलिए उनकी मजबूरी थी। अभी तो वह लोग आफिस जाते है और देर रात घर लौटते हैं। ऐसे में मैथानी साहब घर पर ही रहते हैं। बच्चों को कोई कष्ट नहीं होता। अगर वह लोग भी अलग रहने की व्यवस्था करेंगे तो थोड़ी स्वतंत्रता तो अवश्य मिल जायेगा पर उससे अधिक परेशानी भी बढ़ जोयगा, दूसरी बात यह भी है कि पिता के साथ रहने से किराये का भी कोई चक्कर नहीं पिता का मकान है ही। न पानी का, न बिजली का बिल देने की चिन्ता। बच्चों की भी छोटी–मोटी आवश्यकताएं यथावत दादा जी से पूरी हो जाती रहेगी। बच्चों की देखभाल भी करते ही रहेंगे। फिर भी वह पिता से अलग रहने का मन बनाने लगा। चिड़िया का बच्चा भी तभी तक माँ–बाप के घोंसले में रहना पसंद करता है, जब तक उसके पंख नहीं निकलते। लेकिन जैसे ही पंख निकल आते और आकाश में उड़ने लगता है। इसीलिए समय के साथ जैसे ही मैथानी साहब के छोटे बेटे अखिलेश के अनुकूल परिस्थिति होने लगी। उसकी इच्छाएं भी बलवती होने लगे। उसे भी अपने बड़े भाइयों की तरह पिता की अधीनस्थता खलने लगा। एक दिन पिता के सम्मुख प्रस्ताव रखा–पापा! बच्चे अब बड़े हो गये हैं। वह दिन भर छुट्टी के दिर बेकार में इधर–उधर भागदौड़ करते रहते है। आपको ठीक से आराम भी नहीं करने देते.... अगर आप कहें तो हम लोग ऊपर शिफ्ट कर लें और आप नीचे आराम से रहें।

राजेन्द्र परदेसी

अब तक 18 काव्य, कहानी साक्षात्कार ,निबंध संग्रह पर पुस्तकें- हताश होने से पहले,दूर होता गाँव,सृजन के पथिक,भारत-नेपाल कथा संगम आदि कृतियाँ प्रकाशित .

संपर्क-136,मयूर रेज़िडन्सी , फरीदनगर ,लखनऊ – 226015,मो-9415045584

मैथानी साहब ने सोचा बेटा ठीक ही तो कह रहा है। ऊपर का हिस्सा खाली ही तो पड़ा है। जब यह लोग रहेंगे तो उस हिस्से की भी साफ–सफाई हो जाया करेगा। बच्चे भी बड़े हो रहे हैं उनके यार दोस्त तो आयेंगे ही। इन्हीं सब पर विस्तार से मनन करने के बाद अपनी स्वीकृति दे दी–'ठीक ही तो....'

उधर मैथानी साहब के बड़े बेटों को छोटे भाई की योजना का पता चला तो वह पिता के पास आकर प्रतिरोध के स्वर में बोले–'अखिलेश, अपने परिवार के साथ नीचे रह ही रहा था तो फिर आपने उसे ऊपर रहने की स्वीकृति क्यों दी।' सहानुभूति भी दर्शाया–अगर, ऊपर वाले हिस्से को आप किसी

को किराये पर दे देते तो कुछ पैसे ही आपके हाथ आ जाते। अखिलेश से तो आप किराया लेंगे नहीं।'

तुम लोगों से तो लेता न था, अखिलेश से क्यों लूंगा' मैथानी साहब ने भी उनके अलग होने की पीड़ा को कम करते हुए उत्तर दिया।

तब बात दूसरी थी'

अब क्या हो गया' मैथानी साहब ने अपने दिल की बात को भी कह दिया–हमने तुम लोगों को अलग जाकर रहने को तो नहीं कहा था। तुम लोग अपने मन से जाकर किराये के मकान में रह रहे हो।'

हाँ परेशानी हो रही थी।'

तो तुम्हीं लोग ऊपर जाकर रहते, किसी ने रोका तो नहीं था।'

बड़े बेटों के पास पिता की बात का कोई उत्तर नहीं था। केवल कुंठा रह गई थी। इसीलिए खींझ में बोले–ठीक है, आपका मकान है, आप जो चाहें सो करें।' चेतावनी भी दिया–लेकिन बाद में हमलोगों से मत कहियेगा कि अखिलेश यह कर रहा, वह कर रहा है।

ठीक है, कहने कुछ नहीं आऊँगा' कहकर मैथानी साहब ने बात को समाप्त कर दिया।

धीरे –धीरे सब कुछ सामान्य हो गया तो, अखिलेश और उसकी पत्नी भी ऊपर के हिस्से में ही अपनी अलग गृहस्थी बसाने की प्रक्रिया शुरू कर दी। मैथानी साहब बहू–बेटे को रसोई का नया सामान लाते देख कहते भी कि तुम्हारी माँ की रसोई में तो यह था ही फिर बेकार नया क्यों खरीदकर लाये। बहू–बेटा ऐसे अवसर पर मौन साध लेते। बिना कुछ उत्तर दिये ऊपर चले जाते। उनके मन में भविष्य की क्या योजना बन रही है। मैथानी साहब इसका अनुमान नहीं लगा पा रहे थे।

ऊपर सिफ्ट करने के कुछ माह तक भी छोटी बहू उसी रसोईघर में खाना पकाती रही जहाँ उसकी सास बनाया करती थी। परन्तु जब उसने अपने सपनों का किचन सजा लिया तो मैथानी साहब के सम्मुख एक दिन प्रस्ताव रखा–पापा! ऊपर नीचे चढ़ने उतरने में पैर में दर्द हो रहा है। इसीलिये अगर आप कहें तो सभी का खाना ऊपर ही बना लिया करें और आपका खाना नीचे लाकर लगा दिया करेंगे। इस तरह बार–बार उतरना–चढना नहीं पड़ेगा.... वैसे आप जैसा कहें?'

ठीक ही तो है.... उसमें मुझे क्या कहना है?' बहू के कष्ट को समझते हुए मैथानी साहब ने अपनी सहमति जताई।

ससुर की स्वीकृति से बहू को अपना सपना साकार करने का अवसर मिल गया। अब नीचे की जगत ऊपर के रसोईघर में नया चूल्हा जलने लगा। छोटी बहू अपने पति और बच्चों का खाना ऊपर ही लगा. ती। मैथानी साहब का थाली नीचे आकर दे जाती। मैथानी साहब जहाँ पहले परिवार के अन्य लोगों के साथ ही बैठकर भोजन करते। लेकिन नयी व्यवस्था की तहत अकेले खाने को मजबूर हो गये। प्रारम्भ में यह उन्हें अच्छा न लगता लेकिन जीने के लिए भोजन करना आवश्यक था। नियति मानकर स्वीकार करना पड़ा। बेटे–बहू के प्रस्तावों के साथ धीरे–धीरे समझौता करने के आदी हो गये।

अचानक एक दिन छोटी बहू ने उनके सम्मु ख नया प्रस्ताव रखा–पापा! मैं देख रही हूँ। आपको अकेले खाना अच्छा नहीं लगा रहा। आप भी खाने के समय ऊपर आ जाया करें। हम लोगों को आपके साथ भोजन करने में खुशी होगी।

इधर मैथानी साहब घुटने के दर्द को लेकर कुछ परेशान थे। अखिलेश से कई बार कह भी चुके थे कि चलकर किसी डॉक्टर से दिखा दो। आजकल–आजकल में महीनों बीत गये, पर बेटे अि खलेश को छुट्टी ही नहीं मिली। उन्हें ऊपर सीढ़ियाँ चढ़कर जाना कष्टप्रद था। परन्तु बेटे–पोतों का मोह उन्हें स्वीकृति देने के लिए मजबूर कर दिया–ठीक है बहू, तुम्हारी ही बात सही... मैं ही ऊपर आ जाया करूंगा।'

समय के साथ हवा का रूख बदलने लगा था। छोटे–बेटे और बहू की नजर में भी मैथानी साहब की उपयोगिता अप्रासंगिक होने लगी थी। वह उनके लए उपयोगी नहीं, बल्कि बोझ लगने लगे थे। परन्तु सामाजिकता के भय से वह उनके साथ प्रत्य क्ष ऐसा कोई व्यवहार नहीं करते जिससे पिता की नज़रों में बूरे बने। पर अप्रत्यक्षरूप से उनका व्यवहार मैथानी साहब के प्रति उपेक्षा का ही था।

मैथानी साहब ने भी हवा को देखा था। उन्हें यह तो आभास होने लगा था कि अखिलेश और उसकी पत्नी के व्यवहार में वह अपनापन नहीं है। जो अब तक था। फिर भी वह बेटे–बहू को अपने दर्द का आभास होने देना नहीं चाहते थे।

छोटी बहू के हर कार्य में उसके पति अखिलेश की स्वीकृति रहती थी। फिर भी वह पिता के सम्मुख सीधे न आकर अपनी पत्नी के माध्यम से अपनी योजनाओं को मूर्तरूप दे रहा था। तभी तो एक दिन छोटी बहू मैथानी साहब के सम्मुख उपस्थित होकर बोली–'पापा! मैं देख रही हूँ कि आपको ऊपर चढ़ने में कष्ट होता है।' जैसे वह जानती ही न हो, 'क्या बात है?'

बेटी, घुटने में दर्द रहता है।'

तो डाक्टर को दिखाते क्यों नहीं।'

अखिलेश से कई बार कह चुका हूँ, उसे छुट्टी ही नहीं मिलती।'

मैं आज ही शाम को कहती हूँ। पहले जाकर आपको किसी अच्छे डाक्टर को दिखा लाये।'

ठीक है.....लेकिन बहू तुम कुछ कहने आयी थी।'

मैं कह रही थी कि आपके घुटने में दर्द रहता है तो आप सीढ़ियाँ न चढ़े। मैं ही आपको थाली नीचे लगा दिया करूँगी।' घड़ियाली आँसू भी बहाया। 'आपके बिना खाने का टेबुल सुना तो लगेगा..... पर आपका कष्ट भी तो देखा नहीं जायेगा।'

बेटे–बहू के मन में क्या पक रहा है। मैथानी साहब समझ नहीं सकते थे। नया प्रस्ताव आया तो अपने घुटने की दर्द को महसूस कर बुझे मन से स्वीकृति दे दी। सोचा आदमी को सभी कुछ एक साथ तो मिल नहीं सकता। उसे तो अपनी प्राथमिकता तय करना ही पड़ता है।

नये प्रस्ताव के अनुरूप मैथानी साहब के लिए भोजन की थाली नीचे आने लगी। परन्तु उसमें सभी व्यंजन नहीं रहते थे, जो ऊपर की रसोई में पकते। धीरे–धीरे थाली का समय भी अनियंत्रित होने लगा। बहू अपने पति–बेटे को भोजन करा लेती। तब खाली होने पर ससुर के लिए थाली लाकर दे जाती। थाली में रखे सामग्री तब तक ठंडी हो जाती थी। कभी–कभी वह बेटों के हाथ ही थाली भेजवा कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ बैठती थी।

मैथानी साहब परिवार के अपनों का व्यवहार देखकर धीरे–धीरे टूटने लगे थे। उनके अन्दर प्रतिरोध करने की क्षमता भी क्षीण हो गयी थी। परिणाम यह हुआ कि छोटी बहू कभी कभार भोजन की थाली बिना नीचे रखे ही अपने आफिस चली जाती। कार्यालय से वापस आने पर बहू को मैथानी साहब बताते तो वह ढोंगी का रूप धारण कर रूआंसी आवाज में सफाई देती–पापा मुझसे गलती हो गई, आफिस जाने की देर हो रही थी। इस कारण यह भूल हो गई' सहानुभूति बटोरने के लहजे में पूछती – आपने तो आज अभी तक कुछ नहीं खाया..... मैं अभी बनाकर लाती हूँ।'

रहने दो, मैंने ओंकार से पूड़ी मंगवाकर खा लिया है।'

आज मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गई। भविष्य में ध्यान रखूंगी।' सीढ़िया चढ़ते–चढ़ते छोटी बहू बोली।

कुछ दिनों तक व्यवस्था ठीक–ठाक पुनः चलने लगती, पर अधिक समय तक नहीं, मैथानी साहब शुरू में यही समझते थे कि बहू काम की व्यवस्ता के कारण यह भूल कर देती है। पर जब भूल के कारण क्रम बढ़ने लगा तो उन्होंने बहू से शिकायत करने की अपेक्षा अपनी स्वयं की व्यवस्था करने का निर्णय कर लिया। स्थानीय टिफिन वाले से अपने लिए दोनों समय खाना मंगाने लगे।

प्रारम्भ में बेटे–बहू व्यवस्था की जानकारी होने के बाद भी अंजान बने रहे। ऊपर से नीचे थाली रखना भी छोड़ दिया। दुनिया की यह रीति है कि वह अपने घर में नहीं देखता। परन्तु दूसरे के घर में ताक–झांक कर कमियाँ निकालने के लिए चिंतित रहता है। ऐसे में मैथानी साहब के घर की बात बाहर कैसे न आती। मैथानी साहब अपने लिए टिफिन मंगाते है। मोहल्ले के घरों में चर्चा का विषय बन गया था। सभी उनके बहू–बेटे को घूरती नज़र से देखने लगे। आरम्भ में उन लोगों ने इस पर ध्यान ही नहीं दिया, परन्तु जब मोहल्ले के ही अग्रवाल साहब ने एक दिन उनके बेटे से पूछा– 'क्या बात है?' आपके पापा खाना टिफिन वाले से मंगाते हैं?'

पापा, टिफिन वाले से खाना मंगाते है, मुझे तो मालूम नहीं।' इतना बोलकर वह अग्रवाल साहब से पीछा छुड़ाकर पिता के पास आया और अपना गुस्सा प्रकट किया–'पापा! क्या बात है? आप घर की जगह बाहर से खाना मंगाते है?'

बेटे की बातों को सुनकर मैथानी साहब मौन होकर सोचने लगे– यह कैसे मान ले कि घर में पत्नी क्या कर रही है, उसके पति को न मालूम हो वह भी उसके पिता के साथ। अगर मान भी लिया जाये कि बेटे को नहीं मालूम की उसकी पत्नी उनके साथ कैसा व्यवहार कर रही है तो भी जब उसे मालूम हुआ। तो पहले उसे अपनी पत्नी से कारण जानना चाहिए था– फिर मुझसे पूछता। यही

सोचकर वह मौन ही रहे। पिता का न बोलना बेटे को अच्छा न लगा। वह खीझकर ऊँची आवाज में कहा– 'पापा! मैंने आपसे कुछ पूछा, पर आपने बताया नहीं..'।

क्या बताऊँ?'

टिफिन वाले से खाना क्यों मंगाते हैं?'

क्यों मंगाता हूँ..... जाकर अपनी पत्नी से पूछो।'

अखिलेश अपनी पत्नी के ऊपर लगे आक्षेप पर पिता को उसकी ओर से कोई सफाई देने की स्थिति में स्वयं को नहीं पा रहा था। इसलिए यह कहते हुए कि आप लोगों के मन में क्या चल रहा है। मेरी समझ में नहीं आता।' वह ऊपर चला गया।

अखिलेश, टिफिन की बात जानकर भी अनजान रहा और पिता के खाने की व्यवस्था में परिवर्तन नहीं आया। तो मैथानी साहब ने भी समय के साथ समझौता स्वयं ही कर लिया। टिफिन नियमित आने लगा। पर अपने से अधिक दूसरों को घाव देने में लोगों को सुख जो मिलता है। तभी तो अखिलेश से मोहल्ले के एक अन्य सज्जन कटियार साहब ने फिर सवाल किया कि 'मैथानी साहिब टिफिन वाले के यहाँ से खाना क्यों मंगाते है?' उनका सवाल सुनकर अखिलेश असहज हो गया। आधे रास्ते से घर लौट आया और पिता के पास जोकर बोला– 'आप अपने लिए जो टिफिन मंगाते है..... जानते है, मोहल्ले के लोग क्या कहते हैं?'

हमें क्या मालूम लोग क्या कहते है?' अपना गुस्सा भी प्रकट किया–'मैं तो किसी के पास मो. हल्ले में जाता भी नहीं हूँ।'

आपको मालूम नहीं है तो जानने की कोशिश करना चाहिए।'

क्या जानने की कोशिश करना चाहिए?'

मोहल्ले के लोग आपके परिवार के बारे में क्या सोचते हैं?'

सोचने का सारा काम क्या मेरा ही है–तुम लोगों का भी नहीं है?'

तो ठीक है..... कल से टिफिन वाले को मना कर दें कि अब खाना न पहुँचायें।'

तो क्या भूखा रहूँ?'

भूखे क्यों रहेंगे, जैसे ऊपर से थाली आती थी, वैसे ही आया करेगी'।

अगर ऐसा होता ही तो टिफिन क्यों मंगाता' साथ ही मैथानी साहब ने अपना अंतिम निर्णय भी सुनाया। 'अगर तुम्हें मोहल्ले वालों की इतनी ही चिंता है तो अपने बड़े भाईयों की तरह तुम भी कहीं किराये के मकान में चले जाओ। मैं अब से वही करूँगा तो मुझे सही लगेगा।'

दोहे

मनोज जैन "मधुर"

भोपाल.

मोबाइल-9301337806

लो आ गया बसंत

फुदकी चिड़िया डाल पर, करती दिखी धमाल।
सब मित्रों को ट्वीट कर, पूछ रही है हाल।।

संयम टूटा सन्त का,बौरा गया महंत।
चिड़िया बोली चहककर, लो आ गया बसंत।।

भ्रमरों ने खुलकर किया, कलियों को ईमेल।
बैठी चिड़िया डाल पर,देख रही सब खेल।।

फूल खिले चिड़िया हँसी, करने लगी किलोल।
बासंती आनन्द का हरपल है, अनमोल।।

संग हमारे बैठ आ गा री, चिड़िया गीत।
बासंती ऋतु में लगे, हर कोई मन मीत।।

चिड़िया खुश है देख कर, रंग बिरंगे फूल।
हरी लचकती शाख पर,गई प्रेम से झूल।।

पर फैला चिड़िया उड़ी, देख नदी की धार।
खुश होकर करने चली, अपनी आँखें चार।।

मौसम सुरभित हो गया, किसने घोली गंध।
चिड़िया मादक भाव पर, लिखने चली निबंध।।

पर फैला चिड़िया उड़े,मन में उठे उमंग।
बाग बगीचों में गया, कौन डाल कर रंग।।

मदमाया महुआ उधर, इधर खिली कचनार।
मौसम की मादक छटा, चिड़िया रही निहार।।

फुनगी पर बैठी उतर,आसमान से धूप।
चिड़िया नयनों में भरे,उड़-उड़ दृश्य अनूप।।

गुजराती से अनूदित कहानी

मूल लेखक: गोरधन भेसानिया

"साथ"

आकाश में घनघोर बादल घिरे हुए थे। सूरज नजर नहीं आ रहा था परंतु दिन के अस्तित्व का अहसास करानेवाला प्रकाश बिखेर रहा था और साथ ही साथ कान फट जाए ऐसी मेघगर्जना कुछ उलटपुलट करने का संकेत दे रही थी। अभी बारिश होगी ऐसा तो शाम से ही लग रहा था पर कथनी को सही ठहराना हो ऐसे गरजनेवाले मेघ बरस नहीं रहे थे। `यह बारिश तो देखो!' मालु ने आकाश की ओर देखकर कहा- `अभी चारों ओर पानी ही पानी हो जाएगा, ऐसा लगता तो है पर जमकर बरसती नहीं है।'

लगता है कि बिना बरसे रहेगी नहीं। हम सावधानीपूर्वक परती जमीन में बिनौले बो दें ताकि बरसात की झड़ी आ जाए तो उगने लगे। पता नहीं, इस साल भी ये खेत ऐसे ही पड़े रहे। 'रुखड़ ने जवाब दिया और पछांही और दक्षिण दिशा में अत्यंत गाढ़े बादल देखता रहा।

`यदि बारिश नहीं हुई तो दोपहर तक इन खेतों में बुआई करेंगे।' मालु ने नजर ऊपर उठाकर कहा, `लगता तो नहीं कि दोपहर भी होने दे।'

तुम बारबार ऐसे सांड की भांति गरदन ऊपर उठाए वक्त बरबाद मत करो। देखो बच्चे चास में बुआई करके उस मेड तक पहुँचनेवाले हैं।

मालु और रुखड़ मुश्किल से सामनेवाले मेड पर पहुंचे ही थे कि शेत्रुंजी में बाढ़ आयी। बाढ़ की गर्जना सुनाई दी। मालु और रुखड़ तो हैरत में पड गए। बच्चे भी बुआई भूलकर नदी की बाढ़ को देखते रहे। 'अभी जब हम यहाँ आए तब शेत्रुंजी में कंकड़ पत्थर दिखते थे और अब पता नहीं बाढ़ कहाँ से आ गई!' मालु बोले बिना नहीं रह पायी।

'यह तो वर्षाकाल है और शेत्रुंजी तो गिर से निकलती है। उपरांत यहाँ से ऊंचाई पर बगसरा की ओर से आ रही सातलड़ी भी मिलती है। धारी और बगसरा दोनों दिशाओं में बारिश होगी, इस तरफ देख, वहाँ आकाश काजल सा काला नजर आता है। बिजली भी दम नहीं लेती।मालु रुखड़ की बात सुनकर धारी और बगसरा की दिशा में देखती रही। दिन दहाड़े भी वहाँ अंधेरा दिखाई देता था। उस अंधेरे को चीरने के लिए बिजली आकाश में मानो ऊछल रही थी और बिजली को मानो शाबाशी दे रहा हो ऐसे प्रहर्षित करनेवाला गर्जन-तर्जन सबको उस दिशा में देखने के लिए मजबूर कर देता था। शेत्रुंजी नदी में यदि पानी न हो तब भी रुखड़ के खेत से दिखाई देती थी। बाढ़ में मटमैला जल आया तब मानों खेत की पड़ोस का दूसरा खेत चला जा रहा हो ऐसा लगने लगा। पछांही दिशा मानो नजदीक आने लगी हो ऐसे बादल और ज्यादा गहराए और बारिश की हल्की सी बौछारें शुरू हुई। मालु के मुख पर चिंता सवार हो गई पर वह कुछ कहे उससे पहले रुखड़ ने कहा: 'चलो, मैं बैलगाड़ी जोत रहा हूँ। सब लोग बैलगाड़ी में बैठो। बारिश बढ़ने लगी है।' खेतोंवाला रास्ता छोड़ मुश्किल से बैलगाड़ी रोड पर आयी होगी कि मानो समुंदर घहरा रहा हो ऐसे शेत्रुंजी में पानी की लहरें ऊंचे ही

अनुवादक: डॉ. रजनीकान्त एस.शाह

अनुवादक एवं परामर्शदाता

अवकाश प्राप्त एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष

(श्रीमती हर्षाबहन छगनआकाश में घनघोर बादल घिरे हुए थे। सूरज नजर नहीं आ रहा था परंतु दिन के अस्तित्व का अहसास करानेवाला प्रकाश बिखेर रहा था और साथ ही साथ कान फट जाए ऐसी मेघगर्जना कुछ उलटपुलट करने

ऊंचे ऊछलने लगी। शेत्रुंजी तटबंध छोड़-तोड़कर सामने आ रही हो ऐसा लगने लगा। रुखड़ ने पीछे मुड़कर देखा और मन ही मन बोल ऊठा: 'अब जाऊँ तो कहाँ?' मानो पानी रूपी कगार वेगपूर्वक आगे बढ़ रहा था। रुखड़ का दिमाग सन्न रह गया था। काल अपना विकराल मुंह फाड़े वेगपूर्वक आगे बढ़ रहा हो ऐसा लगा। कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या किया जाए? और कुछ किया जा सके ऐसी स्थिति भी नहीं रही थी। अतिशय वेगपूर्वक आए पानी के कगार ने तिनके की तरह बैलगाड़ी को उठाया और ऊलट दिया। रुखड़ की नजरों के सामने बैलगाड़ी पर सवार उसके बच्चे और घरवाली पानी में बह गए। बैल भी बैलगाड़ी से जूते हुए होने के कारण तैर नहीं पाये। वह खुद तैराक था

इसलिए वह पानी के तेज बहाव में बहा जाने लगा पर डूबा नहीं। बहे जाने की अवस्था में पेड़ की एक डाली उसकी पकड़ में आ गई। डाल पकड़ लेने के बाद उसने उस डाल से अपने पैर की अंटी मारकर काल से टक्कर लेने की हिम्मत इकट्ठा कर ली। तैरने की मेहनत से छुटकारा मिलने पर वह चारोंओर देखने लगा। जहाँ तक नजर पहुँची वहाँ तक प्रचंड वेग से बह रहे पानी को वह देखता रहा। पानी में कागज की नाव तैरे ऐसे भारी – भरकम पेड़ बहे चले जा रहे थे। गाय,भैंस और बैल निस्सहाय बहे जा रहे थे। नीलगाय,सूअर और जंगली पशु भी जान बचाने के लिए निष्फल प्रयास कर रहे थे। रुखड़ की बगल में ही दो साँप डाली से लिपटे हुए थे लेकिन सभी अपना स्वभाव भूलकर कैसे बचा जाए, इसी चिंता में थे। पानी के साथ बहे चले आते झाड-झंखाड़ रुखड़ से आ टकराते थे पर उसके कांटे क्यों गड नही रहे थे – इस बात का रुखड़ को बड़ा ताजुब था। कांटों में उलझने के कारण रुखड़ के कपड़े फटने लगे थे और एक के बाद एक कपड़ा शरीर का साथ छोड़कर कांटे के साथ बहने लगा। अब इस दुनिया में कुछ भी बचा नहीं है। महाकाल के प्रलय में सबकुछ खत्म हो गया है। खुद जिंदा है या उसकी आत्मा यह सब देख रही है – सबकुछ समझ से परे हो गया हो ऐसे रुखड़ धीरे धीरे चेतना गँवाने लगा। निरंतर पानी की मार और ठंडी हवा,रुखड़ का शरीर अकड़ गया था पर उसने एक डाली के साथ मारी हुई पैर की अंटी और हाथ से पकड़ी हुई डाली को नहीं छोड़ा, मानो लाख खोलने पर भी नहीं खुले ऐसी यह जकड़ हो गई।

रुखड़ जब होश में आया तब उसके आसपास लोग खड़े थे। बगल में ही उसकी ठंडी देह को गरमाने के लिए अलाव जलाया था। उसमें लिहाफ तपा-तपाकर बारी बारी से उसे ओढ़ाकर बदलते रहते थे। उसने जब आँख खोली तो सब के चेहरे पर मुस्कान की एक रेखा फैल गई। रुखड़ ने याद करने की बहुत कोशिश की पर वह उनमें से किसीको जानता नहीं था। कुछ देर बाद उस लोकसमूह से और लोग जुड़े। उनमें से किसीने उसे देखकर कहा :`अरे! यह तो रुखड़ भगत है।' हालांकि रुखड़ तो उसे भी जानता नहीं था। वह तो बस आँखें फाड़े सबको देखता रहा और बाद में उसने अपने होठ फड़फड़ाए:
'पा..नी..!'

वह पानी पी रहा था तब उसे जाननेवाले से किसीने पूछा :'तुम इसे पहचानते हो?'

'और तो कोई पहचान नहीं है पर यह रुखड़ भगत भजन बहुत अच्छा गाता है। एक जगह पर मैंने उसे भजनवाणी में सुना था। वहाँ बात हो रही थी कि यह रुखड़भगत गावडका का बाशिंदा है। बस,मुझे इतना ही मालूम है।'

रुखड़ को भी अपनी पहचान मिली हो ऐसा लगा। उसने अपनी आँखें बंद की तो धीरे धीरे सबकुछ उसकी नजर के सामने आने लगा। पहाड़ के पत्थर भेदकर पानी का झरना फूटे ऐसे अंखियों के झरोखे से आँसू बहने लगे। 'रोओ मत भगत! भाग्यवान हो कि आप बच गए!' किसीने आश्वस्त किया। वह कुछ बोला नहीं पर मूक रुदन को वाचा मिली। वह उठ-बैठा और ऐसे ही वह ज़ोर जोर से रोने लगा। लोग उसके ऐसे रुदन को सुनकर उसकी ओर अचंभे से देखने लगे। बुजुर्गजन आश्वस्त करने लगे। 'अब शांत हो जाइए भगत, भगवान का शुक्र मनाओ कि जान बच गई। अन्यथा बाढ़ के इस जल से कोई जीवित लौट सकता है भला! एक तो बारिश और ऊपर से तुफानी शीत बयार! उसमें भी आपके तन पर तो कसम खाने के लिए एक चींथड़ा तक नहीं था। यह तो आप हमारे गाँव के निकट एक पेड़ पर थे। इसलिए लोगों ने देखा अन्यथा अभी तो अमरेली जाने का रास्ता भी बंद है। शेत्रुंजी पर बड़ा पुल है, वह भी बह चुका है और नदी अभी भी किनारे तोड़कर बह रही है। दवाखाने तक जाना भी मुश्किल है।'

रुखड़ को आश्वस्त करनेवाले भी थक-हार गए और वह भी रो-रोकर थका तब उसका रुदन सिसकियों में परिवर्तित हुआ। धीरे धीरे उसका रोना खत्म हुआ तब उसके लिए खाना आया। साग-रोटी(टिक्कड़) और दूध देखकर उसकी आँखें पुन: भर आयीं। उसने थाली को हाथ जोड़े। सबने उसे समझाया कि 'कुछ खा लो भगत! आप तो बच गए हैं फिर नासमझ की तरह आप क्यों रो रहे हो? वैसे भी अन्न का तिरस्कार तो करना ही नहीं चाहिए और फिर पेट को भाड़ा तो चुकाना ही पड़ता है। सामने आए अन्नदेवता का अनादर करोगे तो अपशगुन होगा और ज्यादा परेशान होंगे।'

'अब इससे ज्यादा मैं क्या परेशान होनेवाला था? -' रुखड़ को कहना तो था पर वह कह नहीं पाया। उसने ऐसे ही रोटी का छोटा सा टुकड़ा तोड़ा। दो कौर खाकर उसने पानी मांगा।

'थोड़ा सा दूध पी लो भगत,जिससे कि शरीर में कुछ जाने से रात में आपको अच्छी सी नींद आए। वैसे भी अब तो शाम ढल चुकी है। आपका गाँव भी यहाँ से खास दूर नहीं है लेकिन रास्ते बंद हैं। इसलिए अभी तो आप जा नही पाओगे। दूध पी लो और फिर सो जाओ।'

'किस खुशी में दूध खाऊँ? पुन: रुखड़ रोने लगा पर इसबार उसे शांत नहीं करना पड़ा। कुछ देर बाद उसने खुद पर काबू पा लिया। उसने गाँववालों की ओर देखकर कहा : `` मैं लंबी दाढ़ी और लंबे बाल रखकर, गले में दो-तीन मालाएँ पहनूँ और भजन गाऊँ – इसलिए सारे लोग मुझे भगत कहते हैं पर आज पापों ने मुझे घेर ही लिया।'

'इसमें कौन पापी और कौन पुण्यवान भगत? धारी – बगसरा के माथे पर बादल फटा और कहर के रूप में इतना पानी बरसा कि शेत्रुंजी नदी के तटीय प्रदेश के सारे के सारे गाँव बह गए। लोगों के घर में खाने के लिए अनाज और पीने के लिए पानी नहीं है। इनमें क्या कोई पुण्यवान नहीं होगा? खोडियार डेम के दरवाजे क्या खुले कि अपार जलराशि ने सब कुछ लिल लिया। '

खैर! ठीक है! कुदरत जब रूठ जाए तो सबको झेलना ही पड़ता है। बन में आग लगे तब सूखे के साथ हरा भी जलता ही है लेकिन मैं तो महापापी हूँ। यह उसीका फल है जो प्रभु ने मुझे दिखाया है। यह सब दिखाने के लिए ही प्रभु ने मुझे जिंदा रखा है।' बिना पूछे ही रुखड़ जेसल जाडेजा की भांति अपने पाप बताने लगा: मेरे पिता ठेठ मजदूर थे। शेत्रुंजी के किनारे की बीघा-डेढ़ बीघा जमीन भूदान में मिली थी। इसलिए वे छोटे किसान हुए। उस जमीन में जो कुछ पक जाए उससे और शेष हम से जो हो सके मेहनत करके आराम से रोटी कमा लेते थे। मैंने कुछ सोचा- समझा और मैंने मजदूरी छोडकर लोकोपयोगी सामग्री की फेरी शुरू की। शहर से माल-सामान लाकर गाँव में बेचता था, इसमें भी बरकत थी! पहले साइकिल बाद में मोटरसाइकिल और बाद में छोटा सा मेटाडोर लेकर सामान बेचने के लिए निकल पड़ता था। मेटाडोर लेने के बाद तो हफ्ते -पंद्रह दिन में और कभी तो काफी दिन बीत जाने के बाद घर वापस लौटता था। ऐसे ही 2001 में मैं कच्छ के गाँवों में सामान बेचता था। 26 जनवरी के दिन भूकंप ने कच्छ को मटियामेट कर दिया। मैं तो मेटाडोर में था इसलिए एकदम सलामत था। ईश्वर का उपकार कुबूल करने के बजाय मैं इंसानियत भूला। मेरे लोभ ने मुझे इंसान से राक्षस बनाया। फेरी लगानेवाले को ही मालूम होता है कि किस गाँव में कौन सा घर पैसेवाला है। मुझ से जितना हो सका उतना पैसा तो चोरी कर ही लिया, साथ ही साथ लाशों पर रहे जेवर भी उतार लिए। यहाँ तक तो ठीक था, मैंने तो घायल और दु:ख से कराह रहे लोगों की सहायता करने के बदले उन्हें भी लूट लिया। मैंने काफी माल इकट्ठा कर घर की राह ली। उन्हीं पैसों से और जेवर बेचकर मैंने मेरे पासवाला एक खेत खरीद लिया। अब मैं बड़ा तो नही फिर भी सुखसंपन्न किसान तो हो ही गया। आज वही खेत नदी में बह गया होगा और अब खेत हो तो भी क्या? मेरे बैल, बैलगाड़ी, मेरी पत्नी और बच्चे तो मेरी नजरों के सामने पानी में बह गए। मैंने तो लाश पर से जेवर ही उतारे थे। उसके बदले में मैं तो जीते जी निर्वस्त्र दशा में पेड़ पर लटका रहा। ईश्वर की लाठी की मार गूढ है! लहू के पैसों से मैं जिसे खुश रखकर राजी होता था, वही मेरी घरवाली और बच्चे – कोई भी नहीं रहा, मात्र मैं ही बचा रहा जिससे कि मैं जीते जी नर्क भोगता रहूँ।'

मन को हल्का करके रुखड़ पुन: खामोस हो गया। पश्चात्ताप के आंसु उसके भीतर से बहने लगे और वह अकेले ही बडबडाता रहा: 'आज तक बहुत खुश रहा पर पंद्रहवें वर्ष मेरे कर्मों ने रोड़े अटकाए।'

दूसरे दिन सुबह मानों बारिश हुई ही न हो ऐसे आकाश निरभ्र हो गया और ग्रीष्मकालीन आतप छंटा। रुखड़ अपने गाँव जाने के लिए तैयार हुआ पर गाँववालों ने उसे अकेले जाने नहीं दिया। दो लोगों को उसके साथ भेजकर उसे उसके गाँव पहुंचाया। बड़ी उदासी के साथ रुखड़ अपने घर गया। उसे ऐसा लगता था कि घर ऊंचाई पर है , इसलिए सलामत होगा पर उसकी यह आशा भी व्यर्थ रही। नदी की तेज लहरों की मार घर के पिछवाड़े के भाग में लगी होगी। अत: सारी सामग्री सहित सारा का सारा घर पानी में बह गया था पर आश्चर्य की बात तो यह थी कि दालान अकबंद था। वैसे यह दशा देखकर उसे तनिक भी दु:ख नही हुआ। उसके चेहरे पर एक विचित्र हास्य उभरा। दिनभर वह भूत की तरह भटकता रहा। राहत-सामग्रीवाले खाना-पीना रखकर गए थे। उसने उस सामग्री से अपनी क्षुधा शांत की। इस प्रकार शाम तो हो गई पर रात मुश्किल लगने लगी। मानों वह खुद स्मशान बीच खड़ा हो ऐसा लगा: 'हे ईश्वर!' लोहा भी पिघल जाए ऐसा नि:श्वास छोडकर थका हुआ होऐसे बारामदे में सुस्ताने लगा। ऊपर नजर गई तो हलके से अंधेरे में भी खूंटी पर लटक रहा रामसागर दिखाई पड़ा—कोई तो साथ है!-ऐसा आश्वासन प्राप्त हुआ हो ऐसे वह खड़ा हुआ और किसी नवजात शिशु को माँ अपनी गोद में ले ऐसे वह रामसागर को लेकर बैठा। देर रात रुखड़ की कलेजा चीरकर निकलती आवाज भयंकर दिखते गाँव को आर्द्र करती रही।:' देवा तो पड़े रे....सहुने देवा पड़े....करेला करमना बदला देवा तो पड़े...'

विजय कुमार तिवारी

(कवि,लेखक,कहानीकार,उपन्यासकार,समीक्षक)

भुवनेश्वर,उडीसा,भारत
मो०-9102939190

संस्मरण

छोटी-छोटी मधुरतम स्मृतियाँ

[1]

'महोदय,सुना है आप कविताएं लिखते हैं," मुस्कराते हुए किसी नवयौवना ने पूछ ही लिया। कवि महोदय उत्साहित हुए,आसपास बैठे लोगों को सरसरी निगाह से देखा और उस सौन्दर्यमयी मूर्ति पर दृष्टि केन्द्रित कर ली,बोले,"मैं कहाँ और मेरी कविताएं कहाँ,आप तो स्वयं ईश्वर की बनाई हुई कोई महान कविता हो।" शर्म की कोई लाली उभर आयी और नवयौवना की पलकें झुक गईं। कवि ने वह दृश्य अपने मन-मस्तिष्क में जज्ब कर लिया और सोचा, समय मिलते ही कोई कविता लिखी जायेगी। दुनिया के सारे कवि तब से कविताएं लिख रहे हैं परन्तु आज तक वह कविता मुकम्मल नहीं हुई है।

[2]

किसी पत्रिका के बीच वाले पृष्ठ पर दो तस्वीरें छपी हैं। उपर वाली तस्वीर में दूर क्षितिज तक फैला प्रकृति का सौन्दर्य पसरा हुआ है,नीला आसमान,कुछ आवारा बादल,कलकल बहती नदी,हरियाली और ठीक सामने कोई सौन्दर्यमयी मूर्ति। नीचे वाली तस्वीर में भी आसमान नीला ही है,नदी है,प्रकृति का सौन्दर्य है और कड़कती धूप में,पसीने से लथपथ कोई श्रमशील युवती फसल काट रही है। कवि की कलम रुक गयी है,तय नहीं कर पा रहा कि किसे सहेज ले अपनी स्मृतियों में, सौन्दर्य के प्रतिमान के रुप में।

[3]

कहानीकार ने लम्बी सी कहानी लिखी,पत्रिका में छपी और लोगों ने खूब प्रशंसा की। घर में काम करने के लिए नयी मेहरी आयी है। उसके साथ उसका खूब चहकता,मचलता,हँसता-खिलखिलाता नन्हा सा बच्चा है। वह उसे बोरे पर सुला देती है और काम में लग जाती है। मालकिन का लगभग उसी उम्र का बच्चा मुस्कराता हुआ उसी बोरे पर बैठ जाता है और दोनों एक-दूसरे को गले लगाते हैं। दोनों खूब खुश होते हैं,खूब किलकारी मारते हैं और हँसते-बिहँसते हैं। कहानीकार का सारा वर्ग-संघर्ष चिन्तन धरा का धरा रह जाता है और वह सोचता है-जीवन तो सबका ऐसे ही सहज और सरल है,हम ही उसे जटिल बनाते हैं।

[4]

जब नौकरी लग गयी,उसकी पोस्टिंग उसी शहर में हुई जहाँ उसके रिश्तेदार पहले से ही रह रहे हैं। सबने स्वागत किया, उसे घर-परिवार में रहने का सौभाग्य मिला और भाई-बहन मिले। बहन उससे थोड़ी छोटी है,उसकी शादी तय हो गई है और तैयारी चल रही है। वह बहन को उसके मनोनुकूल महँगा से महँगा उपहार देना चाहता है। उसने इसकी बावत पूछ ही लिया। बहन ने मुस्कराते हुए पूछा,"जो माँगूँगी,वह दोगे ना? ना तो नहीं कर दोगे?" उसने खुश होता हुआ उत्तर दिया,"जरुर दूँगा, बताओ तो सही।" "तो ध्यान से सुनो मेरे भाई जान!" बहन फिर मुस्कराई,बोली,"मुझे एक प्यारी सी भाभी ला दो। मुझे और कुछ नहीं चाहिए।" वह विह्वल हुआ,बहन के लिए भौतिक उपहारों के बारे में सोच रहा है और उम्र में छोटी होते हुए भी बहन उसके जीवन साथी के बारे में।

कहानी

"देवता स्वर्ग प्रवास पर"

वह देवता के मंदिर के प्रांगण में सुबह से रोए जा रहा है। किसी ने पूछ लिया, "क्या बात हो गई? देवता के जयकारा लगाओ, देवता प्रवास पर जाने वाले हैं और तुम यहाँ रोने बैठे हो। शाही आरती में शामिल हो जाओ, तुम्हारे दुख-दर्द पल में हवा हो जाएँगे।"

रोने वाले बूढ़े व्यक्ति ने फिर और ज़ोर से रूदन करना शुरू कर दिया। उस पर बोलने वाले का ज़रा भी असर नहीं हुआ था। ऐसा लग रहा था कि जैसे वह रो-रोकर सब का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना चाहता था, या फिर सचमुच ही उसे कोई भारी मुसीबत आन पड़ी थी, या फिर हो सकता है कि वह देवता के स्वर्ग प्रवास पर चले जाने के कारण रो रहा हो। फिर भी उसने यहाँ पर इकट्ठे हुए लोगों के बीच सबका ध्यान खींच लिया था जबकि दूसरी ओर वाद्य यंत्र बज उठे थे। देवता के गुर ने देवता के शब्दों में बंधे नियमों को सुनाना शुरू कर दिया था।

भीड़ में से दो तीन लोग उसकी ओर आखिर हो ही लिए। उनमें से एक बोला, "अच्छा चुप हो जाओ, देवता के प्रवास का जश्न मनाओ वरना तुम तो देवता के प्रवास में विघ्न डाल रहे हो।" यह बात सुनकर रोने वाले का रूदन थोड़ा कम हुआ।

वह बोला," नहीं मुझे भी स्वर्ग प्रवास पर जाना है बस मेरी भी जीवन में यही इच्छा बची है।"

"कैसी बातें करते हो तुम", कोई बीच में बोला। यह व्यक्ति श्रद्धालु था, जो वर्षों से ऐसे आयोजनों में आता जाता रहा है, "तुम तो कोई पागल व्यक्ति लग रहे हो! कौन से गाँव के हो भई? घोर कलयुग जो अब पापियों व साधारण इंसानों को भी देवता की तरह सपने लेने को उकसा रहा है। ऐसे लोगों को ऐसे आयोजनों से बाहर रखो, वरना हमारी परंपरा ख़त्म हो जाएगी।"

रोने वाले ने फिर कहा,"मैं भी देवता के साथ स्वर्ग में देवताओं की सभा में भाग लेना चाहता हूँ सभा मकर संक्राति को शुरू होगी और फिर मैं भी 42 दिनों बाद लौटूंगा। मैं अपने देवता के बिना नहीं रह सकता।"

व्यक्ति बोला," देवता के फरमान का सब पालन करें। वे वापिस आकर गुर के माध्यम से सबका भविष्य बताएंगे। देखना मंदिर के प्रागण में फूल खिले होंगे, चहुँ ओर खुशहाली फैलेगी।"

रोने वाला चुप न रहा, "नहीं, नहीं, मैं भी देवता के साथ प्रवास पर जाना चाहता हूँ, बस इस बात का इंतज़ाम कर दो, मैं चाहे इसके लिए अपनी बलि भी दे सकता हूँ।"

'पगला गया है यह, इसे बाहर फेंको! वरना इसे पागल घोषित करवा दिया जाएगा।" कोई पास खड़ा आदमी बोला।

डॉ. संदीप शर्मा

व्यवसाय:शिक्षक,विज्ञान,डी.ए.वी.पब्लिकस्कूल,हमीरपुर (हि.प्र.)

प्रकाशन : कहानी संग्रह 'अपने हिस्से का आसमान' 'अस्तित्व की तलाश' व 'माटी तुझे पुकारेगी' प्रकाशित। देश, प्रदेश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में शोध लेख, कविताएं व कहानियां प्रकाशित।

निवास: हाउस न.618, वार्ड न.1, कृष्णा नगर, हमीरपुर।
हिमाचल प्रदेश 177001
फोन न 094181-78176

'नहीं! बस मैं जाना चाहता हूँ गुर के पास मुझे जाने दो।" वह तेजी से उठने को हुआ, तो दो लड़कों ने उसे पकड़ लिया।

'बस मेरा अटल निश्चय है, तभी तो मैं इस समय का इंतजार कर रहा था इस दिन का।"

"तुम कौन से गाँव के हो भई? कोई पहचानता है इसे, आस-पास का तो नहीं लगता!" पास आकर बैठते हुए एक आदमी ने कहा।

'मैं.. मैं... पास के गाँव सागड़ का हूँ। देवता के पास वर्षों से हाजिरी देता हूँ, बाहर का नहीं हूँ। बस मुझे मेरे मन की करने दो।"

'अच्छा तो तुम सागड़ गाँव के हो!" भीड़ में खड़े

सबसे शांत आदमी ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा। "अच्छा क्यों जाना चाहते हो तुम प्रवास पर?"

"मैं तुम से नहीं बता सकता, बस ये तो राज़ की बात है, देवता ने खुद मुझे सपने में आकर बुलाया है।"

"अरे! देखो तो इसे, इसने कहीं भाँग तो नहीं पी है।" भीड़ में हाथ जोड़े खड़े किसी तीसरे बूढ़े आदमी ने कहा। शांत चेहरे वाले व्यक्ति ने उस हठ्ठी मानव की दिल की बात जानने की इच्छा हो रही थी। वह मामले को सुलझाने की तरकीब लगा रहा था ताकि देवता प्रवास के इस उत्सव को कोई खलल न पड़े। वह अधेड़ व्यक्ति चुपचाप रोने वाले बूढ़े के कान में कुछ बुदबुदाया और फिर उस बूढ़े आदमी का बाजू पकड़ कर उसे दूर भीड़ से ले गया। सारे लोग उन दोनों को देखकर हैरान हो गए थे।

कोई बोला,"वाह कमाल हो गया!"

कई सोचने लगे, "ये कमाल कैसे हुआ? आखिर उसने उसके कान में क्या कहा होगा?" लेकिन किसी के पास इतना समय नहीं था। उनका ध्यान फिर वाद्य यंत्रों की सुरीली धुनों और देवता के स्वर्ग प्रस्थान की प्रक्रिया पर लग गया, वे उस अनचाहे दृश्य को भूल गए।

दूसरी ओर वह शांत व्यक्ति उसे मंदिर से काफी दूर ले जाकर अपना वार्तालाप शुरु कर चुका था। जिसे सुनने के लिए ही शायद वह बूढ़ा अपनी ज़िद छोड़ उस अधेड़ व्यक्ति के साथ चला गया था। अधेड़ व्यक्ति ने एक बड़े पत्थर की आट लगाकर कहा, "अच्छा बताओ, तुम क्या कहना चाहते हो? तुमने मुझसे वादा किया है। अब मुकर मत जाना।"

'मुझे देवता के स्वर्ग प्रवास की तरह सुख पाना है।" अच्छा, पहले तुम ये बताओ कि तुमने ये हंगामा अपने दुख को सबको बताने के लिए किया था। तुम शायद लोगों की नज़रों में आना चाहते थे और तुम अपने मन को शांति पहुंचाना चाहते थे।"

बूढ़ा उस अधेड़ व्यक्ति के सामने न्तमस्तक हो गया और बोला, "तुम्हें कैसे पता चला कि मैं बहुत दुखी हूँ ।" "ऐसी हरकत यह तो कोई पागल करता है या फिर जो अब जिंदगी से हार गया हो। तुम्हारी उबड़ खाबड़ भावानात्मक स्थिती से ही मैंने तुम्हारी स्थिती का भान लगाया है।"

'अब क्या बताऊँ, मेरे प्रीय भाऊ, मैं कई मंदिरों की चौखट पर जा आया हूँ । हमारे देवता के गुर ने भी मेरी स्थिती का कोई स्पष्ट उत्तर नहीं दिया था और बस फिर मैंने मन में ठान लिया कि मैं देवता से जवाब लेकर ही रहूँ गा पर मेरे ठान लेने से मैं और विचलित हो गया। मेरी स्थिती अब और अधिक दयनीय होती जा रही थी। मुझे सभी लोगों से नफरत हो गई है। मुझे ये जीवन घोर अन्यायपूर्ण व्यवस्था में जकड़ा महसूस हो रहा हैं यहाँ तक कि मुझे देवता से नफरत होने लग पड़ी है। मैं तभी तो देवता के साथ प्रवास का ढोंग करने लग पड़ा हूँ । मुझे समझ नहीं आ रहा है कि मैं अपने दुख को कैसे लोगों को बताऊँ। बस मुझे मंदिर में हंगामा करने का विचार सूझा, जब, सब लोग देवता के जय जय कारे लगा रहे हों, वो मेरी ओर ध्यान दे और मेरी बात सुने।"

'अच्छा तुम ये बताओ कि तुम मुझे बहला कर यहाँ क्या लाए?"

अधेड़ व्यक्ति ने कहा,"बस भाई! मेरे मन में भी तेरे मन की बात जानने की इच्छा पैदा हो गई और मेरी भी कहानी कुछ इस तरह की है मैं भी बहुत दुखी हूँ पर अपना दुख किसको सुनाऊं, मेरे गाँव में तो किसी ने मेरी बात ढंग से नहीं सुनी, बस किसी ने कहा था कि इस बड़े मंदिर पर जरूर जाना। तुम्हें देखा तो जैसे मैं अपनी बात भूल गया और सारा ध्यान तुझ पर ही आ गया। अच्छा, एक बात तो बताओ कि तुमने यही दिन क्यों चुना देवता प्रवास वाला ही, क्या तुम पहले किसी और को अपनी बात नहीं कह पाए।

बूढ़े व्यक्ति ने कुछ सोच कर कहा, "मैं पहले भी कई मौकों पर ऐसे ही उत्सवों में ऐसा हंगामा कर चुका ह लोगों ने मेरी बातों को हाथों हाथ लिया अब तो मुझे ऐसा करने में मजा आता है, आज यहाँ इस गाँव से गुजर रहा था तो बस फिर से ऐसा करने की ठान बैठा"

अधेड़ व्यक्ति ने कहा,"अरे तुम तो बड़े मज़ेदार व्यक्ति निकले।"

"अच्छा चलो। मेरा भी मन हल्का हो गया।"

बूढ़े व्यक्ति ने कहा, "तुम भीड़ में अकेले व्यक्ति मिले जिसने मेरी कहानी को मन से सुना। अब मुझे बड़ा अच्छा लग रहा है। मैं अपने प्रयोजन में कामयाब रहा। अच्छा अलविदा भाऊ। फिर कहीं मुलाकात होगी।" बूढ़ा व्यक्ति अपना झोला गले में डाले पल में गायव हो गया। वहाँ मंदिर में अभी भी देवता प्रवास का कार्यक्रम चल रहा था। कुछ देर में वहाँ फिर शोर होने लगा, "मैं भी देव प्रवास में शामिल हूँगा। मैं भी स्वर्ग प्रवास पर जाना चाहता हूँ ।"

लोगों की भीड़ ने देखा अब एक और अधेड़ व्यक्ति ठीक वैसा ही हंगामा कर रहा था जैसा थोड़ी देर पहले यहाँ बूढ़े व्यक्ति द्वारा हुआ था। यह वही अधेड़ व्यक्ति व्यक्ति था, जिससे वह बूढ़ा व्यक्ति अपनी कहानी सुनाकर गायब हो गया था। भीड़ में से किसी ने अधेड़ व्यक्ति को बाहों से पकड़ा और दूर एक कोने में ले जाकर पूछा, "तुम्हारी मत मारी गई है, यह क्या रोना रोने लग पड़े, पहले एक बूढ़ा था, वह ऐसा हंगामा कर रहा था।"

अधेड़ व्यक्ति बोला, "मेरी भी ठीक उसकी तरह की स्थिति है, इसलिए अब मैंने भी उसका दिया गुर मंत्र का प्रयोग किया। अब अगर तुम भी मेरी दुख भरी कहानी सुन लो तो मैं चैन से घर निकल जाऊँगा।" दूसरा व्यक्ति बड़ी देर सोचकर बोला, "अच्छा सुना दो, देवता की शायद यही मर्ज़ी सही।"

क़ाज़ी वाजिद सिद्दीक़ी

348 ए, फाइक एंक्लेव, फेस 2,
पीलीभीत बाईपास, बरेली (उ प्र) 243006
मो : 9027982074
ई मेल wajidhusain963@gmail.com

“फरिश्ता”

मूसलाधार बारिश हो रही थी। कुछ गिरने की आवाज़ से माया जाग गई। मुझे हिलाया, 'आपने आवाज़ सुनी?' ... 'सो जा, बिल्ली होगी।' मैंने नींद में कहा। उसे चैन नहीं पड़ा, दबे पैरों उठी, पापा के कमरे में गई। पापा बिस्तर पर नहीं थे, वाशरूम का दरवाज़ा भिड़ा हुआ था। उसने पापा को पुकारा, कोई जवाब नहीं मिला। वॉशरूम में झांका, पापा गिरे पड़े थे। माया की चीख़ ने मुझे जगा दिया। मैंने एम्बुलेंस को काल किया पर ख़राब मौसम के कारण नहीं आई। फिर मैने जान-पहचान वालों से सम्पर्क किया परन्तु निराशा हाथ आई।

मेरे फ्लैट से कुछ दूरी पर कारखाने में काम करने वाले मज़दूरों की बस्ती थी। उनके छोटे-छोटे घरों को हम अपार्टमेंट में रहने वाले पिंजरे कहते थे और उसमें रहने वालों को हीन दृष्टि से देखते थे। अपने बच्चों को उनके बच्चों से इस तरह बचाते थे जैसे वह कोविड के कैरियर हो। मैं हैल्प- हैल्प चिल्लाता हुआ पिंजरो की ओर चला गया। ... मरघट जैसे सुनसान में लंगड़ाता हुआ ,एक इंसान पास आता दिखा। पास आकर वह बोला' ,क्या बात है दोस्त ...'?मैंने अपनी मुश्किल बता दी वह मेरे साथ हो लिया। देखते-देखते उसने चादर का स्ट्रेचर बनाया जिसमें लिटाकर पापा को कार तक ले गया। ... मैं समय रहते अस्पताल पहुंच गया। आई सी यू के बाहर मैं अचरज करता रहा ,कि इस इंसान को एक निहायत अजनबी की इस क़दर मदद करने की आख़िर क्या पड़ी थी- कौन है यह आदमी ,देखने में मरियल सा लग रहा था। जब मैंने कार स्टार्ट की ,तब लगभग रटी- रटाई शैली में यह बोलते हुए कि' ऐसे मौसम में गाड़ी सावधानी से चलाना ,'अचानक मुड़ा और हाथ हिलाकर अभिवादन करता हुआ वहां से चलता बना। यह सब इतनी फुर्ती से हुआ कि मैं उसको शुक्रिया भी नहीं कह पाया।

बाद पापा के ठीक होने केउसका ख्याल मन से धीरे-धीरे निकल गया। एहसान फरामोशी का यह पहला या इकलौता मामला नहीं था ,लोगों को और घटनाओं को अपने जीवन में हम अक्सर इसी तरह हमेशा भूलते आए हैं।

छुट्टी का दिन था ,मैं बालकोनी मे खड़ा था। मुझे सामने देखकर पड़ोस वाले कह बैठे' ,ओ तुमने खबर सुनी ?कंपनी ने राकेश को नौकरी से निकाल दिया।... 'राकेश ?कौन राकेश ,वही जो आवारा किस्म का था ...'? तभी बीच से कोई आवाज़ फूटती है: 'अरे नहीं भाई, राकेश जो इलेक्ट्रशियन का काम करता था... लंबी छरहरी कद काठी, लंबे झूलते हुए बाल जिसके हैं ... और हां वह थोड़ा लंगड़ाता भी है। राकेश बेहद नेक इंसान, सबकी मदद करने वाला, खूब लगन के साथ काम करने वाला। उसके दो बच्चे हैं और बीवी की नौकरी गए अभी तीन महीने ही हुए हैं ... क़र्ज़ के लिए गिरवी अलग। ...

उनके चले जाने के बाद मैं अकेला रह गया। मुझे लगा, लोगबाग उस इंसान की चर्चा कर रहे हैं, जिसने पापा के हर्ट अटैक के समय मेरी मदद की थी। उसके बाल बड़े थे और लंगड़ाता भी था। इतने दिनों बाद आज यह एहसास हो रहा था कि जिस इंसान ने मुझे पिता की छत्र -छाया से वंचित होने से बचाया था, मैंने उससे शुक्रिया तक नहीं कहा था। मेरे मन में धुकधुकी होती है, 'क्या मुझे उससे मिलने जाना चाहिए ... कुछ बातचीत करना चाहिए?...बात ... आख़िर क्या बात करें? फिर मैं पिंजरो की ओर चल पड़ा। मेरी नज़र अचानक उसके चेहरे पर पड़ जाती है। पल भर में मुझे कपकपी छूट जाती है। इसका चेहरा तो बर्फ जैसा एकदम झक सफेद है। पूरी गृहस्ती सड़क किनारे रखी थी। पास में पत्नी एक बच्चे की उंगली पकड़े हुए खड़ी थी और दूसरा गोद में था। वह आसपास इस तरह देखता है, जैसे उसको मालूम न हो, किधर या कहां जाना है। ...

मैं पूछ बैठा' ,तुम्हें उस तूफानी रात का वाकया याद है , जब पापा को हर्ट अटैक पड़ा था। 'उलझन में वह अपने दोनों हाथ आपस में रगड़ने लगता है ...' हां'... ' सिर हिलाकर उसने अब हामी भरी ... 'अब याद आ गया। ' निहायत अपनेपन से उसने पूछा' ,कैसे हैं पिताजी' '?ठीक हैं। 'मैने कहा। ...मैं इस दुविधा में था कि किस तरह मुझे इस आदमी की मदद करना चाहिए। इसी कशमकश में मेरे मन में एक आईडिया जन्म लेता है। फिर सोचता हूं ,वह मेरे प्रस्ताव पर राज़ी होगा या नहीं , कहने में क्या जाता है। मैंने पूछा' ,कहां जाओगे '?उसने धीरे से कहा ' ,पता नहीं। 'मैंने बेहद दरियादिली से कहा , 'क्या करोगे यार नौकरी करके ,घर का धंधा है फिर किसी के तलवे चाटने कि आख़िर ज़रूरत क्या है '?पापा गांव चले गए हैं। वह अपनी बीमारी का ज़िक्र करते हुए कहते हैं' ,हर्ट अटैक के बाद एक फरिश्ता आया ,जिसने मुझे वाशरूम से उठाकर कार में लिटा दिया। वह न आता तो आज मैं जीवित न होता। 'वह गांव में अकेले रहते हैं। हमारा कारोबार और फारमिंग भी है। अकेले उन्हें इस सब को संभालने में दिक्कत आ रही है। क्यों न तुम गांव चले जाओ'?

... यह बोलते हुए मैं कंखियों से उसके चेहरे के भाव पढ़ने की कोशिश करने लगा। उसने पास खड़ी पत्नी से कुछ सलाह मशवरा किया। उसके चेहरे की रंगत लौटने लगी थी... धीरे-धीरे वह इतना सहज हो जाता है कि पत्नी से कहता है' ,जेठ जी के पैर छुओ। 'मैंने पापा से सम्पर्क किया। वह बहुत खुश थे' ,फरिश्ता ,उनके घर आ रहा था। '

लघुकथा

नीना सिन्हा (पटना)

"नाहक"

दसवीं क्लास की छात्रा नमिता सहेली कृष्णा के हाव-भाव से कुछ भाँपने के प्रयास में थी पर कृष्णा के निर्विकार चेहरे से कुछ स्पष्ट नहीं हो पा रहा था। उसने पूछ ही लिया, "आज समाचारपत्र में मशहूर उद्योगपति सेठ जगनलाल के देहावसान की दुखद खबर थी और तुम स्कूल चली आई हो! क्यों?"

"मृत्यु पश्चात कर्म उनके आवास पर स्वजनों के समक्ष होंगे। सेठ जी के यहाँ जाने पर उनके अंतिम दर्शनों की इजाजत भी नहीं मिली हमें। सख्त लहजे में बाहर का रास्ता दिखा दिया गया। इसके प्रतिक्रिया स्वरूप, माँ का विलाप मुझसे बर्दाश्त नहीं हुआ तो स्कूल चली आई", दर्द छलक आया।

"तुम्हारी माँ सेठ जी की दूसरी पत्नी हैं, यह शहर भर को खबर है। फिर समस्या क्यों हुई?"

"उनकी नजरों में मेरी गरीब माँ, उपपत्नी के चोले में उनके अमीर बुजुर्गवार पति के शौक पूर्ति का जरिया मात्र हैं, जिन्हें पैसे, कपड़े-लत्ते के साथ शहर से बाहर छोटा सा घर दे दिया गया था।"

"तुमने इन बातों का कभी जिक्र नहीं किया!" नमिता हैरान थी।

"बताने लायक था क्या? छोटी थी तो उनसे चॉकलेट वग़ैरह ले लिया करती थी। बड़े होने पर उनके आते ही सहमकर कमरे में समा जाती। 'पापा' कहते उनकी आँखों में रोष सा तैर जाता, तो उन्हें 'सर' कहना प्रारंभ किया। उनकी ओर से कभी कोई बदसलूकी नहीं हुई। पर ऐसी कोई याद भी नहीं, जो रूला जाए। वे हमारे आर्थिक एवं सामाजिक सहारा अवश्य थे", कृष्णा के डूबते से स्वर निकले।

"तभी पिता के रूप में कभी उन्हें याद करते नहीं देखा तुम्हें", नमिता ने कहा।

"सेठ जी मेरे पिता नहीं, महज जैविक पिता थे। उन्हें पापा कहकर पुकारने का हक नहीं मिला मुझे", कृष्णा के स्वर भर्रा गए।

कहानी

भगवती सक्सेना गौड़
बैंगलोर

"भूकंप"

सब सहेलियां साथ ही स्कूल जाती थी, दो किलोमीटर की दूरी थी। गप शप, मस्ती करते हुए वो दूरी उन्हें पता ही नही चलती थी। राह के लोगो पर फब्तियां कसती आगे बढ़ती जाती थी। रोज एक रिकशे मे पतली सी महिला को सिर झुकाए जाते देखती थी, उसे देखते ही रोजी गुनगुनाने लगती, "न सर झुका के जियो और न मुँह छिपा के जियो" इसी मस्ती में स्कूल भी पहुँच गयी।
जल्दी से सब प्रार्थना की सातवी कक्षा की लाइन में खड़ी हो गयी और हवाओ में स्वर गूंजने लगा, हमको मन की शक्ति देना।
कक्षा में पहुँचते ही टीचर ने बताया, एनसीसी की लड़कियां तैयार रहे, अगले हफ्ते उनका नेपाल पोखरा में कैम्प है और ये खबर सुनकर रोजी और उसकी सहेलियों में खुशी की लहर दौड़ गयी। जब स्कूल की छुट्टी हुई सब इठलाती हुई घर पहुँची। रोजी ने अपने मम्मी पापा को बताया, " हम एनसीसी टूर पर पोखरा जा रहे हैं।"
दूसरे दिन से ही सब ड्रेस धुलने लगी, मम्मी ने प्रेस करके सब बैग में रखा।
मम्मी ने दो दिन पहले से ही समझाना शुरू कर दिया, "मैम के साथ ही रहना, इधर उधर मत भागना।"
आखिरकार वो दिन आ ही पहुँचा, पापा मुझे बस तक छोड़ने आये।
सहेलियों और दो मैम के साथ बस में कुछ एनसीसी के लड़कों का ग्रुप भी था, हंसते, गाते, खाते हम मस्ती से जा रहे थे, सबकी मम्मियों ने भी बहुत सा नाश्ता दे दिया था। शाम को बस पोखरा पहुँची, एक स्कूल में ही बड़े से हॉल में हमे रुकना था, हम सब बहुत थक गए थे, खाना खाकर जल्दी से सो गए।
सुबह पांच बजे मैम ने जोर से आवाज़ दी, "सबलोग उठो तैयार हो जाओ, यहां उगते सूर्य का नज़ारा हिमालय की चोटी से बड़ा ही सुंदर प्रतीत होता था। और सब सहेलियां मनमोहक दृश्य देखने के लिए चल दी। वहां पहुँचकर चौदह वर्ष की रोजी का चेहरा चमक रहा था, इतनी खूबसूरत थी, कि सब सखियां हिमालय की सफेद पर्वतों की कतारों को देखें या रोजी की सुंदरता निहारे, जो सूर्य की किरणों से दमक रही थी।
नियत समय पर सब उस स्कूल में पहुँच गए, जहां रुके थे। ड्रेस पहनकर नाश्ते के बाद सब एक बड़े से हॉल में थे, कोई बड़े साहब आने वाले थे।
तभी एक सखी रानी ने रोजी से कहा, "ए, मुझे कुछ हिलता हुआ सा प्रतीत हो रहा।"
सही बोल रही हो, मुझे भी।"
बस उसके बाद क्या हुआ, किसी को खबर नही लगी, सबकुछ डावांडोल हो रहा था, कुछ सामने की कच्ची दीवारें, कमरे गिरने लगे, बहुत तेज़ भूकंप आया था।
भूकंप ने शहर को तहस नहस कर दिया था, लोग टेन्ट में किसी तरह जीवन- यापन कर रहे थे। चोरी,मारपीट,लूट खसोट चरम पर था साथ ही लाचार महिलाओं पर शारीरिक अत्याचार बढ गये थे।

रोजी अस्पताल में बिस्तर पर थी, हाथ, पैर में पट्टियां बंधी थी, डॉक्टर को लगा, उसे होश आ रहा है।
धीरे से आंखे खोली, और डॉक्टर से पूछा, "मैं कहाँ हूँ, मुझे यहां कौन लाया, फिर चारों ओर नजरें दौड़ाई, तो उसे लगा भीड़ कुछ ज्यादा ही है।

डॉक्टर ने एक ओर इशारा किया, "ये बुजुर्ग महिला आपको लेकर आई हैं।"
रोजी ने पहचानने की कोशिश करी, पर असमर्थ रही।
एक महीने बाद वही बुजुर्ग महिला मन्नो देवी उसे अपने छोटे से घर मे ले आयी, हमेशा बहुत कुछ जानना चाहा, "वो कौन है, मम्मी, पापा कौन हैं, पर रोजी अपने परिवार को भुला चुकी थी, दिमाग शून्य में विचरता था।"
मन्नो देवी पचपन वर्ष की नेपाली महिला थी, जीवन के कई वसंत देख चुकी थी, उनके पति जरा रसिक मिजाज के व्यक्ति थे, उनकी शाम बोतल और गिलास से ही शुरू होती थी। पंद्रह वर्ष की खूबसूरत खिलते गुलाबी गुलाब सी रोजी को उनकी गुलाबी आंखे कई बार घूरने लगी जो मन्नो देवी के तीसरे नेत्र से अछूती नही रही। वो दिनभर चिंतित रहने लगी, इसी बीच एक दिन शाम को रोजी अकेली घूम रही थी, जब ज्यादा सोचती तो उसका सिर दर्द करने लगता था। एक चबूतरे पर बैठ गयी, दूध जैसी निर्मल काया, एक ताज़े कमल के फूल मानिंद दिखाई दे रही थी, आंखे बंद किये आराम करने लगी। उसे पता ही नही लगा, कैसे भंवरो को खबर हुई। इक अहसास हुआ, आस पास कोई है, आंखे खोली तो देखा कुछ लड़के भी वहीं बैठे उसे घूर रहे हैं। उसे महसूस हुआ ये नशे में हैं, पर असल मे वो उसकी खूबसूरती के नशे में सब भूल चुके थे। अचानक रोजी उठी और चुपचाप घर चल दी।
वो अपने आप से अनजान रोजी मन्नो देवी को ही माँ का प्यार देने लगी। मन्नो देवी चिंतित रहने लगी जमाने को देखते हुए वो कुछ उपाय सोचने में लग गयी। क्योंकि

जहां पहले सुनसान रहता था, अब लड़के घर के आस पास घूमते नजर आते थे।
ईश्वर से हमेशा प्रार्थना करने लगी, "हे देव, मेरे प्राणों की रक्षा करना, मुझे इस फूल को मुरझाने नही देना है, मैं चली जाऊंगी तो इसकी देखभाल कौन करेगा।"
बहुत सोच विचार कर मन्नो देवी ने दिल्ली वाले भाई को बुलवाया, जिनके ऊपर उसे विश्वास था, सारी कहानी सुना कर, उसका जीवन, पढ़ाई लिखाई का जिम्मा उन्हें दिया। रोजी ने उनको शुरू से मामा ही बुलाया और मामा के साथ दिल्ली आ गयी।
दिल्ली आकर रोजी की जिंदगी ने करवट बदली क्योंकि मामी भी एक स्कूल की शिक्षिका थी, उन्होंने पांच महीने घर मे पढ़ा कर उसको अपने ही स्कूल में नवीं कक्षा में भर्ती करा दिया। तीक्ष्ण बुद्धि की रोजी ने जल्दी ही बारहवीं फर्स्ट डिवीज़न से उत्तीर्ण किया और तैयारी करके आई आई टी दिल्ली में एडमिशन लिया।
अब एक के बाद एक कई सीढ़ियों को पारकर रोजी इंजीनियर की डिग्री ले चुकी थी। कॉलेज कैंपस से ही उसको अच्छी कंपनी ने चुन लिया था।

रोजी बहुत खुश थी, बस जीवन का एक दूसरा पड़ाव शुरू होने वाला था। अब वो दौर था, जब वो कभी ऑनलाइन शॉपिंग कभी विंडो शॉपिंग में व्यस्त रहने लगी।
ब्यूटीपार्लर जाकर सुंदर से मुखड़े को और चमकाया गया। नियत दिन से बस से आफिस जाना शुरू कर दिया, मामा, मामी के पास उसके लिए वक़्त ही नही था।
आफिस में जल्दी ही काम मे मन लग गया। एक दिन आधे रास्ते मे ही बस रुक गयी, सड़क पर कुछ लोग धरने पर बैठे थे, बारिश भी हो रही थी। पर मजबूरी थी, नीचे तो उतरना ही पड़ा।
एक सघन वृक्ष के नीचे खड़ी हो गयी।

तभी सामने एक बाइक में युवक को देखा, जो हेलमेट लगाए, बाइक को मोड़ने की कोशिश कर रहा था। अचानक उसने हेलमेट उतारा और उसके पास आकर हेलो किया। रोजी ने ध्यान से देखा तो पहचाना, "ओ तुम राजन हो न, हेलमेट में पहचाना ही नहीं, देखो अपने ही आफिस के कलीग को हेलमेट में पहचानना मुश्किल हो गया था।"
"यहां कब तक खड़ी रहोगी, कहाँ जाना है बताओ, मैं छोड़ दूंगा।"
"पटेल नगर"
"बैठो, रास्ते मे ही पड़ता है, पहुँचा दूंगा।"
रोजी भी परेशान थी, समय का फायदा उठाया, और दोनो हवा में उड़ने लगे।
जब एक ही आफिस में थे, तो अक्सर दोनो रोज मिलते थे। दोनो वैसे तो लोगो से घिरे रहते थे, पर मन अकेला था। धीरे से आंखे दो से चार हुई, दिल हर क्षण एक दूसरे में खोने लगा, मिलन की बेसब्री बढ़ती ही गयी।
खोने लगा, मिलन की बेसब्री बढ़ती ही गयी।
अधिकतर रोज ही कभी लोधी गार्डन, कभी तालकटोरा गार्डन में मिलने का क्रम जारी रहा। इन्ही भावनायों के मेले में उनदोनो ने जीवनसाथी बनने के सपने देखने शुरू कर दिए।
एक दिन डरते डरते रोजी ने मामा से कहा, "आप नाराज तो नही होएंगे एक बात पूछनी है आपसे।"
मामा ने कहा, "कुछ बताओगी या सिर्फ डरती रहोगी।"
"मैं और राजन शादी करना चाहते है, मेरे ही आफिस में इंजीनियर हैं।"
"रोजी, इससे अच्छी और क्या बात होगी कि बिना परिश्रम किये कोई अच्छा दामाद मिल जाये।"
शादी का एहसास रोजी के लिए ठीक वैसा था जैसे मिट्टी में कोई बीज सींचता है। उसके मन के ख्वाबो की नगरी में हलचल जारी थी, आंखों में हज़ारों सपने नींद की जगह ले चुके थे।

तय हुआ आने वाले रविवार को राजन अपने मम्मी,पापा के साथ रोजी के मामा, मामी के घर आएंगे।
राजन और रोजी जितना डरे हुए थे, उतने ही आसान तरीके से बड़ो ने आज्ञा दे दी। मामा, मामी सुनकर ही बहुत खुश थे कि दीदी के वचन को निभाने का वक़्त आ पहुँचा है।
दोनो प्रेमी आकाश में उड़ने लगे, उनकी मुलाकातें रोज होने लगी, दिल की नगरी रोशनी से जगमग थी। राजन के मम्मी पापा कहीं एक हफ्ते को घूमने गए थे, रोज ही दोनो का समय घर मे साथ बीतने लगा। रोजी के प्यारे प्यारे हाथों की बनी नई नई डिशेस घर मे बनने लगी और उसके साथ रोजी अपने कोमल हाथों से ही जब राजन को खिलाती तो दोनो को स्वर्ग का अनुभव होता। ऐसे ही एक नाजुक क्षण धीरे धीरे रोज आते रहे और कब दोनो प्रेम की हदों को लांघ गए, एक दूसरे में समा गए, कोई समझ न पाया। अब ये सिलसिला एक हफ्ते चलता रहा, दोनो को बड़ो का एग्रीमेंट तो मिल ही चुका था।

एक दिन दोनो आफिस के लिए निकले, रास्ते मे रोजी को याद आया, हेलमेट तो भूल गयी। फिर भी जाना ही था, दोनो बाइक में उड़ने लगे, रोजी गुनगुना रही थी, "जिंदगी एक सफर है सुहाना, यहां कल क्या हो, किसने जाना।"
फिर रोजी को गाँधीजी और कई देशभक्तों की मूर्तियां चौराहे पर दिखी, उसके बाद क्या हुआ, उसे कुछ ध्यान नही था।

डॉक्टर ने कहा, "आप बिलकुल ठीक हैं, पैर में प्लास्टर है, सिर में हल्की सी चोट है, ये आपके मामा, मामी हैं।"
जिनको मामा, मामी कह रहे थे, उनको पहचानने की कोशिश करती निगाहे वापस लौट आयी।
"नही, मैं इन्हें नही जानती।"
दौड़ते हुए राजन आये उन्हें भी हल्की खरोंच आयी थी, "रोजी, मैं तुम्हारा राजन हूँ।"
रोजी ने अनजान बनकर सिर हिलाया।
और राजन अकस्मात इस वज्रपात को झेलने की स्थिति में नही थे, जोर से रोने लगे, मामा उसे पकड़ कर बाहर ले गए और बोले, "धीरज रखो, सब ठीक हो जाएगा।"

कुछ दिनों बाद रोजी को मामा के घर जाना ही पड़ा, गुमसुम सी अपने भूले हुए अतीत में फिर से रोशनी डालती रहती थी। राजन को देखकर ही मुँह मोड़ लेती थी और उसे लगता था, इश्क की राहों में जंगली फूल उग आए हैं, बेचारा अपने इश्क की दुर्दशा पर आंसू पीते रहता था।
सवा महीने बाद रोजी के पैर का प्लास्टर निकल गया।
डॉक्टर की राय थी, कि रोजी को पुरानी जगह ले जाये, जिन्हें ये याद करती हैं, उनसे मिलवाये, शायद सबकुछ पहले की तरह हो जाये।
राजन ने डॉक्टर की राय मानी और एक हफ्ते बाद दोनो गोरखपुर के लिए रवाना हुए। वहां पहुँच कर स्टेशन से ही रोजी बहुत खुश नजर आने लगी, इ - रिक्शा में बैठ गए और यूँ लगता था अभी चिड़िया बनकर पूरे शहर में उड़ेगी, "यहां गोलघर की सड़क है, ये टाउन हॉल है, ये बोबीज़ होटल है, अब बस मेरा मोहल्ला बक्सीपुर आने ही वाला है, अब आया चौराहा, इससे थोड़ा सा आगे जाएंगे तो मेरे मम्मी, पापा का घर दिखेगा।"
और रोजी और राजन एक बड़ी इमारत के सामने खड़े थे, रोजी आश्चर्य चकित थी, "यहीं तो था, मेरा दुमंजिला मकान, ये इतना बड़ा कैसे हो गया ?
कॉल बेल बजायी, एक सज्जन आये, उनसे खबर मिली कि रोजी के मम्मी पापा दस साल पहले घर बेचकर दिल्ली में बस गए, क्योंकि वो यहां अपनी गुमशुदा बच्ची के लिए तरसते थे।
रोजी थोड़ी देर सिर पकड़े बैठी रही, फिर पूछा, " कोई पता है, आपके पास।"
हां, आप बैठिए, डायरी ढूंढता हूँ।
पता लेकर फिर दोनो वापस दिल्ली आए।
दो दिन बाद घर खोजने का अभियान चला, दिलशाद गार्डन में बहुत खोजने पर अंत मे, रोजी की इच्छा पूर्ण हुई।
जाली के दरवाजे में रोजी खड़ी थी और चिल्ला रही थी, " कोई है ?"
अंदर से एक बुजुर्ग महिला आयी, "हां, बोलिये किससे मिलना है?"
"जल्दी से गेट खोलो, फिर बताऊं, आंखे धुंधली हो चुकी थी।"
गले लगकर जोर से माँ को भींच लिया, " कैसी माँ हो, बेटी को नही पहचाना।"
पीछे से पापा भी निकल आये। माँ बेहोश हो चुकी थी, सबने पानी के छींटे मारे, तो होश आया।
मम्मी, पापा एक सुर में बोल रहे थे, कई बार ईश्वर से मिन्नते की, अब नही जीना।
पर शायद ईश्वर को अपना चमत्कार दिखाना था।
अब हर तरफ खुशियां थी, और रोजी भी राजन का हाथ पकड़ कर शुक्रिया अदा कर रही थी।
मामा भी आये थे और पूरी कहानी रोजी के मम्मी पापा को सुनाने को आतुर थे।
उसी समय राजन के मम्मी, पापा भी पहुँच गए और रोजी से बोले, "अब तो सब मिल गए, आओ बेटा, हमारे राजन की जिंदगी को रोशन करो।"
रोजी ने शरमा कर अपनी स्वीकृति दे दी।

पृष्ट 65 का शेष .....

मेरे पास बचा ही क्या था ? बुझा यौवन, स्थूल शरीर और अस्वस्थ मानसिकता । मैं टूट चुकी थी .. पत्र क्या पढ़ूं, ..."धीरज" मैं तो अपनी धुंधली निगाहों से अपने जीवन की सचित्र झांकी देख पा रही हूं। तुम भी तड़पोगे ज़रूर मेरा नही कम से कम अपने बच्चों का तो सोचा होता, मैं इतनी विशाल हृदय नही हूं कि तुम्हें माफ़ कर सकूं।

सुजाता पत्र पढ़ते पढ़ते कुर्सी पर ही सो गई आंख खुली तो सवेरे का सात बज रहा था। सूरज की सुनहली किरणे खिड़की के रास्ते अंदर आकर उसे दुलरा रही थी। चाय बनाने के लिए वह जैसे ही रसोई की ओर बढ़ी ही थी कि अचानक फ़ोन की घंटी बाजी ट्रिन .. ट्रिन ट्रिन ट्रिन वह दौड़ती हुई कमरे में आई फ़ोन उठाया...

हैलो कौन ?
आप कौन बोल रहे हैं?
मैं मिस्टर जोशी
अच्छा जी अंकल नमस्कार
आप कैसे हैं ?
मैं तो ठीक हूं, तुम बताओ ?

"सुजाता" तुमने हमारे दफ़्तर में जो "हिंदी अनुवादक" के पद के लिए आवेदन किया था , उस पर तुम्हारी नियुक्ति हो गई है कल आकर ज्वाइन कर लेना।

ठीक है मैं आ जाऊंगी "अंकल" धन्यवाद ।
सुजाता को आज अपनी थोड़ी सी ज़मी के लिए मुठ्ठी भर आसमां मिल गया।

रंजना किशोर
मयूर विस्तार (नई दिल्ली)

" जनाजा "

रेशमा आज बेहद खुश है, खुशी उसकी रोम–रोम से छलक रही है। कहाँ रखे वो इतनी खुशी कभी गमलों में तो कभी चीनी–चायपत्ती के डब्बों में हर जगह वो अपनी खुशी को भरकर रखना चाहती है लेकिन खुशी है कि छलक ही पड़ती है।

उसके खुश होने का एक ठोस कारण है। पूरे तेरह वर्षों के बाद वो मायके जा रही है। उसका मायका उसके घर के बगल वाली गली में है। सिर्फ पाँच मिनट का रास्ता, लेकिन उसे नापने में उसने तेरह वर्ष लगा दिये। तेरह वर्षों का हिसाब करने बैठे तो हर एक मिनट का हिसाब है उसके पास, यूँ कहें तो हर एक पल का। कोई पल ऐसा नहीं बीता जिसमें उसने अपने मायके को याद ना किया हो।

बैठी–बैठी सोच रही है क्या–क्या करेगी वहाँ जाकर पहले तो अम्मी के गले लगकर खुब–खुब हिलक–हिलक कर रोयेगी। तेरह वर्षों से मन के अन्दर जमी तकलीफों को आँसुओं के माध्यम से निकाल बाहर करेगी। तेरह वर्ष पहले उसने जो गुनाह किये थे घर से भागकर एक हिन्दु से विवाह कर लिया उसके लिये अम्मी से माफी मागेंगी। अपनी बहनों को भी गले लगाकर रोयेगी। अपने छोटे भाई दानिश को याद कर उसके चेहरे की मुस्कान कुछ और खिल गयी। जब वह घर छोड़कर भागी थी तो दानिश सिर्फ दो साल का था आज दानिश पंद्रह साल का खुबसूरत नौजवान है। मायके को तो वह एक तरह से भुला ही बैठी थी वो तो भला का रकीबन चची का जो परसों बाजार में मिल गयी। उसने ही अपने मोबाइल में दानिश की तस्वीर दिखाई। दानिश को देखते ही उसका मन मायके जाने, अपने परिवार से मिलने के लिये बेचैन हो उठा। दानिश की यादों को दिमाग में सहेजकर वह दूसरी सोच में डूब गयी। अम्मी से वह गोश्त और सेवई बनवाकर खायेगी। गोश्त का ख्याल आते ही उसके मुँह में पानी भर गया। पूरे तेरह वर्षों में एक दिन भी उसने गोश्त नहीं खाया फिर भी गोश्त का स्वाद अभी तक उसके जीभ पर है। जब भी गोश्त को याद करती है तो हर यादें ताजा हो जाती हैं। उसकी अम्मी अल्युमिनियम की बड़ी सी देगजी में गोश्त पकाती। गोश्त और मसाले की खुशबू पूरे घर क्या बाहर तक फैल जाती। वहाँ वह गोश्त भी खायेगी और सेवइयाँ भी यानि ईद से पहले घर में ईद मनेगा। शादी के बाद से वह सिर्फ एक ही चीज मनभर खायी है वह है मार।

जब भी सास था जी चाहता उसे मन भर धुनती। उस घड़ी को कोसती जब उसका बेटा उसे भगाकर ब्याह कर लिया था। उस समय सास को बारह साल की रेशमा चाल बाज, होशियार नजर आती जिसने उसके बीस साल के बेटे पर काला जादू चलाया। अपने बेटे में कोई ऐब नहीं ढूँढ पाती। उसका शौहर भी उस घड़ी को कोसता हुआ जब तब उस पर हाथ साफ कर लेता। पता नहीं वो कौन सा पल था जब वो उसे अच्छी लगने लगी और वो उसके प्यार में पागल होकर उसे भगाकर ले आया।

ऊपर नीचे तीन मंजिला बनी कोठी में किसी चीज की कोई कमी नहीं थी खासकर खाने पहनने की तो बिल्कुल ही नहीं। परन्तु उसके लिये कुछ भी नहीं था ना खाने के लिये ना ही पहनने के लिये।

हाँ घर के सारे काम उसके जिम्मे था। हिन्दु से ब्याह करके भी वो एक मुस्लिम थी। इसीलिए घर के किसी चीज को हाथ लगाने की इजाजत उसे नहीं थी। सारे लोगों के लिए खाना बनाना, बर्तत मांजना, कपड़े धोना सब उसके हिस्से था। रसोई घर में उसका प्रवेश वर्जित था। चूल्हा आँगन में निकालकर सास भंडार से सारा समान निकालकर दे देती। वो वहीं बैठकर खाना बनाती। खाना बनाने के बाद सास गंगा जल व तुलसी दल से सारे खाने का शुद्धीकरण करती। फिर सब लोग खाना खाते। खाने के क्रम में किसी को ये भी याद नहीं रहता कि उसने खाना खाया भी है या नहीं? खाना बच गया तो उसकी किस्मत यदि समाप्त हो गया तो फिर सारा दिन उसे भूखे ही रहना पड़ता। पति को ब्याह करने के जुर्म में ट्रक चलाने का काम दे दिया गया। सामान लेकर एक शहर से दूसरे शहर का चक्कर लगाता। सप्ताह में एक दिन दस–पंद्रह हजार रुपये कमाकर लौटता, लेकिन रेशमा के हाथ पर फुटी कौड़ी भी नहीं धरता। सारा पैसा लाकर पिता को देता।

पिता उसे जेब खर्च देते। अपनी पढ़ाई छूटने, बैलों की तरह काम में जुटे रहने के लिए वो रेशमा को ही जिम्मेदार ठहराता। रात रात भर ट्रक चलाने के कारण उसे पीने की भी लत लग गयी। शराब के नशे में जमकर रेशमा की धुनाई करता और चिल्लाता रहता तुमसे शादी करके घोबी का कुत्ता हो गया हूँ ना घर का रहा ना घाट का। चुपचाप जुल्म सहना उसकी आदत में शामिल हो गया। कभी–कभी रात के अँधेरे में सोचती यहाँ से निकल भागे। लेकिन भाग कर जायेगी कहाँ, क्या करेगी। बच्चों का ख्याल आ जाता कम से कम सिर पर छत तो है बच्चों को खाना तो मिल रहा है।

शादी से पहले उसे हिन्दुओं के पर्व त्यौहार आकर्षित करते। इतने सारे त्यौहार होते हैं। मन ही मन सोच रखा था शादी के बाद वो भी साड़ी, चूड़ियाँ पहनकर मंदिर जायेगी व्रत उपवास रखेगी परन्तु मंदिर की कौन कहे घर के पूजास्थल को भी छूने की मनाही थी। अब वो ना मुस्लिम है ना ही हिन्दु। फिर–फिर वो क्या है? उसे लगता है वो हिन्दु–मुस्लिम ना सही एक इंसान है और इंसानियत ही उसका धर्म है। अपने दोनों बच्चों को बहुत–बहुत पढ़ायेगी और एक अच्छा इंसाना बनायेगी लेकिन उसे लगता है ये घर और समाज उसे इंसान बनकर जीने ही नहीं देगी।

उसके बच्चे को बाहर क्या घर में भी ''दोगला'' (दो नस्ल का) के बच्चे कहकर पुकारा जाता है। इन सब से कैसे बाहर निकले हमेशा सोचती रहती क्योंकि समाज में इंसान नाम का कोई जीव नहीं है वो या तो हिन्दु या मुस्लिम या सिख या फिर ईसाई है जो हमेशा मजहब के नाम पर लड़ते–झगड़ते रहते हैं। एक दिन किसी बात पर सास को गुस्सा आ गया। सामने पड़ी छड़ी उठाकर उसके पीठ पर दनादन चलाने लगी। घर में ससुर, जेठ, पति सब थे। परन्तु किसी ने बीच–बचाव नहीं किया। पता नहीं कैसे उसके अंदर का स्वाभिमान जाग उठा। अपनी सास की कलाई मरोड़ कर उसने डंडा छीन लिया और लगातार प्रहार करती रही। तब तक पीटती रही जब तक छड़ी छूट नहीं गयी। घर में सबको साँप सूँघ गया। सब डरे सहमे से उसका मुँह देख रहे थे। उसने तुरंत अपने दोनों बच्चों का हाथ पकड़ा और घर से निकल गयी। रात के आठ बज रहे थे। डर के मारे उसका शौहर भी पीछे–पीछे चला आया। घर के बगल में ही छोटी सी खोली किराये पर लेकर रहने लगी। उस घटना के बाद से उसका शौहर कभी भी उस पर हाथ उठाने की जुर्रत नहीं कर पाया। उसे हमेशा अफसोस रहा कि उसने यही हिम्मत और पहले क्यों नहीं दिखायी। क्यों इतने दिन जुलम सहती रही। किराये के घर में आकर उसकी जिन्दगी में चैन आ गया। थोड़ा–बहुत सिलाई जो अब्बू से सीखा था वो काम आ गया। कुछ पैसे हाथ आने लगे।

पिछली बातें सोचते–सोचते दोपहर हो आयी। उसे बहुत से काम निबटाने हैं। दानिश का ख्याल आते ही दानिश के पैदाइश की याद आ गयी। पाँच बहनों के बाद दानिश को पैदा करना अम्मी के लिए आसान नहीं था। अम्मी के शरीर में छटाँक भर भी खून नहीं थी। डॉक्टर ने तो यहाँ तक कह दिया कि जच्चा या बच्चा दोनों में से कोई एक ही बच पायेगा। लेकिन खुदा को शायद कुछ और भी मंजूर था। अम्मी और दानिश दोनों ही सलामत थे। लेकिन अम्मी की हालत इतनी खराब कि बिस्तर से चिपक गयी। दानिश को पालने की पूरी जिम्मेदारी रेशमा पर। अपनी काली बकरी का दूध निकालकर रूई के फाहे में डूबोकर किसी तरह बूँद–बूँद दूध दानिश के मुँह में डालती। घर के सारे काम के साथ चारों बहनों की भी देखभाल करती। दानिश के लिये तो बिल्कुल माँ ही बन गयी। कोई साल भर बाद अम्मी चलते–फिरने लायक हुई। तब तक दानिश भी साल भर का हो गया। रेशमा को ही माँ समझता। रेशमा भी उसे अपना पहला बच्चा मानती। कभी दानिश की तबीयत बिगड़ जाती तो अम्मी से ज्यादा रेशमा हलकान हो जाती। दौड़कर मौलवी साब के पास जाकर पानी पढ़वाकर लाती। दानिश ठीक हो जाता तब जाकर उसे चैन पड़ता। बुरी नजर से बचाने के लिये ताबीज भी दानिश के गले में बाँध दी। जब वो घर से भागी थी तो दानिश दो साल का था आज पूरे पंद्रह वर्ष का सजीला नौजवान हो गया। दसवीं में पढ़ाई कर रहा है। अपनी सिलाई से कुछ पैसे जमा किये थे। उससे अम्मी के लिये एक कुरती और अब्बू के लिये एक कुरता खरीदा। अब्बू का ख्याल आते ही उसके रोंगटें खड़े हो गये। क्या अब्बू उसे घर में कदम रखने देंगे? जो होगा देखा जायेगा, उसने अपने ख्यालों को झटक दिया। का मन बना लिया तो जाकर रहेगी। हो सकता है दानिश बात सम्भाल ले। घर और बहनों के लिये छोटी–मोटी चीजें खरीदने में सारे पैसे खत्म हो गये। तब ख्याल आया दानिश के लिये तो उसने कुछ खरीदा ही नहीं। ऐसा कैसे हो सकता है अपने प्यारे भाईजान के लिये कुछ सौगात लेकर ना जाये। क्या करें पैसे का इंतजाम कैसे करें। इसी उधेड़बुन में थी। तभी उसका हाथ अपने कान पर गया। एक छोटी सी सोने की बाली जो अम्मी ने उसे पहनायी थी बस वही एक मायके की निशानी उसके पास है। कई बार सोचा सिलाई के पैसे जमा करके एक झुमके बनवा लेगी। लेकिन हर बार घर में कोई ना कोई समस्या आन खड़ी हो जाती और जमा पैसे निकल जाते। कई बार ऐसा भी खाका हुआ कि कान की बाली गिरवी रखने की नौबत आयी लेकिन उसने कुछ ना कुछ बंदोबस्त करके बाली बचा ली। आज सोच रही है क्यों ना इसी बाली को गिरवी रखकर दानिश के लिए कुछ ले लूँ।

हिम्मत जुटाकर बाजार गयी। बाली गिरवी रखकर दानिश के लिये काले रंगा का कुरता–पाजामा खरीदा। गोरा–चिट्टा दानिश इन कपड़ों में खिल उठेगा। यही सोचकर उसके चेहरे पर मुस्कान फैल गयी। ढेर सारी फल मिठाईयाँ खरीदी।

शाम से होती बुंदा–बाँदी भयानक तुफान का रूप ले लिया जमकर अंधर पानी आया। रह–रहकर बिजलियाँ कड़कती रही। रात भर जागती रही या अल्लाह तुफान को रोक लो। ऐसा ही नजारा सुबह तक रहा तो वो मायके कैसे जा पायेगी? अंजानी आशंका से दिल घबड़ाता रहा। सुबह होते–होते आसमान बिल्कुल साफ। इनते बड़े तुफान का कहीं नामोनिशान नहीं। हिम्मत जुटाकर तैयार हुई। पैर पता नहीं क्यों नौ–नौ मन के हो रहे हैं कल वाला उत्साह गायब हो गया। गली में पैर रखते ही लगा जैसे सन्नाटा पसरा हो। ये सन्नाटा किसी तुफान का फिर से आने का संकेत दे रही हो। घर के बाहर का नजारा कुछ और ही था बहुत सारे लोग जमा हो रहे हैं। अम्मी और बहनों के चीखने–चिल्लाने से वातावरण भयावह लग रहा है।

सामने दानिश की अर्थी सज रही है। वह दहाड़ मार कर दानिश के सीने पर गिर पड़ी। साथ लाये कपड़े–फल मिठाईयाँ आसपास बिखर गयी। कल जब दानिश अपनी बकरी को लेकर चराने निकला तो बुँदा–बाँदी भयानक तुफान का रूप ले ली। इतना तेज अँधड़ आँखों में ढेर सारा धूल भर दिया। जब तक दानिश अपने को सँभालता तब तक बकरी पता नहीं कहाँ चली गयी। अपनी जान से प्यारी बकरी को लिये बिना वापस घर जाने के लिये तैयार नहीं हुआ। बहुत मुश्किल से ढूँढ़ने पर बकरी को बिजली के एक खम्भे से सटे हुए पाया। दौड़ते हुए अपनी बकरी को ज्यों ही खींचना चाहा खम्भे का करंट बकरी के साथ–साथ दानिश की भी लील ली। देर तक दानिश के सीने से चिपक कर रोती रही। जब उसका जनाजा उठकर जाने लगा तो वो भी सिर्फ चार कदम दानिश के जनाजे के साथ चलने की जिद करने लगी।

वो रोती–चिल्लाती रही अब्बु मुझे भी भाई को कंधा देने दो। कुछ नहीं करूँगी मैं सिर्फ कलमा पढ़ते हुए धीरे–धीरे चलुँगी ताकि मेरा भाई आराम से सो जाये। लेकिन रिश्ते की चची और फूफी पकड़कर उसे कमरे में बंद कर दी पैगम्बर ने औरतों को कब्रिस्तान में जाने के लिए सख्त मना किया है। उस दिन से रेशमा बूत बन गयी। दिन भर खामोश रहती। सिर्फ बीच रात में उठकर बैठ जाती और फातिहा पढ़ने लगती। ऐसा लगता मानो दानिश के कब्र पर बैठी हो।

लघुकथा

डा. रश्मि तिवारी

"मुठ्ठी भर आसमां"

सुजाता ने लम्बी सांस छोड़ी और पत्र मेज पर रख दिया। कुर्सी पर सिर टिकाकर आंखे बंद कर ली । उसके चेहरे पर चिंता के बादल गहराने लगे। वैसे तो धीरज के पत्र में कुछ ऐसा अप्रत्याशित नही था बस जिसकी आशंका थी वह तथ्य बन कर सामने आ खड़ा हुआ। क्या करें वह ? इतना लंबा दाम्पत्य जीवन क्या एक ही झटके में टूटकर बिखर जायेगा ? क्या वह इस टूटन को बर्दाश्त कर पायेगी। धीरज क्या इस दिन के लिए मैंने तुम्हारे कहने पर गांव में रहना स्वीकार कर लिया था ? विचारो के भव मे डूबती - उतराती सुजाता रात भर सो न सकी ।

आज से सात वर्ष पूर्व जब मैं ब्याह कर तुम्हारे घर आई थी, छलावो से दूर पूर्णतया निश्छल। बचपन की मायावी दुनिया को छोड़ने के बाद से ही सुनते आए है पति परमेश्वर होता है, और उसकी प्रत्येक बात को मानना अच्छी पत्नी का परम कर्तव्य । मैं तो सदैव यही सोचती रही विश्वास और समर्पण काफ़ी है वैवाहिक जीवन को सफल बनाने के लिए। फिर मुझे किस जन्म के पापों का परिणाम भुगतना पड़ रहा है।

तुम्हारी नौकरी लगी और तुम शहर चले गए। मुझे साथ ले जाना उचित न था क्योंकि तुम्हारे बूढ़े मां-बाप यही गांव में, पिता जी अक्सर बीमार रहते। तुम उनकी इकलौती संतान। तुम्हारा जाना निश्चित तुम्हारी नौकरी रही मैं, मैं कहां जाऊं ? मेरे कर्तव्य और संस्कार ।

समय कब रुका , साल भर बाद हमारे बेटी हुई। परिवार में सभी खुश बहुत दिनों बाद । पिता जी का मन लगने लगा बच्चे के साथ, उनकी तबियत में भी सुधार हुआ। तुम कुछ ऐसा ही कहा करते थे और मुझे भी ऐसा ही लगा। घर का वातावरण ही बदल गया अब तो सभी प्रसन्न एवं स्वस्थ जान पड़ते थे।

तुम्हारी नौकरी चलती रही और हमारी जिन्दगी, समय नहीं अब तो हम बीत रहे थे। तीसरे साल हमें एक बेटा हुआ । सभी बहुत खुश थे, घर में चहल पहल भी बढ़ गई थी। पिता जी अपनी बीमारी को और माता जी पारिवारिक समस्याओं को भूलकर बच्चों में व्यस्त हो गये।

मेरी संसार सिमटता गया, अब मैं जहां थी उसे ही अपनी नियति मान बैठी। कभी-कभी लगता था सारी प्लानिंग क्या मेरी ही थी ? पर नहीं ये सब कहां सोचा था ? बस कठपुतली बनकर रह गई थी मैं समय के रंगमंच पर , न कुछ सुनने लायक रहा न कहने । तुम्हारा साथ न सही, बाकी सब तो मिल ही रहा था । तुम्हारा ट्रान्सफर, तुम्हारा प्रमोशन, कभी यहां कभी वहां। आना जाना चलता रहा पहले सप्ताह में एक बार, फिर पन्द्रह दिन में एक बार ।अब तो इंतज़ार भी नहीं रहता था।समझ न सके ऐसे समाज को और उसके द्वारा आरोपित संबंधों को। क्या ज़रूरत है इन सब रीति रिवाजों की। कितने अधूरे, कितने खोखले हम सिर्फ एक - दूसरे को ढोते रहें, अपना न सकें आज तक। मेरी जरूरते हो ही नहीं सकती क्यों ? मैं मां हूं ना, बच्चें तो मैंने ही पैदा किए हैं तो उनकी देखभाल, पालन पोषण ये मेरा ही काम है। पापा की हिदायतें, मां के संस्कार रह - रह कर तोड़ रहे थे सभी बने- बनाएं पूर्वाग्रहों को ।

मेरा मन बहुत कुछ करने और कहने को करता था पर परिस्थितियां प्रतिकूल थी। फिर पापा के शब्दों का भंवर हम तो उलझते ही गए, अभी पढ़ाई के दिन हैं पढ़ लो, यह तुम्हारी तपस्या का समय है, जीवन सुधर जायेगा , ससुराल जाकर अपने मन की करना। पिक्चर देखना ,फैशन करना दिन भर सोना रात भर जागना आदि - आदि .....। पर पापा पढ़ने लिखने के बाद भी तो मैं कुछ भी नहीं कर पा रही हूं। सभी ख्वाहिशों का दमन, सतरंगी सपनों का समापन । हर दिन खुद को समेटती और रात तक टूट जाती । संतोष सिर्फ इतना सा था कि तुम अपने ही हो क्योंकि बच्चे हमारे हैं, यह तो विवशता ही है की हम साथ नही रह पा रहे है। मन जो मानता था वह सिर्फ़ इतना सा तथ्य था कि जिम्मेदारियां मेरी हैं।

जब तुम छुट्टी ख़त्म होने पर वापस शहर जाते, मन संशय से भर उठता मैं विचलित हो कर सोचने लगती तुम इतने समय से अकेले रह रहे हो, कैसे रहते होगे क्या बच्चों की और मेरी याद नहीं आती ? मुझे तो बहुत अकेलापन लगता है। तुम्हारा वहाँ अवश्य कोई होगा , हर व्यक्ति की कुछ जरूरतें होती ही हैं। कभी जी करता है कि तुम्हारे कांधे पर सिर रख कर इतना रोऊ की मन कि हर गांठ खुल जाएं। पर कहां सामने आने पर तो सिर्फ शिकवे और शिकायते । मैं सोचती ही रह गई और तुम किसी और के हो गए।

अब तुम्हारे जीवन में एक नवयौवना आ चुकी थी जो शायद यह जानती ही नहीं थी की तुम शादी शुदा हो तुम्हारे बच्चे है, परिवार है । क्योंकि उसने तुम्हारे परिवार को न कभी देखा और शायद तुमने कभी ज़िक्र भी नहीं किया होगा। उसका आकर्षण बढ़ता गया और बस .... ।अब तो यह स्थिति यह हो गई कि तुम बहकते गए और मै बिखरती । तुम खुश थे, सन्तुष्ट भी , महीने में एक बार आते माता - पिता और बच्चों से मिलकर चले जाते। तुम्हें प्यार मिला , फिर सुंदर यौवना जो तुम्हारी सभी जरूरतें पूरी कर रही थी। परिवार में भी किसी को कोई आपत्ति नहीं थी। पर्दे के भीतर असलियत तो मैं भुगत रही थी। बिना शादी के साथ रहा तो जा ही सकता है। कुछ ऐसा ही दोहरा मापदंड है इस दुनिया का । मेरे संस्कार, मेरी विवशता और मेरी जंजीर बन गए । मैं बच्चों, परिवार, समाज और सबसे ज्यादा दो खानदानों की इज्ज़त सम्हालती रह गई। **(शेष पृष्ट 62 पर)**

लघुकथा

अर्चना श्रीवास्तव 'आहना'

"आत्मसम्मान"

दृढ़ संकल्पित मन और भयहिनता ही आत्मसम्मान की पूंजी होती है।यदि किसी बात की शंका हो और खुद पर भरोसा ना हो तो यह टिक नहीं पाता।
आत्मसम्मान अक्सर समर्थ,बलवान और गर्व की निशानी होती है।यह किन्हीं अर्थों में हमेशा समृद्धि,सत्ता,पद और रूतबा ,जिसमें धन की भूमिका सबसे अहम होती है,से जोड़कर देखा जाता है।जिनके पास इनमें किसी की भी कमी है ,उसे पूर्ण रूपेण आत्मसम्मान को सही अंजाम तक पहुंचाना, टेढ़ी राह है। क्योंकि उसका कोई भी निर्णय ,जो अंतर्मन की आवाज होगी, उसमें अकेले चलने की ताकत और संयम विरले में ही पाई जाती है ।सभी की अपनी मजबूरी और जरूरत है। उन्हें अपनी दिल की आहट को अनसुनी करने विवशता से सर झुकाना होता है।

लेकिन आज मैं सबके समक्ष एक ऐसे प्रतिभाशाली, विलक्षण दिव्यांग की अविस्मरणीय सच्ची कहानी रख रही हूं,जिसे याद कर मैं अब भी रोमांचित और प्रेरित होती हूं।मैं शहर(नाम का जिक्र जरूरी नहीं है) के जिस स्थान पर और संस्थान में अपने मास्टर डिग्री की पढ़ाई करने जाती थी,वो काफी रिहायशी क्षेत्र में स्थित था।वहां जिला अधिकारी से लेकर काफी उच्च ओहदे वाले सरकारी अधिकारियों का निवास था। इसलिए सड़को पर जो एक चौराहे से जुड़ी हुई थी ,आवागमन ज्यादा होता था और लोगों का भी काफ़ी आना-जाना होता था।
मेरी क्लासेज सुबह में होती थी ,जब गाड़ियों की संख्या थोड़ी कम होती थी।मैं जब भी आटों से रोड पर उतरकर अपने शिक्षण संस्थान की ओर जाती ,मेरे रोड़ के रास्ते भगवान की एक बड़ी-सी तस्वीर बनी होती थी। कभीं शिवजी,कभी कान्हा जी, कभीं महावीर जी, कभीं देवी के विविध रूपों का।काले,उजले और गहरे लाल चाकॅ(खली) ब्लैक बोर्ड पर लिखने को इस्तेमाल किया जा सकता है।या हो सकता है कि कोई और सस्ती मिलने वाली देशी चीज हो,जिसकी जानकारी मुझे अबतक नहीं है।

मैं उन तस्वीरों की भव्यता,जीवंतता और सौन्दर्य से इतनी विस्मृत हो जाती थी कि क्लास में लेट पहुंचने का रिस्क लेकर भी बिना उन्हें देखे नहीं जाती थी।वैसे भी तब मुझे चित्रकला में बेहद रूचि थी और मैं खुद भी अपने समय मिलने रेखाएं खींचती रहती थी।
इस कहानी का सबसे बड़ा पात्र और मर्म उस कलाकार के व्यक्तित्व और कृतित्व का आकर्षण हैं,जिसका अमिट छाप मेरे मानस पर अंकित है।

वो एक विकलांग,जिसका एक पैर कटा हुआ व्यक्ति था,लेकिन जोश,हौसला और प्रतिभा का वो अलौकिक अवतरण था।उसकी भक्ति,कला-कौशल और आस्था कितनी बेमिशाल थी ,जिसका अनुभव मुझे कभीं और कहीं नहीं मिला।वो एकदम तंगहाल ,मामूली-सा मैले वस्त्र और बिखरी बाल-दाढ़ी में , अद्भूत कला का मालिक था। बिल्कुल अहले सुबह, गाड़ियों की भीड़ बढ़ने से पहले ही वो अपनी कलाकृतियों को उकेरने में तन्मय हो जाता था।ऐसा नहीं था कि बस वो एक ही स्थान पर चित्र उकेरता, बल्कि रोज नयी तस्वीर चौराहे मिलती हुई अन्य सड़क पर वो उसी उत्साह और परिपूर्णता से बनाया।उसकी बनी हुई देवी-देवताओं की विभिन्न तस्वीरों से कितने पैदल चलाक या गाडियों गुजर जाते । कोई देखता तो ज्यादातर अनदेखा कर चले जाते।वह दिव्यांग किसी की भी प्रशंसा और गुणगान की प्रतिक्षा से बेफ्रिक बस अपनी कला में संलग्न रहता ।मैनें कहीं उसे हाथ फैलाते या किसी से कुछ मांगते नहीं देखा।अपने मुफ्त के कला_प्रर्दशन ,जो अतुलनीय था,ना उसे कोई गुमान था,ना किसी उपहार-सम्मान की लालच।था तो उसकी अगाध निष्ठा और और अटल आत्मबल। पता नहीं कैसे उसका जीवन यापन होता था, क्योंकि मैंने कभी उसे हाथ फैलाते या किसी से कुछ मांगते नहीं देखा।अपनी कला के प्रति उसका कोई गुमान नहीं,बस समर्पण ही देखा ,जो एक अति व्यस्त सड़क पर अपने इष्ट और भगवान की आराधना को प्रेरित करने का साहस देता था।मुझे नहीं पता आत्मसम्मान की इससे बड़ी क्या मिशाल और संजीव उदाहरण है सकता है,जहां लोग बस छोटी-सी बाधा और लालच में बिक जाते हैं।बस इन्हीं भावनाओं के साथ मैं,उस महान गुमनाम विभूति और कलाकार का अभिनंदन करती हूं।

लघुकथा

सरोज बाला
कठुआ (जम्मू कश्मीर)

"अधूरी बात"

नेहा दूसरी लड़कियों से अलग थी। न ज्यादा बोलती थी और न ही दूसरी लड़कियों जैसी ज्यादा फैशन करती थी। अकसर खाली समय में शायरी की किताबें पढ़कर अपना शौक पूरी करती थी। नेहा अकसर शायर आंनद कुमार की शायरी पढ़ती थी। कभी कभी शायर आंनद कुमार की तस्वीर देखती तो बातें करती तो कभी मुस्कराती। नेहा शायर को मन ही मन पसंद करने लगी और भूल बैठी कि उनकी उम्र में कम से कम छब्बीस साल का अंतर है।
एक दिन किताब पढ़ते पढ़ते खुद से बातें करने लगी," काश मेरी कॉल को आज उठा ले ... काश... काश... काश .... काश। " इतना कहकर नेहा नम्बर ड़ायल करने लगी। कॉल लगने पर कांपते हुई आवाज़ में," ..... आप शायर आनंद जी ..... बोल रहे है। "
" जी .....आप कौन ?"
" सर मैं नेहा ...."
" माफ़ करियेगा मैं आपको जानता नहीं ...। "
" मैं आपकी फैन हूँ आपसे शायरी सीखना चाहती हूँ आपसे मिलना चाहती हूँ। "
" आप मुझे वीमन कालेज परेड़ के थेटर में मिले .... कल मैं वही किसी कार्यक्रम में जा रहा हूँ। "
इतना कहकर आनंद कुमार ने कॉल काट दी।
बात अधूरी रहने के कारण उदास हो जाती है। नेहा पूरी रात सोचती रहती है कि कैसे कल मैं उनसे कैसे मिलूं? सारी रात करवटें बदलती रही। वह अपने ऑफिस में छुट्टी के लिए प्रार्थना पत्र भेज देती है। जम्मू निकलने से पहले माँ से कह देती है माँ आज देर से आऊंगी। किसी सहकर्मी के घर दावत के लिए जाना है।
नेहा पूछते पछाते हुए वीमन कॉलेज पहुंच जाती है। वीमन कॉलेज के थेटर में सबसे पीछे बैठ के मुशायरा सुन रही थी । मुशायरा खत्म होने के बाद नेहा आनंद जी से मिलने के लिए भीड़ में जाकर आंनद से मिलते हुए कहती है ," सर ... मैं नेहा .... जिसने कल आपको कॉल की थी शायरी के लिए। " जैसे ही आंनद की नज़र पड़ती है नेहा भीड़ में ओझल हो जाती है। नेहा फिर मिलने की कोशिश करती है तब तक आंनद जा चुके थे।
"आज मेरी कोशिश रंग नही लाई ... उफ्फ मेरी किस्मत .....लेकिन मैं हिम्मत हारने वाली नही हूँ। आज न सही फिर कभी सहीं। खुद से कहती हुई नेहा मायूस हो कर लौट आती है। ले
थकी हारी नेहा रात को सोने की तैयारी कर रही थी। मोबाइल को साईलंट करने लगती है। तभी आनंद जी का एस.एम.एस देखती है। जिसमें लिखा था नेहा जी आज के लिए माफ़ी चाहूंगा। आपसे मिलना चाहा पर न जाने आप भीड़ में कहा ओझल हो गई। आप मैसज देखके मुझे कॉल करे।
नेहा की खुशी का कोई ठिकाना न रहा। नेहा झट से नम्बर डायल करती है। रिंग लगते ही आंनद जी ने पूछा , " नेहा कैसा लगा आज का मुशायरा। "
" ठीक था आप मिले और भी अच्छा लगा। मैं ज्यादा देर रूक न सकी। शाम हो चुकी थी। रात को सात बजे से पहले लखनपुर भी पहुंचना था।
" आप लखनपूर यानी कठुआ से ! मुझ से मिलने के लिए जम्मू तक आ गई। लगभग एक सौ बीस मीटर की दूरी तय करके आई .... मुझे लगता है तुम घर में कोई बहाना लगाकर आई होगी .... तुमने मुझसे मिलने के लिए इतना कुछ किया मैं तुमसे ठीक ढंग से बात न कर पाया। अब तो तुम्हें शायरी सिखाने ही पढ़ेगी। आज के लिए इतनी बात काफी है। मैं तुमसे तीन दिन के बाद बात करूंगा। बाय नेहा गुड़ नाइट अपना ध्यान रखना। "
नेहा बहुत खुश थी इसी खुशी के मारे खुद पे इतरा रही थी। प्यार मुहब्बत के सपने सिंजोते हुए सो गई।
अगले दिन नेहा का ऑफिस की तरफ से जम्मू जाना हुआ। नेहा ऑफिस का काम निपटा के थोड़ी देर के लिए अपनी सहेली मंदिरा के घर भगवती नगर जम्मू चली गई। नेहा सहेली के घर से लौट ही रही थी तभी उसकी नज़र शायर आंनद पर पड़ती है नेहा की खुशियों का कोई ठिकाना नही रहा। " आंनद सर ....."
आंनद ने पीछे मुड़ के देखा तो मुस्कराती हुई नेहा हांफती आ रही थी। आंनद ने भी हंसते हुए आवाज़ लगाई," चुटकी आ गई तुम ?"
" आना तो था ही .... वरना आप से कैसी मिलती ? "
"मेरे लिए क्या लाई हो ... मेरा मतलब कोई कविता कोई शेर। "

" जी ... आप सुनते चले " नेहा डायरी निकाल के पढ़ना शुरू होती है । "
" काश तुम मेरे होते .... मैं तुम्हारे साथ मोहपाश में बंधी .... तुम्हारे साथ साथ चलती ..... न छोड़ती साथ तुम्हारा जन्मों जन्मों तक .....काश तुम मेरे होते .... चुरा के दुनिया से आँखों में सजा लेती नींद की तरह.... देखा करती सपने एक दूजे के होने के .... काश तुम मेरे होते ... यह मैने सिर्फ सिर्फ आपके लिए लिखी है । "
" बहुत खूब मेरी चुटकी ... अब तुम्हें बहुत सी कविताएं लिखनी है । वो सिर्फ तुमने अपने लिए लिखनी है मेरे लिए नही ..."
" माफ कीजिएगा पर मेरी कविताएं आपके लिए मेरे गीत आपके लिए मेरे शेयर आपके लिए है। "
" तुम एक नम्बर की पागल हो । तुम्हें ऐसे व्यक्ति के लिए कविता लिखनी चाहिए जो तुम्हारी उम्र का हो जो तुम्हारे साथ जीवन गुजारने के काबिल हो और तुम्हारी पसंद पर लोग नाज़ कर सके । फिर देखना तुम्हारी कविता में कैसे निखार आता है ? "

"माफ कीजिए *मैं आपको प*संद करती हूँ भले हमारे बीच उम्र का फासला हो भले ही समाज हमारे प्यार को समझ या न समझे.,,, भले ही हम साथ न रहे । "
" तुम सा बड़ा बेकूफ मैने आज तक नही देखा । एक बूढ़े और शराबी इंसा से प्यार कर बैठी । तुम जानती ही क्या हो बारे में । ब्रेन कैंसर का मरीज़ हूँ मैं .... शराब मेरी कमज़ोरी है । तुम्हें पता नही लड़कियां मेरे पास आने से भी ड़रती है । "
" आप ऐसे नही थे आपकी किताबे पढ़ती रहती हूँ । आप दुनिया से छुपा सकते है मुझसे नही। आप ही मेरे को सब कुछ सुनाएगे मैं उस दिन का इंतज़ार करूगीं । " नेहा ती आँखें पोंछती हुई चली आती है ।
आंनद नेहा को जाते हुए देखके खुद से बोलता है," मुझे माफ़ करना तुम्हारे दिल को ठेस नहीं पंहुचाना चाहता था । प्यार तो उसने भी किया था जिसने बीमार पति को खाने में ज़हर मिला दिया था । यह सोचके कि पति के बीमार रहने के कारण बिजनेस ठप्प हो गया था। और दस लाख का कर्ज़ा था। जिसका भुगतान करना था। ."
आंनद रात को अपनी शायरी को पढ़ रहा था। तभी आंनद मोबाइल पर नेहा का मैसज देखता है जिसमें लिखा था कि आप के बारे में जानके रहूगी । भले आप बताओ या न बताओ। "
आनंद ने जवाब देते हुए कहा ," तुम्हें पूरा हक्क है मेरे बारे में जानने का तुम्हारी इच्छा है ।

आंनद ने अपने मेल आईडी में लिखा था ,,,," जानता हूँ तुमको मेरे बारे में सोच के बहुत बुरा लगा होगा पर मैं नही चाहता था कि तुम मेरे लिए अपने आने वाले कल को बरबाद करो । मैं तो वैसे भी चंद दिनों का मेहमान हूँ ..... जाने के बाद लौटने वाला नही । मेरे बारे में बहुत कुछ तुम खुद ही जान जाओगी वक्त के साथ .....।

लघुकथा

राम मूरत 'राही'

इंदौर -- 452009 (म.प्र.)
मो.नं. -- 94245-94873

"सरकार ने कहा था"

एक चौराहे पर चाय की दुकान के बाहर तीन सरकारी कर्मचारी चाय पीते हुए बतिया रहे थे। पहला बोला -"महंगाई आसमान छू रही है, सरकार कंट्रोल भी नहीं कर पा रही है।"

दूसरा - "हाँ यार, इस सरकार ने तो हमारा जीना मुश्किल कर दिया है।"

तीसरा बोला -" सरकार ने कहा था अच्छे दिन आने वाले हैं, लेकिन हमारे तो बुरे दिन ला दिये।"

तीनों की बातें बड़े ध्यान से सुन रहे उस दुकान के एक नौकर ने जो उन्हें जानता था, उसने कहा -"बाबूजी, आप लोग तो सरकारी कर्मचारी हैं, फिर भी महंगाई का रोना रो रहे हैं। जबकि सरकार आप लोगों को महंगाई भत्ता और समय- समय पर कई अन्य सुविधाएँ भी देती है।' थोड़ा रुककर वह फिर बोला -"अगर ये रोना हम जैसे गरीब लोग रोयें तो समझ में आता है। क्योंकि हमें न तो सुविधाएँ मिलती हैं, न ही महंगाई भत्ता...।"

लघुकथा

सन्तोष सुपेकर
31, सुदामा नगर, उज्जैन
9424816096

"एक्सिलेटर, ब्रेक और क्लच"

"अरे या ssssर! च च च..."कार चलाते हुए मैंने दूर सामने सड़क पर पैदल जाते एक व्यक्ति को देखा तो भौंहे सिकुड़ गई और मुँह कड़वा हो गया ," आज रास्ता ही बदल लेना था मुझे..... आजकल भूलने बहुत लगा हूँ मैं ।ये अंकल दिख ही गए आखिर। क्या करूँ आज ?बिठाऊँ या नही बिठाऊँ इनको? "

रोज मै जब अपनी कॉलोनी से मुख्य सड़क के लिए कार में निकलता तो उसी समय पैदल जा रहे उस बूढ़े व्यक्ति को हमेशा कार में बैठा लेता ,बिना चूके और उनके धर्म स्थल तक छोड़ देता जो कि मेरे दफ्तर के रास्ते में ही पड़ता है। रोज के इस मिलन से तरह हमारी अच्छी जान पहचान हो गई थी।

कल शाम उन बुजुर्ग के धर्म वालों और मेरे धर्म के लोगों के बीच शहर के एक धर्मस्थल के बाहर झड़प हो गई थी जोरदार.. मेरे धर्म वाले छ: लोग घायल हुए थे, शहर में कर्फ्यू लगने सी स्थिति हो गई थी , बमुश्किल मामला सम्भला था...

"क्या किया जाए अब? बिठाऊँ या नही इन अंकल को? बिठा लेता हूँ यार ?" एक पैर फिर ढीला पड़ा और एक कड़क हो गया।"कुछ भी हो, इंसानियत बड़ी चीज है। "पर हाँ " तभी कुछ याद आया तो पैरों की हरकत फिर बदली,"वो मेरा परिचित ननकु भी तो घायल होकर भर्ती है अस्पताल में! "अब पैर और हाथ अनियंत्रित होकर तेजी से कार के उपकरणों पर हिलने लगे थे और साफ आसमान जैसे मन के कैनवास पर सांप्रदायिक रंग बिखरने लगे थे......" कल के झगड़े में वो भी तो बुरी तरह घायल हो गया था .....फिर?.नही नही ...इन लोगों पर कैसे भरोसा करें?छोड़ो यार । काहे के अंकल?" सोचते सोचते मेरी कार विचित्र सी आवाज़ करती, पैदल चलते उस बुजुर्ग के पास से फर्राटे से निकल गई ....

पीछे पलट कर मैंने नहीं देखा और चैन की एक लम्बी सांस ली । उलझन की इस प्रक्रिया मे सबसे ज्यादा कसमसाए तो मेरी कार के एक्सिलेटर, ब्रेक और क्लच!!

ग़ज़ल

कमल पुरोहित अपरिचित

बाद कितने दिन मैं आया फेसबुक दीवार पर
कुछ नया कुछ है पुराना फेसबुक दीवार पर

क्या बुरा है क्या है अच्छा लोग ये सोचे नहीं
जो पसन्द आया वो लिक्खा फेसबुक दीवार पर

मंडराता जा रहा है जाने कितने साल से
मज़हबी नफ़रत का साया फेसबुक दीवार पर

राज की कुछ नीतियों से लोगों में अनबन बढ़ी
आपसी रिश्ता भी टूटा फेसबुक दीवार पर

अब नहीं चौराहों पर आशिक़ की लगती जमघटें
प्यार का अब खेल चलता फेसबुक दीवार पर

काम की बातें कहीं बेवज़ह है तकरार भी
दोस्तों के साथ झगड़ा फेसबुक दीवार पर

हाँ समय बर्बाद उसका तो न करता फेसबुक
काम की बातें जो करता फेसबुक दीवार पर

नवल किशोर शर्मा नवल
बिलारी मुरादाबाद

आदमी!आदमी!आदमी!आदमी!
खो रहा आँख में अब नमी आदमी।
खो रहा आदमी आदमीयत यहाँ,
अब बचाना पड़े लाज़मी आदमी।
है परेशां बहुत आदमी आजकल
खो भरोसा रहा आदमी आदमी।
कोई शैतान सा कोई हैवान सा,
आदमी है कहाँ आज़मी आदमी।
ढो रहा है बदन रूह से है मरा,
क़ायदों में दिखे मातृमी आदमी।
आसमानी गुमां नेक नीयत नहीं,
ढूँढता फिर रहा है जमीं आदमी।
ऐ खुदा अपनी रहमत अता कर हमें
बेमुरव्वत बहुत है शमी आदमी।

कनक किशोर
राँची (झारखंड)
मोबाइल - 9102246536

स्थल कमल का श्वेत पुष्प

श्वेत सुंदर पुष्प
तुम्हारी सुंदरता मन मोह लेती
श्वेत सादगी का प्रतीक
दिल को छू जाती
पर यह क्या
सुबह तुम्हारी
जिस श्वेत सादगी पर मैं
जाने - अनजाने मर मिटा
शाम होते - होते तुमने
हम मानव सा रंग बदल दी,
मैं इसे गिरगिट सा रंग बदल देने की
संज्ञा नहीं दूंगा
तुम पौधे की प्रजाति
इस मामले में हम मानव से भिन्न
पर तुम्हें प्रेमिका की संज्ञा अवश्य दूंगा
चुंकि तुझ से प्रेम किया हूँ
और तुम रंग बदल देते हो
प्रेमिका की तरह

रक्तिम जवाकुसुम

छत के एक कोने में
लाल रक्ताभ
अकेले खिले जवाकुसुम को देख
मन उसमें उलझ गया
उसकी मनोहारी छवि
आँखों में बस गई ,
अकेले में भी परिवेश से बेखबर
अपनी खुबसूरती पर स्वयं फ़िदा
रक्तिम जवाकुसुम पर
मेरा दिल आ गया
और अपलक मैं उसे देखते रहा
उसी में डूब
जैसे प्रेम के तलाश में प्रेमी
डूब जाता है
प्रेमिका के आँखों में
आगोश में
अपनी जहां को भूल।

पीला गुलाब

खुशनुमा रंग
शुभ का प्रतीक होता है पीला
हम पूर्वांचल वाले तो पियरी से ही
शुरुआत करते अपने सभी शुभ काम,
लुभावना भी होता है
पीला सरसों का खेत
दूर से खींच लेता है नजरों को अपनी ओर
सुरगुजा और सरसों के पीले फूल
धरती को नई नवेली दुल्हन सा बना देती
इसलिए इस पीले रंग को को सेक्सी कलर की संज्ञा दी गई है

पीला गुलाब
दोस्ती की निशानी
आज लोग इसे प्रेम के प्रारंभ के रूप में देखते
प्यार की शुरुआत भी तो दोस्ती से होती
मैंने छत पर खिले पीला गुलाब को देखा तो
दिल पूछ बैठा तू किसे देगा
मन बोल उठा अब मौन तोड़
आज अपने को ना रोक
स्वेता सहकर्मी जिससे तू दोस्ती चाहता है
पीला गुलाब भेज दे उसे,
मन का शंका और डर उसे रोक रहा था
पर दिल ना माना
मैंने पीला गुलाब तोड़ भेज दी स्वेता को
दोस्ती का हाथ बढ़ा दी
कार्यालय में अपने टेबल पर गुमसुम बैठा था
कि इतने में स्वेता आ होंठों पे मुस्कान लिए
मुझे एक लाल गुलाब दे गई
साथ में दोपहर का लंच
साथ करने का वादा ले गई।

डॉ.उमेश चंद्र शुक्ल

अध्यक्ष,हिंदी-विभाग
महर्षि दयानंद कॉलेज
परेल मुंबई-12,मो. 9324554008

ग़ज़लें

चंद सिक्के गुलाम हो गए बेटे

कैसे, कैसे शैतान हो गये बेटे
जैसे आँधी तूफ़ान हो गये बेटे
खून पसीने से बसाया कुनबा
मौत का सामान हो गये बेटे
सत्य ईमान,सदाचार लुटा बैठे
इतने बदमिजाज हो गए बेटे
साजिशों से झुलस गई बस्ती
घर से अनजान हो गये बेटे
गाड़ी बंगला रंग रुतबा रसूख
रोटी को मोहताज हो गए बेटे
पान सा फेरा,ज़िगर का टुकड़ा
चंद सिक्के गुलाम हो गए बेटे
धर्म का नशा आँखों में गहरा
शतरंजी बिसात हो गये बेटे
हम सुख दुःख के साझीदार रहे
क्या सच में भार हो गए बेटे
रिश्तों से दूर का रिश्ता 'उमेश'
रिश्ते तो कारोबार हो गये बेटे

अखण्ड भारत हमारा सपना है

यारों बेवजह प्रलाप क्यों है
झूठ तेरे आस-पास क्यों है
हमने दे दिया अपना सब कुछ
आज धर्मों के दलाल क्यों है
अखण्ड भारत हमारा सपना है
देश में बेवजह बवाल क्यों है
मोहब्बत हमारी पूंजी है
गंगा में ज़हर घोलते क्यों है
गद्दारों की फेहरिस्त लंबी
नरपिशाचों को छोड़ते क्यों है
सच सनातन विचार पक्का है
सभी विरासत से दूर क्यों है
हमने दिल जोड़ना सीखा है
जीवन मूल्यों पर चोट क्यों है
सफेद चादर ओढ़कर आए
काली ज़बान, व्यवहार क्यों है
जिनके कदमों में ज़हर उमेश
नागों के साथ चलता क्यों है

पथराईं नम आंख जम गई

धन आया तो आंख जम गई
रिश्तों पर कुछ गाद जम गई
कंकड़ पत्थर ढूंढ रहे हैं
पथराईं नम आंख जम गई
मुद्दत से मुद्दत खोया है
पत्थर पर कुछ कांच जम गई
पानी पी पी कर जोड़ा है
पापी पेट की आग जम गई
सबने शब्दों से खेला है
कोमल मन की राग जम गई
धरती से आकाश पुकारें
त्रिशंकु सा है भाग जम गई
पानी पानी पानी उमेश
बलखाती नदी धार जम गई

हम काली स्याही से उजास लिखते है

इक दर्द का दरिया मेरे चारों तरफ़
सजी यादों कि बारादरी चारों तरफ
रिश्तों की जकड़न में बँधकर जी रहे
बढ़ने लगी है दूरियाँ चारों तरफ
हमारे बीच रिश्ता भी कुछ अजीब है
भूलना चाहते यादें हैं चारों तरफ
मिठाई चाँदी कि वर्क से सजने लगे
बस पैकिंग रैपर टैग है चारों तरफ
दिलों के बीच झिलमिल दरारें पड़ रही
यहा चाँदनी बिखरी हुई चारों तरफ
हम काली स्याही से उजास लिखते है
मेरे शब्दों का असर है चारों तरफ
वक्त की तासीर बदलने लगी उमेश
जिंदगी है भीड़ है दर्द चारों तरफ

बुझी थी राख जगा गया कोई

जामें महफ़िल पिला गया कोई
जली थी रात भर ठंडी हुई
बुझी थी राख जगा गया कोई
हारकर जिंदा रहना ठीक नहीं
खोया विश्वास जगा गया कोई
सर झुकाए खड़े है महफ़िल में
जीत की राह सिखा गया कोई
वक्त बुरा है कोई बात नहीं
नया अंदाज़ सिखा गया कोई
हार जिंदगी नहीं हुआ करती
हौसला जीत बढ़ा गया कोई
ग़म में ज़माना फना हो जाता
आशा दीपक जला गया कोई
तिरछी नजरों ने चुरा लिया दिल
दिल कि धड़कने बढ़ा गया कोई
खुद को भूला था कब से उमेश
मुझको मुझसे मिला गया कोई

दिल पर पत्थर रख लूँ क्या

रब्र से तन्हा कर लूँ क्या
जीवन में है उठा पटक
तो समझौता कर लूँ क्या
सभी लोग बिकने को राजी
दिल का सौदा कर लूँ क्या
वोटों के व्यापारी निकले हैं
खुद से झगड़ा कर लूँ क्या
कुर्सी के मकड़जाल में उलझे
छल से रिश्ता कर लूँ क्या
चाँदी की जूती चलती
मैं भी पीछा कर लूँ क्या
घर आँगन बाज़ार सजा
मैं भी सौदा कर लूँ क्या
दर्द पिघलने लगता है
ग़ज़ल से तौबा कर लूँ क्या
उसको पाने की चाहत में
उमेश धोखा कर लूं क्या

सतीश "बब्बा"

चित्रकूट, उत्तर - प्रदेश

"आइना"

यह अंधों की बाजार है,
आइना खूब बिकते हैं,
यह बहरों की महफिल है,
कानाफूसी खूब होती है!

यह आदमखोर भेड़ियों की बस्ती है,
यहाँ इंसानियत सस्ते में बिकती है,
यह गुनहगारों की बस्ती है,
यहाँ न्याय की कीमत बहुत सस्ती है!

कभी हीर - राँझा जैसे हुए हैं प्रेमी,
दीवारों में चुनकर भी अमर प्रेमी,
आज की गुदरी बाजारों में बिकते हैं,
कबाड़ के भाव बहुत से युगल प्रेमी!

जहाँ पर काँच टूटा है,
वहाँ पर लोग पैदल हैं,
जहाँ पर बिछी कालीने हैं,
वहाँ पर लोग पहने मजबूत जूते हैं!

यह कैसा हाल दुनिया का है,
कहीं पर गंदा पानी पीते, कहीं आरो है,
यह अंधों की बाजार है,
आइना खूब बिकते हैं!!

डॉ मंजु गुप्ता

वाशी , नवी मुंबई

सूर्योदय

उदित रवि जग सुहावना,
दिखता लाल लुभावना।
करते चेतन तब नाद,
करें स्वागत खगदल नर जन ,
प्रभु का करें धन्यवाद।।

धीरे -धीरे यह बाल,
बढ़ता जाता यह लाल।
लगता है प्रखर किशोर,
इसे नहीं देख पाते दृग ,
पड़े दृष्टि पर अति जोर।

कुलदीप सिंह भाटी

जोधपुर

एकनिष्ठता

नदी का एक पड़ाव होता है
वो बहती है समंदर की तलाश में
बादल भी चलते हैं, बहते हैं
मौसम और जलवायु के अनुरूप
नहीं होता है बादलों का कोई पड़ाव
ना ही होता है कोई प्राप्ति-लक्ष्य
देखकर अवसरवादिता
और पाकर अनुकूलता
बरस पड़ते हैं जहां-तहां

समाज में स्त्री वर्ग प्रतीक है इन नदियों का
और पुरुष इन आवारा बादलों का
सच...!!
समाज में
स्त्रियां जितनी एकनिष्ठ हो पाई हैं
उतनी एकनिष्ठता और समर्पण का
सदैव अभाव रहा है पुरुषों में ।

कुमकुम कुमारी "काव्याकृति"

मुंगेर, बिहार

माता वीणापाणि

1
छोड़कर घर-द्वार,कर सबसे किनार,
पढ़ने आए माँ हम,तप पूर्ण कीजिए।
देकर ज्ञान का दान,माँ करो मेरा कल्याण,
बन जाऊँ विद्यावान, शरण में लीजिए।
जय माँ वरदायिनी, जय ज्ञान प्रकाशिनी,
सफल हो तपस्या माँ, ऐसा वर दीजिए।
कर सकूँ ऐसा काम,जग में हो ऊँचा नाम,
दूँ सदा सत्य का साथ,ऐसा ज्ञान दीजिए।।
2.
जय माँ वरदायिनी, जय माँ ज्ञानदायिनी,
तार कर अज्ञानता, विद्या-बुद्धि दीजिए।
हाथ जोड़ पूजा करूँ,नित्य तेरा ध्यान धरूँ,
माता मेरी विनती को,अब सुन लीजिए।
होकर हंस सवार, कर ले स्फटिक माल,
अपने सौम्य रूप का,दर्शन तो दीजिए।
सुन लो पुकार मेरी,अब न करो माँ देरी,
बच्चों की तपस्या को,माँ सफल कीजिए।।

डॉ प्रेम लता चसवाल 'प्रेमपुष्प'

397,मॉडल टाउन, अम्बाला,
हरियाणा; भारत

'पीढ़ी'

ज्यों ही --
फ्रिज के खुले द्वार से
झांकती है
लाल-लाल रौशनी ,अब भी --
आती है उतावली-सी
सन् चौरासी की नर्सरी-बाला;
हाथ थाम मेरा
धकेलती द्वार धड़ाम,
ओठों पर स्मित मुस्कान,
ओजोन लेयर सही!
अब कोई भय नहीं !!

सन् बीस बीस में--
ननिहाल से घर अपने लौटने से पहले।
पेड़ बंधी राखी पुरानी खोल,
बन्द मुट्ठी में छिपाए-
हाथ थाम,
ले आती ठाकुर धाम
नन्हीं नातिन;
बाँध मेरी कलाई,
निश्चिन्त! मुस्कराई!!
-बाहर न जाना!
नानू सँग घर पर रहना!!'
...और वो जा बैठी
ठसाठस भरी टैक्सी में!

एकाकार

अधूरे सपनों की कहानियां
कुलबुलाती हैं
मस्तक की शिरा-शिरा में।
और उनके उलझे शिरा-तन्तु
अथक प्रयास के बाद भी
नहीं आते पकड़ में।
और-और उलझते जाते हैं।

मेरा अपनत्व
होना चाहता है एकाकार ,करने को
जन-मन से साक्षात्कार।
किन्तु कुण्ठाएं हैं-
कि पीछा ही नहीं छोड़ती,
काई-सी----
अपनी झीनी
अमिट छाप डाले,
चिपकी पड़ी हैं---घिन्न-सी---!!

अब इन को खुरच
निकाल फैंकने को
अचूक शैम्पू कहाँ से लाऊँ?
और अपनी इन
जकड़ी-सिमटी
मस्तक-शिराओं के
रेशे-रेशे सुलझा पाऊँ।
फिर मैं बेधड़क
जन-जन में घुल-मिल जाऊँ!

प्रीति शर्मा 'असीम'

नालागढ़, हिमाचल प्रदेश

बाकी है

चंद खुशियों की हसरत में बेपनाह दर्द बाकी है।
जो बीच रास्ते छोड़ दिया तुमने अभी वो साथ बाकी है।
जो तुम तक पहुंच न पाई मेरी सदायें बाकी है।
मेरे खामोश लफ्जों की हजारों बातें बाकी है।
थकी आंखों का लम्बा अभी इंतजार बाकी है।
जो रूह को सकून दे जाता तेरा दिदार बाकी है।

चंद खुशियों की हसरत में बेपनाह दर्द बाकी है।
जो बीच रास्ते छोड़ दिया तुमने अभी वो साथ बाकी है।

किस कसूर की दी है सजा अभी इल्ज़ाम बाकी है।
मौत का दे दिया फरमान अभी हमारी जान बाकी है।
सजदों में बांधी उस डोर की अभी वो गांठ बाकी है।
क्यों दुआएं कबूली नही गई वो फरियाद बाकी है।

चंद खुशियों की हसरत में बेपनाह दर्द बाकी है।
जो बीच रास्ते छोड़ दिया तुमने अभी वो साथ बाकी है।

हम ने अजमा लिया सब को खुदा का इम्तिहान बाकी है।
इश्क़ का यह सिला है ....क्यों हमारा फरमान बाकी है।

नवीन माथुर पंचोली

अमझेरा धार मप्र

9893119724

ग़ज़लें

1

और इक माहताब देख लिया।
आपको बेनक़ाब देख लिया।
रोज़ देखे हँसी नज़ारों में,
आज इक लाज़वाब देख लिया।
नींद में जो नहीं हुआ हासिल,
जागते भी वो ख़ाब देख लिया।
आज ख़ुशबू से महक जाएंगे,
बाग में वो ग़ुलाब देख लिया।
आसमाँ से ज़मीन के तन पर,
कोई दरिया चिनाब देख लिया।
जो उठे थे यहाँ सवाल कभी,
आज उनका जवाब देख लिया।

2

परों पर हौंसले परवान छूने।
परिंदे उड़ चले दिनमान छूने।
सभी अपने इरादे साथ लेकर,
नई मंज़िल ,सफ़र अन्ज़ान छूने।
कभी आँखों में जो सपनें पले थे,
वही निकले सही पहचान छूने।
किसी को आसमाँ का डर नहीं है,
उठें हैं अब सभी अरमान छूने।
हवाओं सेरुकेंगे वो भला क्या,
चलें हैं जो वहाँ तूफ़ान छूने।

3

मुँह मीठा मन खारा मत कर।
जीती बाजी हारा मत कर।
धूप, हवा से डर कर अपने,
आँगन को चौबारा मत कर।
रुक जाए पैमाना लब पर,
इतना मन को मारा मत कर।
न कहने की कहकर बातें,
दिल का बोझ उतारा मत कर।
अपनी है उस हद से ज़्यादा,
अपने पैर पसारा मत कर।
साथ रहें हैं जो रस्ते भर ,
उनके साथ किनारा मत कर।
मिलना हैमिल जाएगा वो,
इतना ,उतना ,सारा मत कर।

4

दोस्ती लाज़वाब रक्खेगा ।
जो ख़ुशी बेहिसाब रक्खेगा।
रोशनी साथ आएगी उसके,
साथ जो आफ़ताब रक्खेगा।
क़ायदा सीख लेगा जिंदगी का,
हाथ में जो क़िताब रक्खेगा।
वो बिताएगा ज़िंदगी हँसते,
जो हसींअपने ख़्वाब रक्खेगा,
वो ही पहचान अपनी पायेगा,
जो भी रुख़ बेनक़ाब रक्खेगा ।।

5

मिल गए हम कहीं उड़ानों से।
जीत आएँगे आसमानों से।
मंजिलो की तलाश में रहकर,
दोस्ती हो गई थकानों से।
क़ायदा रख लिया हवाओं का,
छोड़ दी दिल्लगी ठिकानों से।
सब निभाया हमें मिला जितना,
काम छोड़ा नहीं बहानों से।
वो कही बात जो लगी अच्छी,
रीत सब सीख ली ज़ुबानों से।
रूबरू हो गए हक़ीक़त के,
छोड़कर दूर के फ़सानो से।
तोड़ दी आज वो रस्में सारी,
जो चली आई थी ज़मानों से।

6

खुशियों का पैमाना क्या।
यूँ दिल का समझाना क्या।
चाहत तो है जी भर की,
आख़िरकर मिल जाना क्या।
शर्म-ओ-हया की बातों में ,
घूँघट फिर सरकाना क्या।
उठती - गिरती मौज़ों का,
आपस में टकराना क्या।
कह देना सच-सच अपनी,
इसमें है बचकाना क्या।
चलते - थकते रस्ते पर,
पग भर का सुस्ताना क्या।
माना रुतबा है लेक़िन,
इतना भी इतराना क्या ।
मिलकरभी हो अन्जाने,
फिर हमको पहचाना क्या।

7

हमने जिसको बुलवाया।
पर वो पास नहीं आया।
अक़्सर फ़िर तन्हाई में,
हमने ख़ुद को बहलाया।
था जिसमें मीठा सरगम,
गीत वही हमने गाया।
जो सीरत का अच्छा था,
उसको खुलकरअपनाया।
दिल का ऊँचा- नीचापन,
सब आँखों ने समझाया।
छाप हमारी वैसी थी,
जिसकी थी हम पर छाया।
जीवभर समझा हमने,
सब अपना खोया-पाया।

8

लगी है बेड़ियाँ लाचारियों की।
कठिन है राह जिम्मेंदारियों की।
करेंगे हम हमेशा बात उनकी,
रिवायत सीख ली ख़ुद्दारियों की।
अग़र हो वक़्त पर ,वो काम पूरा,
ज़रूरत है बड़ी तैयारियों की ।
जहाँ राजा दिखाये रौब अपना,
वहाँ चलती नहीं दरबारियों की।
रखेंगे किस तरह वो भाईचारा,
रही आदत जिन्हें ग़द्दारियों की।
उन्हें वो देखता है , सीखता है,
जिसे दरकार है फ़नकारियों की।

9

बहुत याद आया भुलाने से पहले।
कि जी भर रुलाया हँसाने से पहले।
शिकायत,हिदायत,अदावत,बग़ावत,
इन्हें आज़माया निभाने से पहले।
रखूँगा सजाकर जिसे अपने दिल में,
वही सब जताया छुपाने से पहले।
यही आसमाँ की रिवायत रही है,
सभी को उठाया गिराने से पहले।
मिला यार मुझसे कभी जब कहीं तो,
वो रूठा-रुठाया मनाने से पहले।
भरोसा नहीं था जिसे गा सकूँगा,
उसे गुनगुनाया सुनाने से पहले।

अनुपमा कट्टेल
डिमापुर, नागालेन्ड

काव्य

मायावी जुबान

हर गली, हर नुक्कड़, हर मोड़ पर
बिक रहीं हैं
लालच की तालाबों में
गोते लगाती मायावी जुबान
सियासी चाल समागत है
इसलिए कुशलतापूर्वक
प्रायोजित संकटों को पैदा कर
उसी दावानल के पृष्ठभूमि में घर बनाने की
कुटनैतिक चाल में सामिल है
जमात के कुछ लोग
इसलिए सायद मेरा दिल दर्द से कराहता है
और
मुरझाए हुए हैं
मेरे मन के चांद और सितारें भी
मौसम बदलने तक।

छोड़ आया है उसने

उतारकर मीलों दूर
छोड़ आया है उसने
तमाम प्रतिकूलताओं को
न पहचानने वाली
आधुनिकतावाद की अंधाधुंध दौड़ में
शामिल वो
आडंबरी चश्में को
साथ ही
धकेलकर कोसौं दूर
छोड़ आया है उसने
मजबूरी का फायदा उठाकर
शोषण करने वालों की
बेहद ही सस्ते
और
तरल शब्दों के षडयंत्रों में जकड़कर
बैठा हुआ
एक
संकरी और पुरानी सी गली को
बस
अब वह
मुक्त हो गया है
त्रिशंकु जीवन
और
झुठे दिलासों के अतिक्रमणों से।

अधूरी मानव सभ्यता

बन्दीत्व की सारी जंजीरे तोड़कर
स्वतंत्रता के पंख फैलाते हुए
गगनचुम्बी मुक्त उड़ान भरना
चाहती हैं स्त्रियाँ
ओ स्त्रियों! जरा सुनो
परम्पराओं की घुँघट ओढाकर
हर युगों पर
काट दिए गए है पंख तुम्हारे
और
बना दिया गया है
तुम्हारे ईर्दगिर्द एक छोटा सा घेरा
दर्द के आँसू पीने के लिए बाँध दिया गया है
किसी खुँटे पर एक भोली सी गाय की तरह
धर्म-कर्म की
जंग लगी जंजीरों के तन्त्र में लपेटकर
दृष्टि भ्रम भी कराती रही है
ये दुनियाँ
और
बना रही है तुम्हें कठपुतली सी एक एश ट्रे
जहाँ
जो कोई भी थोप सकें उसमें अपने विचार
अपनी माथे पर लिखी गई पराधीनता के
चौखट के भीतर
रसोई, वर्तन, पूजा घर
महावारी की छुआछूत
तक सिमटना ही
केवल स्त्रियों को परिभाषित नहीं करता!
अपनी सामर्थ्य से
खोल देना चाहती हैं आज की स्त्रियाँ
परम्पराओं के उन पुरानी गाँठों को और
ढुँढ लेना चाहती हैं
अपने सम्पूर्ण विचारों की खोइ हुई अस्तित्व को

और बस
लिख देना चाहती हैं विस्तृत आसमान पर
पक्षपात और अनाम संघर्षों की कहानिया
का एक बड़ा सा हिसाब।

राजपाल सिंह गुलिया

झज्जर (हरियाणा)
9416272973

दोहे

प्रो(डॉ)शरद नारायण खरे

प्राचार्य,शासकीय
कन्या महाविद्यालय
मंडला, मप्र

1.
दर्पण बच्चा या कहो , जो जन हैं मतिमंद ।
इनके दम पर सत्य का , झंडा रहा बुलंद ।।
2.
प्रेमभाव गर चाहिए , रखना साथ तमीज ।
पैसों से मिलती नहीं , दुनिया की हर चीज ।।
3.
कहाँ नदी थी जानती , कितनी सागर प्यास ।
जितनी हुई विलीन ये , उतनी हुई उदास ।।
4.
चिंता और तनाव यूँ , दें तन को संताप ।
बढ़े शुगर का स्तर कभी , कभी रक्त का चाप ।।
5.
दस थे सच के साथ में , बीस झूठ के संग ।
न्याय नाम चौपाल में , हुआ खूब हुड़दंग ।।
6.
नहीं जरूरी बैठ कर , पूछें जन कुशलात ।
आते जाते पूछ लें , समझ बड़ी ये बात ।।
7.
गम करना क्या हार का , कैसा जीत गरूर ।
लड़ें अगर जो दो जने , हारे एक जरूर ।।
8.
नहीं पसीजा मन तनिक , देख पराई पीर ।
समझ सका कब ईश भी , उस जन की तासीर ।।
9.
नेकी जिसकी चाहते , दे जाता वह चोट ।
जला गई लौ दीप की , करी हाथ से ओट ।।
10.
बाबू को दे घूस यूँ , बोला गंगाराम ।
समझ इसे अब लीजिए , बस अपना ही काम ।।
11.
रक्त सनी वह याचना , खड़ी सड़क के बीच ।
निकल गई संवेदना , अपनी आँखें मीच ।।
12.
करते वाद- विवाद क्या , क्या देते हम तर्क ।
नैतिकता का जिस जगह , था बेड़ा ही गर्क ।।

कन्या भ्रूण हत्या-एक अभिशाप

भ्रूण हत्या अब नहीं,बंद करो यह पाप।
वक़्त दे रहा है हमें,तीखा-सा अभिशाप।।

कन्या का है जन्म शुभ,सोचो-समझो आज।
क्यों सोता है नींद में,दानव बना समाज।।

कन्याएँ मिटती रहीं,तो सब कुछ हो नाश।
जागे अब तो सभ्यता,लेकर चिंतन,काश।।

भ्रूण हत्या मूर्खता,बहुत बड़ा अविवेक।
अब जागे इंसानियत,ले विचार सत्,नेक।।

नारी यूँ घटती रही,तो बिगड़े अनुपात।
तब आना तय,साँच यह,गहन तिमिर की रात।।

पुत्र और बेटी सदा, होते एक समान।।
किस मूरख ने कह दिया,बेटा ही कुल-शान।।

कन्याएँ जब जन्म लें, पढ़कर हो उत्थान।
दोनों कुल की शान बन,पूर्ण करे अरमान।।

कन्या को यूं मारना,हैवानों का काम।।
होगी भाई इस तरह,असमय काली शाम।।

अब सँभलो,जागो अभी,गाओ मंगलगीत।
तभी उजाले को सभी,लेंगे हँसकर जीत।।

यही कह रहा आज तो,'शरद' कँटीली बात।
जागो वरना,आ रही,बहुत भयावह रात।।

डॉ.सुरेन्द्र दत्त सेमल्टी
देहरादून - 248115(उत्तराखण्ड)

" गाँव की यादें "

जो गाँव हमारे छोटे-बड़े हैं ,
अब तो सब सुनसान पड़े हैं !
लटके हैं दरवाजों पर ताले ,
जगह-जगह दिखते हैं जाले !
वृद्ध जन दो - चार गाँव में ,
शक्ति नहीं है हाथ-पावों में ।
आँगन में उग गई झाड़िया ,
पहुची अब जाकर गाड़िय !
निकले सुख के लिये शहर ,
है घुला हवा-पानी में जहर !
सोचकर सुख आये थे जहा ,
सपने सब चकनाचूर वहा !
प्रेम की बातें और अपनत्व ,
दिखा न यहा उनका महत्व !
मकान-मार्ग गाँव के कच्चे ,
बाल-युवा-वृद्ध सब पक्के ।
सब रिश्ते होते हैं मजबूत ,
तोड़ न सकते एक भी सूत !
शहरों में है इसके विपरीत ,
बिना स्वार्थ न दिखती प्रीत !
गाँव के मेले याद हैं आते ,
जहा संग-संग सब थे जाते ।
जलेबी आलू पकोड़े पान ,
खाते थे और समझते शान !
बासुरी-बाजे- सीटी-गुब्बारे ,
खरीदते थे हम बच्चे सारे ।
कूटना पीसना पनघट जाना ,
गाय भैंस दुहना हल लगाना ।
गाँव के सब क्रिया कलाप ,
बोलके नहीं सब अपनेआप ।
व्यायाम होता था प्राकृतिक ,
निहित उसमें सबका हित ।
पीड़ा सबकी दुःख एक का ,
काम करते थे सब नेक का ।
पीपल बरगद आम की डाल ,
गावों में सबने रखी थी पाल ।
शुद्ध हवा - जल - फल-फूल ,
मिलते जंगलों में कन्द-मूल ।
बसे अब वन्य जीव गावों में ,
सुख भोगते सघन छाओं में ।
सभी जंगली रसीले फल ,
खाते थे सभी जन हर पल ।
चबूतरों पर सजती चौपाल ,
बातें हो चुकी सब भूतकाल !
जब तैरता है आँखों में गाँव ,
लौटना चाहते हैं तब पाव ।
भूलना चाहते भूल न पाते ,
लोकगीत हर पल गुनगुनाते ।
खेल निराले बचपन के सब ,
याद सताती उनकी है अब ।
मलिन पड़ी गाँव की सूरत ,
जो होती ममता की मूरत ।
दूर जाकर अब तरस रहे हैं ,
आँखें सबकी बरस रही हैं !
हैं घरों में कुत्ते नहीं गौ माता ,
सुबह हर कोई उन्हें घुमाता ।
हैं इसे समझते अपनी शान ,
घी-दूध खरीद लाते दुकान !
प्रदूषण मार सब रहे हैं झेल ,
शहर लग रहे सबको जेल !
सबने मन में लिया है ठान ,
करेंगे गाँव जाकर उत्थान ।

डॉ रत्ना मानिक
टेल्को जमशेदपुर

मदारी

बड़े माहिर खिलाड़ी हो तुम भी
अख़बारनवीस वालों
रखते हो मुस्कुराते हुए
जख्मों पर
किसी के हाथ ऐसे
कि
उतर आए
आंखों में उसकी
दूर तलक फैला हुआ रेगिस्तान
या फिर
छलक उठे
आंखों में उसकी
नन्हीं अनगढ़ सी
बूंदें ओस की
या
उमड़ पड़े
आवारा बादल का
कोई स्याह टुकड़ा
और
कैद कर सको तुम
उस रेत को,
उस आवारा बादल के उफ़ान को
उस अनगढ़ सी ओस को
कैमरे में अपने
ताकि
मिलते ही अवसर सुनहरा
तुम लगा सको
कीमत उसकी मुंहमांगी
भुना सको
उसकी कमज़ोरी,उसकी लाचारी
और कर सको
एक मिसाल कायम
कि...कि तुम हो
मात्र तुम हो...
आंखों में उतरते रेगिस्तान की
एक मात्र आवाज़...
फिर बड़े ज़ोर शोर से
जुटा सको तुम
तमाशबीनों को दरबार में अपने
और चल सके
मदारी की दुकान तुम्हारी
यूं ही अनवरत...यूं ही अविराम

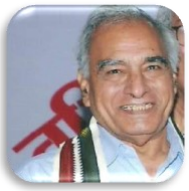

काव्य

डा केवलकृष्ण पाठक
संपादक रवींद्र ज्योति मासिक
जींद 126102 (हरियाणा)
मोब.9518682355

विश्व का हो कल्याण

चाहा भारत की संस्कृति ने, सदा ही विश्व का हो कल्याण,
विश्व संविस्कृति है वास्तव में, धरती वेद की कीर्तिमान।
जन्में विश्व में सभी प्राणी ही, मूल रूप में तो थे एक ,
रंग- रूप में खान पान में, वेश - भूषा में बने अनेक।
चार बेटे हों एक बाप के, अलग अलग सब के स्वभाव ,
ऐसा पनपा भाव पृथ्वी पर,वर्ण जाति को मन में टेक ।
पुरातत्व इतिहास खोज में, यही हमें होता है भान ,
विश्व संस्कृति है वास्तव में, धरती वेद की कीर्तिमान।
भारत कभी निभाता था, भूमिका विश्व की था सिरमोर ,
भाषा एक थी बहुत देशों की, निष्ठावान थे धर्म की और ।
सभी एक थे, ध्यान सदा था, सच्चाई पर नित्य चलना,
जीवन में चाहे कितनी भी,कठिनाइयां आजायें घोर।
चक्रवर्ती साम्राज्य चला था ,तब अपनी भूमि को जान, -
विश्व संस्कृति है वास्तव में धरती वेद की कीर्तिमान।
भारत के सब समर्थ ऋषिगण,करते रहे धर्म-प्रचार,
शक्ति और प्रयोग शस्त्र का,देते थे ज्ञान भण्डार।
वीर पुरुष इस धरती पर,बलवान और थे शस्त्रधारी,
ज्ञान कर्म और रहन- सहन में, रहे समर्थ आचार विचार।
विश्व संघ की स्थापना करके, फूंका विश्व में शान्ति-गान ,
विश्व संस्कृति है वास्तव में, धरती वेद की कीर्तिमान।
कालान्तर में धीरे- धीरे, स्वार्थ परायण हो गए थे लोग,
भेद- भाव और उँच- नीच ,लग गए सबके मन में रोग ,
भौगोलिक ऐतिहासिक कारण,परिवर्तन आया सबके मन में,
करने लग गए सभी विश्व में, भेद वर्ण- जाति उपयोग।
मूल उद्गम संस्कृति -भारती,इसका सब को भी है भान,
विश्व संस्कृति है वास्तव में, धरती वेद की कीर्तिमान ।
बड़ी बात होगी यदि हम अपनी, शक्ति को सब पहचानें,
धर्म संस्कृति योग- ध्यान से,ज्ञान विज्ञान को हम जानें ।
विश्व के लोगों को हम सब दें, भ्रातृ-प्रेम का ही सन्देश,
बांधें विश्व को एक सूत्र में,विश्व- एकता को जानें ।
पनपे नहीं उदंडता किसी में, और कभी न हो अभिमान,
विश्व संस्कृति है वास्तव में धरती वेद की कीर्तिमान।

कमला तामाङ
मिरिक, दार्जीलिङ

मेरी पहचान का प्रश्न ?

नहीं कोई मेरा नाम!
क्योंकि नाम उनका होता है
जिनकी होती है कोई पहचान
मेरी पहचान होती ही
मेरा तो मिटा दिया गया था -
अस्तित्व
मेरा भी एक परिवार होती
एक सुखी संसार होती
कितना दुःखी हुए थे सब
यह जान कर कि -
फिर लेगी जन्म एक लड़की ही
कितनी चिंता होने लगी थी सब को
मेरे ऊपर होने वाले खर्च
मेरी जिम्मेदारी, सुरक्षा की
काश ! कि ऐसा भी हो सकता
कि भगवान भेजते लड़की को कर्म से
लाखों रूपियों के चेक के साथ
या नहीं होने दें पैदा लड़कियों को
मुझे दुःख नहीं
मेरे जन्म न लेने का
दुःख इस बात का है
कि मेरी हत्या में
शामिल थे मेरे अपने ही
कितना बिरोधभाष है न
हम देवियों की करते है उपासना
नहीं थकते बोलते " जय माता दी "
और चूकते नहीं मारने से लड़कियों को
करते है बड़े बड़े सेमिनार
देते है लम्बे लम्बे भाषण
बनाते हैं कानून
परंतु परिणाम
उतनी ही मात्र में और हत्याएँ
अब सच को स्वीकारयें
कि आपका कानून बनाना ही
आपकी हार है
मैं तो नहीं बची
पर नाउम्मीद नहीं हूँ
कभी तो आएगा वो वक़्त भी
जब स्वागत होगा गीत बजेंगे
नाचेगें परिवार खुशियों से
बेटी की जन्म पर भी

ललित गर्ग

तितली है खामोश : पुरातन और आधुनिक समन्वय का सार्थक दोहा संकलन

सत्यवान सौरभ स्वांत सुखाय की भावना से ही पिछले सोलह वर्षों से रचना करते रहे हैं। वे इतने संयमी रहे कि अपनी अभिव्यक्ति को पाठकों के सामने लाने की या छपास होने की लालसा से दूर रहें। सृजन में शोर नहीं होता। साधना के जुबान नहीं होती। किंतु सिद्धि में वह शक्ति होती है कि हजारों पर्वतों को तोड़कर भी उजागर हो उठती है। यह कथन सत्यवान सौरभ पर अक्षरशः सत्य सिद्ध होता है। सौरभ की प्रस्तुत कृति बेजोड़ है। उनकी लेखनी में शक्ति है। भाषा पर उनका असाधारण अधिकार है। प्राजंल और लालित्यपूर्ण भाषा में वे जो कुछ भी लिखते हंै, उसे पढ़कर पाठक अभिप्रेरित होता है। वे जितना सुंदर, सुरुचिपूर्ण और मौलिक लिखते हैं, उससे भी अच्छा उनका जीवन बोलता है। इन विरल विशेषताओं के बावजूद भी वे कभी आगे नहीं आना चाहते। नाम, यश, कीर्ति और पद से सर्वथा दूर रहना चाहते हैं।

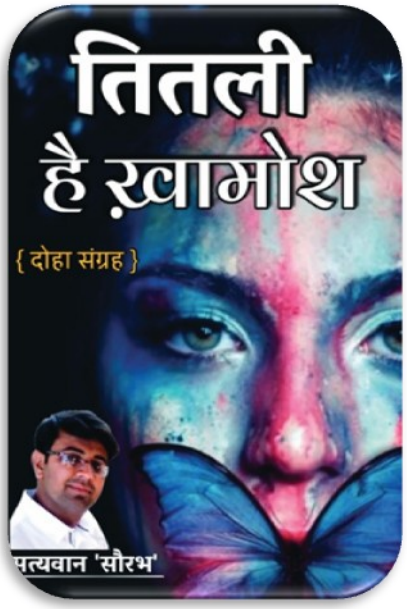

सत्यवान सौरभ हरियाणा के जुझारू एवं जीवटवाले लेखक और कवि हैं। खुशी की बात है कि उनका रचनाकार जिंदगी के बढ़ते दबावों को महसूस करता हुआ, उनसे लड़ने की ताब रखता है, उनसे संघर्ष करता है। हाल ही में उनका 'तितली है खामोश' दोहा संकलन प्रकाशित हुआ है। 725 दोहों का यह संकलन अनूठा है और ये दोहें समय की शिला पर अपने निशान छोड़ते चलते हैं। इतना ही नहीं वे इस कठिन समय से मुठभेड़ भी करते हैं। यही मुठभेड़ उनके दोहों की ताकत है और मौलिकता है जो जनभावनाओं का जीवंत चित्रण है।

किसी ने कहा है कि जिस समाज, देश में जितनी अव्यवस्था, गिरावट, संघर्ष एवं नैतिक/चारित्रिक मूल्यों का हनन होगा उस समाज में साहित्य उतना ही बेहतर लिखा जाएगा। साहित्य साधना और रचनाधर्मिता कठिन तपस्या होती है और जो इसके साधक होते हैं, वे ही साहित्य को गहनता प्रदत्त करते हैं। साहित्य साधक सौरभ का प्रस्तुत दोहा संकलन 'तितली है खामोश' न केवल व्यक्ति, परिवार बल्कि समाज, राष्ट्र और विश्व के संदर्भ में कवि की प्रौढ़ सोच की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। संकलन के दोहे कुछ ऐसे हैं कि मन की आंखों के सामने एक चित्र-सा खींच जाता है। चीजों को बयां करने का उनका एक खास अंदाज है। फिर चाहे वह कुदरती नजारे हों या प्रेम, विश्वास, आस्था, आशा को अभिव्यक्ति देते दोहें। यह उनका नवीनतम संकलन है। सत्यवान सौरभ के दोहों में न सिर्फ उनकी, बल्कि हमारी दुनिया भी रची-बसी नजर आती है। जिन्हें पढ़कर सत्यवान सौरभ के मूड और मिजाज का बखूबी अंदाज लगाया जा सकता है। दोहों के विचार, भाव, बिम्ब, रूपक एक नया आलोक बिखेरते हैं, जो पाठकों के पथ को भी आलोकित करता है।

हरियाणा में वेटनरी इंस्पेक्टर पद पर रहते हुए भी सत्यवान सौरभ लेखन के लिए समय निकाल लेते हैं, यह उनकी विशेषता है। उनके दोहों में सरलता, सहजता एवं अर्थ की गहराई हमें सहज ही आकर्षित करती है। वे भावों को इस सहजता से अभिव्यक्त करने में समर्थ है कि ऐसा लगता है कि वे सिर्फ सौरभ जी के भाव नहीं बल्कि हर पाठक के मन की छिपी भावनाएं हैं, संवेदनाएं हैं। उनकी पैनी कलम से कोई भाव अछूता नहीं रहा। परिस्थितियों को देखने की उनकी अपनी विशिष्ट दृष्टि है। उनके दोहें सीधे हृदय से निकलते जान पड़ते हैं।

हिन्दी साहित्य में दोहों का विशिष्ट स्थान है। दोहा अर्द्धसम मात्रिक छंद है। यह दो पंक्ति का होता है इसमें चार चरण माने जाते हैं। विशेषतः दोहे आध्यात्मिक और उपदेशात्मक रंग में रंगे होकर इसके पहले और तीसरे (विषम) चरणों में 13-13 मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे (सम) चरणों में 11-11 मात्राएँ होती हैं। अंत में गुरु और लघु वर्ण होते हैं। तुक प्रायः दूसरे और चौथे चरण में ही होता है। दोहा अर्द्ध सम मात्रिक छन्द का उदाहरण है। तुलसीदासजी से लेकर महाकवि कबीर तक रहीम, रसखान से लेकर बिहारी तक दोहों का एक विस्तृत आध्यात्मिक परिवेश भारतीय साहित्य को समृद्ध करता रहा है। आधुनिक युग में रचे जाने वाले दोहों में इन्हीं महापुरुषों का प्रभाव देखने को मिलता है। सौरभ के दोहों

में आधुनिकता और पुरातन का एक अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है जो दोहा छंद की सार्थकता को सिद्ध करता है।

'तितली है खामोश' के दोहों में काव्य सौंदर्य के साथ -साथ प्रवहमान गतिशीलता भी है। ये दोहें अर्थवान है, अंतकरणीय भावों के रस-रूप में प्रस्फुटित शब्द सुषमा का संचार करते है। ये दोहें चेतना के स्पंदन का सम्प्रेषण करते है। दोहों में कवि के शाश्वत प्रभाव की छवि परिलक्षित होनी चाहिए, यह कवि के कविता कर्म की कसौटी होती है। प्रस्तुत संकलन के दोहे उस कसौटी पर कस कर जब देखता हूं तो सत्यवान सौरभ की छवि सामाजिक सजग प्रहरी के साथ-साथ एक संवेदनशील रचना कर्मी के रूप में उभरकर सामने आती है। कविता, गीत, गजल आदि साहित्यिक विधाओं के साथ विभिन्न विषयों पर समसामयिक लेख एवं फीचर लिखने वाले सौरभ को दोहा लेखन में विशेष सफलता मिली है। इसका श्रेय वे हरियाणा के ही प्रतिष्ठित साहित्यकार डॉ. रामनिवास मानव को देते हैं। सौरभ को दोहाकार बनाने में उनकी प्रेरणा विशेष उल्लेखनीय है।

सत्यवान सौरभ ने अपने दैनन्दिन जीवन के हर कटु -तिक्त और मधुर अनुभव को, यहां तक कि चित्त में मंडराते चिंतन के हर फन को भी दोहों में बांधा है। उनके दोहें उनके निजी संसार से उपजे हैं तो कहीं उनमें देश और दुनिया के व्यापक परिदृश्य भी प्रस्तुत हुए हैं। इन दोहों में समाज में व्याप्त विसंगतियों एवं विडम्बनाओं का स्पष्ट चित्रण हैं तो पारिवारिक जीवन के टीसते दंश और द्वंद्व एवं अपने इर्द-गिर्द के जीवन की समस्याओं के भाव दोहों के रूप में ढलकर सामने आते हैं। संभवतः दोहों का आधार भी यही है। अपने परिवेश से गहरा सरोकार उनकी शक्ति है। उनके दोहें इतने सशक्त एवं बेबाक है कि जो इन्हें साहित्य जगत में उल्लेखनीय स्थापत्य प्रदान करेंगे। मेरी मान्यता है कि कोई भी साहित्यकार युगबोध से निरपेक्ष होकर कालजयी साहित्य का सृजन कर ही नहीं सकता, विधा चाहे कोई भी हो। साहित्यकार का मन तो कोरे कागज जैसा निश्छल, निरीह, दर्पण सा पारदर्शी होता है। यथा-

सूनी बगिया देखकर, तितली है खामोश।
जुगनू की बारात से, गायब है अब जोश।।

सत्यवान सौरभ स्वांत सुखाय की भावना से ही पिछले सोलह वर्षों से रचना करते रहे हैं। वे इतने संयमी रहे कि अपनी अभिव्यक्ति को पाठकों के सामने लाने की या छपास होने की लालसा से दूर रहें। सृजन में शोर नहीं होता। साधना के जुबान नहीं होती। किंतु सिद्धि में वह शक्ति होती है कि हजारों पर्वतों को तोड़कर भी उजागर हो उठती है। यह कथन सत्यवान सौरभ पर अक्षरशः सत्य सिद्ध होता है। सौरभ की प्रस्तुत कृति बेजोड़ है। उनकी लेखनी में शक्ति है। भाषा पर उनका असाधारण अधिकार है। प्राजंल और लालित्यपूर्ण भाषा में वे जो कुछ भी लिखते हंै, उसे पढ़कर पाठक अभिप्रेरित होता है। वे जितना सुंदर, सुरुचिपूर्ण और मौलिक लिखते हैं, उससे भी अच्छा उनका जीवन बोलता है। इन विरल विशेषताओं के बावजूद भी वे कभी आगे नहीं आना चाहते। नाम, यश, कीर्ति और पद से सर्वथा दूर रहना चाहते हैं। प्रस्तुत दोहा संकलन को पढ़ते हुए सहज ही कहा जा सकता है कि इसमें व्यक्त विचार अनुभवजन्य है। जो व्यक्ति यायावर होता है, धरती के साथ भावात्मक रिश्ता स्थापित करता है, वहां की सभ्यता, संस्कृति और परंपरा को करीब से देखता है और उसे अभिव्यक्ति देने की क्षमता का अर्जन करता है वही व्यक्ति कलम की नोंक से व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के यथार्थ को कुशलता से उकेरने में सफल हो सकता है। प्रस्तुत संकलन के दोहों की सार्थकता या तो भावाकुल तनाव पर निर्भर है या धार-धार शिल पर। उनकी रचनाओं में विविधता है, प्यार है, दर्द है, संवेदनाएं हैं यानी हर रंग के शब्दों से उन्होंने दोहों को सजाया है।

हरियाणा साहित्य अकादमी के सौजन्य से प्रकाशित प्रस्तुत कृति के संदर्भ में स्वयं लेखक का मंतव्य है कि 'तितली है खामोश' का शीर्षक अपने आप में एक सवाल है और दोहे हमेशा तीखे सवाल ही करते हैं।' इस दृष्टि से कवि के दोहों में तीखे सवाल खड़े किये गये हैं तो उनके समाधान भी उतने ही प्रभावी तरीके से दिये गये हैं। इस दृष्टि से उनके रचना धरातल के समग्र परिवेश को और उनके दार्शनिक धरातल को समझने में यह पुस्तक महत्वपूर्ण है।

पुस्तक और कलम को अपनी विवशता मानने वाले सत्यवान सौरभ विचार के साथ-साथ शब्दों के सौन्दर्य की चितेरे हैं। उनके हर शब्द शिल्पन का उद्देश्य मनोरंजन और व्यवसाय न होकर सत्य से साक्षात्कार कराना है। सत्यं शिवं और सुंदरमं की युगपथ साधना और उपासना से निकले शब्द और विचार एक नयी सृष्टि का सृजन करते हैं और उसी सृजन से सृजित है प्रस्तुत दोहा संकलन 'तितली है खामोश'। प्रस्तुत कृति के दोहें समाज और राष्ट्र को सुसंस्कृत बनाते हैं, उन्हें राष्ट्रीय और सामाजिक अनुशासन में बांधते हैं, खण्ड-खण्ड में बिखरे रिश्ते-नातों को एक धागे में जोड़ते हैं और अंधेरों के सुरमयी सायों में नया आलोक बिखेरते हैं। संस्कृति और संवेदना के प्रति आस्था जगाने का काम करती हुई यह कृति पाठकों के हाथ में विश्वास की वैशाखी थमाती है। यह पूरी कृति और उसके विधायक भावों का वत्सल-स्पर्श समाज की चेतना को भीतर तक झकझोरता है। 124 पृष्ठों पर फैली कवि की रचना दृष्टि ने इस पुस्तक को नायाब बनाया है।

यह काव्य कृति व्यक्ति, समाज और देश के आसपास घूमती विविध समस्याओं को हमारे सामने रखती है, साथ ही सटीक समाधान भी प्रस्तुत करती है। पुस्तक की छपाई साफ-सुथरी, त्रुटिरहित है। आवरण आकर्षक है। पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है।

पुस्तक का नाम: तितली है खामोश
लेखक :सत्यवान 'सौरभ'
प्रकाशक: हरियाणा साहित्य अकादमी
पंचकूला (हरियाणा)
मूल्य: 200 रुपये, पृष्ठ : १२४
उपलब्धता : अमेज़न और फ्लिपकार्ट

रेखा शाह आरबी
बलिया (उत्तर प्रदेश)

प्रेम की मनभुजाएं

सुनने का मन हो तो
कभी सुनना समझना ,
ध्यानोचित होकर ,
मेरे मौन मे भी
मेरी प्रेम की मनभुजाएं ,
दूर अनंत अशेष तक तुम्हारे ही
हृदय का हृदय से
आलिंगन करेगी ,
उसे नहीं चाहिए
देहरुपी सहारे का अवलम्बन ,
वह एक प्रकाश पुंज भांति
तुम्हारे हृदय में पहुंचकर
कर लेगी अपने आप को
तुममे खुद ही विलुप्त ,
और पा लेगी तुम्हारे हृदय में
अमरता का वरदान ,
जब तुम्हारा हृदय कंपन करेगा
एक -एक गति मुझसे हो,
तुममें स्वास भरेगी
और तुम्हें दे देगी
जीवन का आशीर्वाद,

डॉ दलजीत कौर
चंडीगढ़

मैं धरा

धरा हूँ मैं
मरती हूँ मैं
जन्म लेती हूँ
मैं ही माँ
बहन भी हूँ
वह बेटी भी
जिसका सर किया
धड़ से अलग
बलात्कारियों ने
मेरा ही लहू
बिखरा है सड़क पर
मुझ पर हुए जुर्म की
क्यों नहीं कोई सजा ?
कुछ नहीं होगा
हाथ में लेकर मोमबत्ती
झिलमिलाने ,टिमटिमाने से
चाहिए मुझे अब
रौद्र ज्वाला
तोड़ दो
अंधेरी रात के सन्नाटे को
इतना कोलाहल
कि जाग उठें
अंधे ,बहरे ,गूँगे
प्रतिरोध हो
खामोशी का
रोक लो
इंसान को
पाषाण हो जाने से

पाठकों की प्रतिक्रियाएं .....

मानवी पत्रिका का जनवरी-मार्च23 अंक मिला वैसे तो सम्पादक अपने सम्पादकीय में मंतव्य को बता देता है। लेकिन लेखकों का ध्यान केवल अपनी रचना प्रकाशन तक सीमित हो जाता है। अधिकांश लेखक यह कोशिश ही नहीं करते संपादक क्या चाहता है। सम्पूर्ण पत्रिका का सम्पादन मामूली-सी बात नहीं ,वो आप जैसे जाने कितने लेखकों को संयोजित करता है।इस पत्रिका में जो आलेख है समसामयिक और साहित्य मनीषा को लेकर है , लाज़वाब है।समय पर हरिशंकर परसाई को याद करना मन भा गया । सम्पादक जी ने बाबा नागार्जुन और हरिवंशराय बच्चन की बानगी प्रस्तुत की है। एक पत्रिका में कविता, कहानी , लघुकथा, आलेख, पुस्तक समीक्षा होना चाहिए जो यहां भी है और करीने से हैं।यह पत्रिका द्विवेदी काल और उत्तर द्विवेदी काल की याद इस उत्तर आधुनिक काल में दिलाती है।
सम्पादक जी को सार्थक अंक की बधाई।
जितेन्द्र निर्मोही

आदरणीय महोदय,
सादर नमस्कार!
त्रैमासिक ई पत्रिका मानवी भेजने के लिए आपका हार्दिक धन्यवाद ।सारी रचनाएं ,लेख ,कविताएं व कहानियां मनोरंजक और पठनीय हैं।अगले अंक के लिए कितनी रचनाएं भेजी जा सकती हैं और कब तक । बताने की कृपा करें।
धन्यवाद सहित
भवदीया
प्रोमिला भारद्वाज मोबाइल: 9418004032

अद्भुत पत्रिका है...'मानवी' जो मानव की अनगिनत भावों को अपने में समेटे मनोरंजन और ज्ञान का सुंदर सामंजस्य है। प्रधान संपादक कविता सिंह,संपादक राजेश कुमार सिंह को हृदय से आभार जिन्होंने मानवी की यात्रा में सम्मिलित होने का हमें अवसर दिया। सादर ,
रत्न मानिक

आदरणीय हार्दिक आभार |
बहुत सुंदर अंक
सबकी रचनाएं बहुत अच्छी हैं | बहुत सुंदर ढंग से पत्रिका को सजाया गया है |
चेतना सिंह 'चितेरी ', प्रयागराज

चित्रकार- तेजसी सिंह

रचनाकारों से.....

1 -मानवी त्रैमासिक ई पत्रिका सभी लेखकों/ कवियों/ कथाकारों/ व्यंग्यकारों.....से हिंदी साहित्य की सभी विधाओं यथा लेख/ आलेख/ निबंध/ संस्मरण/ कथा/ कहानी/गीत/नवगीत/ग़ज़ल/कविता/समीक्षा इत्यादि पर स्वलिखित, मौलिक, अप्रकाशित एवं अप्रसारित रचनाएं आमंत्रित करती हैं।

2 -कृपया कविता /गीत /ग़ज़ल आदि रचनाएं दो से अधिक न भेजें। भेजने से पहले वर्तनी त्रुटि सुधार कर उत्कृष्ट रचनाएं manvipatrika@gmail.com पर ही भेजें।

3-रचनाऐं वर्ड फाइल /यूनीकोड में भेंजे। पीडीएफ फाइल स्वीकार्य नहीं है।

4-कृपया माह में पड़ने वाले दिवसों /त्योहारों को ध्यान में रखते हुए अपनी रचनाएं भेजें।

5-कृपया रचना के साथ अपना संक्षिप्त परिचय, पता, कान्टैक्ट नंबर , एवं छाया चित्र भी भेजें।

6-कृपया रचना के साथ साथ , स्वप्रमाणित भी करें कि प्रेषित रचना , मौलिक, स्वलिखित , अप्रकाशित एवं अप्रसारित हैं, अन्यथा रचनाओं पर विचार संभव नहीं है।

7- एक बार में अपनी एक या दो ही उत्कृष्ट रचनाएं भेजे,और पत्रिका के प्रकाशन का इंतजार करें लगातार रचना भेजने का कोई तात्पर्य नहीं है।

8 -यह एक अव्यवसायिक नि: शुल्क ई पत्रिका है, रचनाकारों को पारिश्रमिक देने का कोई प्रावधान नहीं है।

9-समीक्षा के लिए, पुस्तकों की दो प्रतियां सम्पादकीय पते (बी-701,स्वाति फ्लोरेंस, निकट सोबो सेंटर, साउथ बोपल, अहमदाबाद-380058,गुजरात ,मोबाइल-9833775798) पर भेजें। स्वयं समीक्षा भेजने पर पुस्तक की एक ही प्रति भेजें।

10-रचना प्रकाशन और रचना संशोधन का अधिकार संपादक मंडल का होगा ।संपादक मंडल का निर्णय मान्य अन्तिम एवं बाध्यकर होगा।

तुलसी साहिब

देखो दृष्ट पसार सार कुछ जग में नाहीं।

दिना चार का रंग संग नहिं जावे भाई॥

धन संपत परिवार काम एको नहिं आवे।

अरे हारे तुलसी दीपक संग।

पतंग प्रान छिन में तज जावे॥

तुलसी साहिब 'साहिब पंथ' के प्रवर्तक थे। कहा जाता है कि ये मराठा सरदार रघुनाथ राव के ज्येष्ठ पुत्र और बाजीराव द्वितीय के बड़े भाई थे। काफ़ी कम आयु में ही इन्होंने घर त्याग दिया था। तुलसी साहब ने हृदयस्थ 'कंज गुरु' या 'पद्मगुरु' को ही अपना पथ-निर्देशक माना है। 'घटरामायन', 'शब्दावली', 'रत्नासागर' और 'पद्यसागर' (अपूर्ण) इनकी प्रसिद्ध कृतियाँ हैं।

मानवी सेवा संस्था : राष्ट्र और राष्ट्र जन की सेवा में समर्पित

274/x ,शक्तिनगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

http://www.manvipatrika.co.in

(पत्रिका यहाँ से भी पढ़ सकते है)